www.tntextbooks.in

GOVERNMENT OF TAMIL NADU

Hindi Reader

हिन्दी रीडर

Class - XI

ग्यारहवीं कक्षा

Untouchability is Inhuman and a Crime

A publication under Free Textbook Programme of Government of Tamil Nadu

Department Of School Education

www.tntextbooks.in

Government of Tamil Nadu

First Edition - 2018

(Published under Uniform System of School Education Scheme in Trimester Pattern)

NOT FOR SALE

Content Creation

State Council of Educational Research and Training

© SCERT 2018

Printing & Publishing

Tamil NaduTextbook and Educational Services Corporation

www.textbooksonline.tn.nic.in

www.tntextbooks.in

முகவுரை

கல்வி, அறிவுத் தேடலுக்கான பயணம் மட்டுமல்ல; எதிர்கால வாழ்விற்கு அடித்தளம் அமைத்திடும் கனவின் தொடக்கமும்கூட. அதே போன்று, பாடநூல் என்பது மாணவர்களின் கைகளில் தவழும் ஒரு வழிகாட்டி மட்டுமல்ல; அடுத்த தலைமுறை மாணவர்களின் சிந்தனைப் போக்கை வடிவமைத்திடும் வல்லமை கொண்டது என்பதையும் உணர்ந்துள்ளோம். பெற்றோர், ஆசிரியர் மற்றும் மாணவரின் வண்ணக் கனவுகளைக் குழைத்து ஓர் ஓவியம் தீட்டியிருக்கிறோம். அதனூடே கீழ்க்கண்ட நோக்கங்களையும் அடைந்திடப் பெருமுயற்சி செய்துள்ளோம்.

- கற்றலை மனனத்தின் திசையில் இருந்து மாற்றி படைப்பின் பாதையில் பயணிக்க வைத்தல்.
- தமிழர்தம் தொன்மை, வரலாறு, பண்பாடு மற்றும் கலை, இலக்கியம் குறித்த பெருமித உணர்வை மாணவர்கள் பெறுதல்.
- தன்னம்பிக்கையுடன் அறிவியல் தொழில்நுட்பம் கைக்கொண்டு மாணவர்கள் நவீன உலகில் வெற்றிநடை பயில்வதை உறுதிசெய்தல்.
- அறிவுத்தேடலை வெறும் ஏட்டறிவாய்க் குறைத்து மதிப்பிடாமல் அறிவுச் சாளரமாய்ப் புத்தகங்கள் விரிந்து பரவி வழிகாட்டுதல்.
- தோல்வி பயம் மற்றும் மன அழுத்தத்தை உற்பத்தி செய்யும் தேர்வுகளை உருமாற்றி, கற்றலின் இனிமையை உறுதிசெய்யும் தருணமாய் அமைத்தல்

பாடநூலின் புதுமையான வடிவமைப்பு, ஆழமான பொருள் மற்றும் குழந்தைகளின் உளவியல் சார்ந்த அணுகுமுறை எனப் புதுமைகள் பல தாங்கி உங்களுடைய கரங்களில் இப்புதிய பாடநூல் தவழும்பொழுது, பெருமிதம் ததும்ப ஒரு புதிய உலகத்துக்குள் நீங்கள் நுழைவீர்கள் என்று உறுதியாக நம்புகிறோம்.

www.tntextbooks.in

प्रस्तावना

नई सोच, नई आशाओं के साथ पुस्तक वर्ग १, वर्ग ६, वर्ग ९ और वर्ग ११ का सृजन किया गया है।

आगे के प्रतिस्पर्धा एवं संघर्ष के वातावरण में बच्चों का सम्यक शारीरिक एवं मानसिक विकास बहुत आवश्यक है ताकि वे भविष्य में आनेवाली चुनौतियों का मुकाबला आसानी से कर सकें। उनके लिए ज्ञान विज्ञान की बातें उतनी ही आवश्यक है जितनी साहित्य और कला संबंधी जानकारी देश विदेश में हो रही घटनाओं से परिचित होना अगर आवश्यक है तो जीवन जीने की व्यावहारिक कला में निपुण होना भी उतना ही आवश्यक है। इन बातों को ध्यान में रखकर ही इस श्रृंखला का सृजन किया गया है। छात्र छात्राओं का सर्वांगीण करना है।

श्रृंखला तैयार करते समय निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखा गया है।

- पाठों की प्रस्तुति के लिए विधा , कौतूहल और भाषा की सरलता आवश्यक है, यही समझते हुए ऐसे पाठों का चयन किया गया है जो बच्चे की जिज्ञासाओं एवं रूचियों को बढावा दे सके। साहित्य की विभिन्न विधाओं से अवगत कराने हेतु कविताएँ, कहानियाँ, लेख, यात्रा वृतांत, हास्य कथा, एकांकी, साक्षात्कार, आत्मकथा, डायरी आदि को सम्मिलित किया गया है।
- पर्यावरण संरक्षण आज के युग की सबसे बडी माँ है। बच्चों को प्राथमिक कक्षाओं से ही पर्यावरण की समस्याओं एवं उसके संरक्षण के प्रति जागरूकता लाने के लिए पर्यावरण संबंधी कहानियों एवं कविताओं के साथ साथ समाचार पत्रों में छपे लेख, पोस्टर आदि को भी सम्मिलित किया गया है।
- बच्चों को पुस्तक के केंद्र में रखने के कारण ऐसे पाठों को ही चुना गया ताकि खेल खेल में, मनोरंजन करते हुए अपनी बात बच्चों तक पहुँचा सकें। कक्षा का वातावरण बोझिल न हो, इसलिए रूचिकर पाठों के साथ साथ चुटकुले, शब्द पहेली, चित्रकथाएँ आदि भी दिए गए है।
- समालोचनात्मक सोच, समस्या समाधान, प्रभावशाली संप्रेषण तथा रचनात्मक प्रवृत्ति जैसे कौशलों का विकास करने वाले कार्यकलापों को विशेष रूप से सम्मिलित किया गया है।
- भाषा ज्ञान के अंतर्गत व्याकरण को सम्मिलित कर लिया गया है ताकि वह अलग अलग न होकर उसके साथ जुडा रहे।
- मौखिक वार्तालाप, लिखित कार्य, समूह कार्य, संवाद प्रदर्शन आदि को ध्यान में रखते हुए अभ्यासों का निर्माण किया गया है। सतत एवं व्यापक मूल्यांकन करते समय इस विविधता को ध्यान में रखा जाए। मूल्यांकन करते समय प्रश्न कल्पनाशीलता को उभारें, विषयवस्तु को विस्तार प्रदान करने वाले हों, पाठ्यपुस्तक की परिधि से बाहर बृहतर परिधि को समेटने वाले हों, इन सभी विंदुओं को ध्यान में रखकर ही अभ्यास में सभी प्रकार के प्रश्नों का समावेश किया गया है।

सीखने के वातावरण को आनंदमयी बनाए रखना अध्यापकों की बहुत बडी जिम्मेदारी है। कक्षा में विद्यार्थियों के संप्रषण को महत्व दें। बच्चे अपनी बात बोलते समय न हिचकें। उन्हें बोलते अथवा लिखाते समय जो भी सहायता चाहिए, प्रदान करे ।

बच्चों के मनोविज्ञान, उनके मानसिक क्षितिज को समझते हुए, उनके जगत से तारतम्य बनाते हुए मेरी ओर से प्रयास है।

www.tntextbooks.in

देशीयगीतम्

जन गण मन अधिनायक जय हे
भारत भाग्य विधाता
पंजाब सिन्धु गुजरात मराठा
द्राविड उत्कल बङ्गा
विन्ध्य हिमाचल यमुना गङ्गा
उच्छल जलधि तरङ्गा
तव शुभ नामे जागे
तव शुभ आशिष मागे
गाहे तव जय गाथा
जन गण मङ्गल दायक जय हे
भारत भाग्य विधाता
जय हे जय हे जय हे
जय जय जय जय हे !

महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरः

अस्पृश्यत्वम् अपचारः
अस्पृश्यत्वम् अपराधः
अस्पृश्यत्वम् अमानवधर्मः

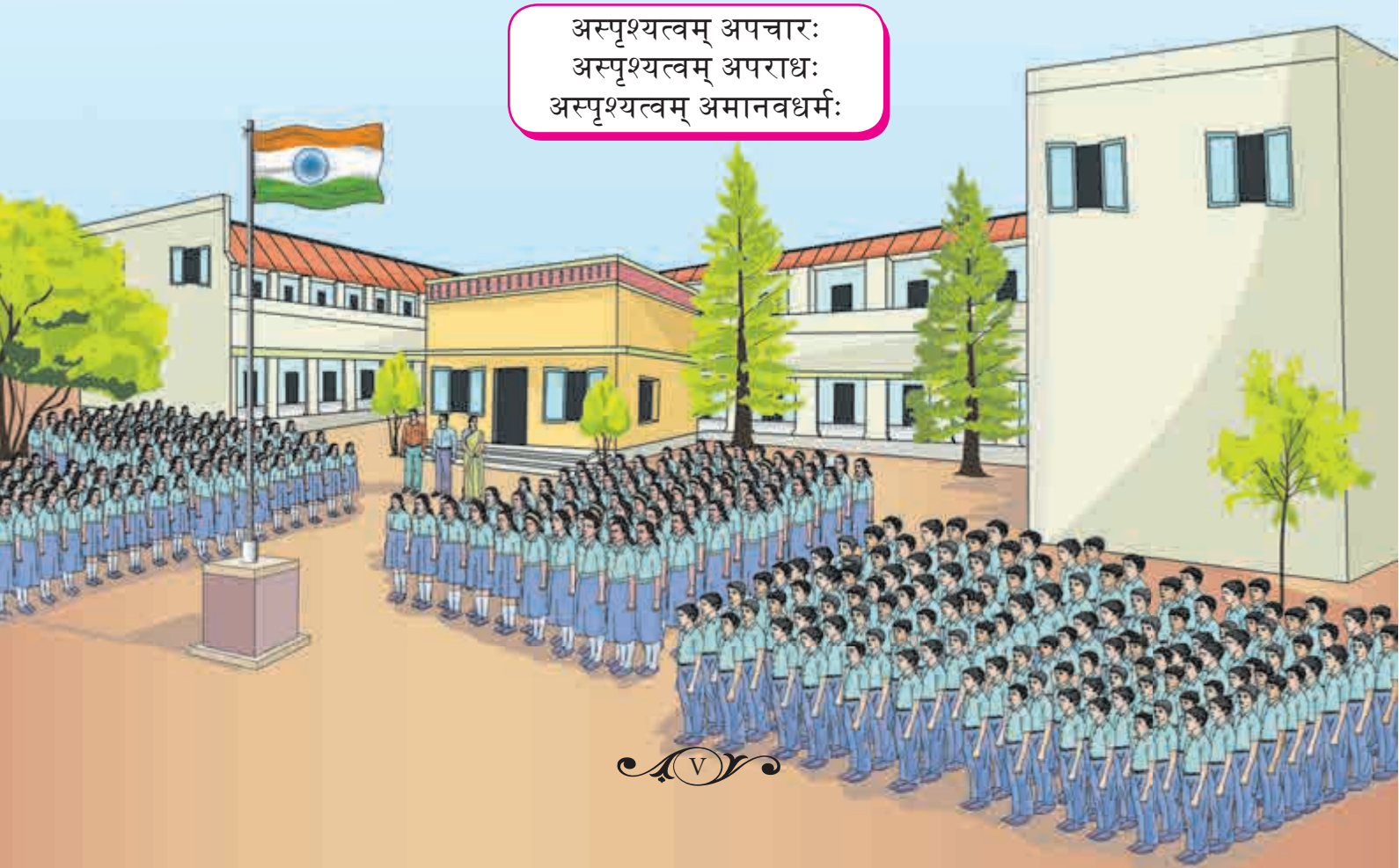

தமிழ்த்தாய் வாழ்த்து

நீராருங் கடலுடுத்த நிலமடந்தைக் கெழிலொழுகும்
சீராரும் வதனமெனத் திகழ்பரதக் கண்டமிதில்
தெக்கணமும் அதிற்சிறந்த திராவிடநல் திருநாடும்
தக்கசிறு பிறைநுதலும் தரித்தநறுந் திலகமுமே!
அத்திலக வாசனைபோல் அனைத்துலகும் இன்பமுற
எத்திசையும் புகழ்மணக்க இருந்தபெருந் தமிழணங்கே!
தமிழணங்கே!
உன் சீரிளமைத் திறம்வியந்து செயல்மறந்து வாழ்த்துதுமே!
வாழ்த்துதுமே!
வாழ்த்துதுமே!

– 'மனோன்மணியம்' பெ. சுந்தரனார்.

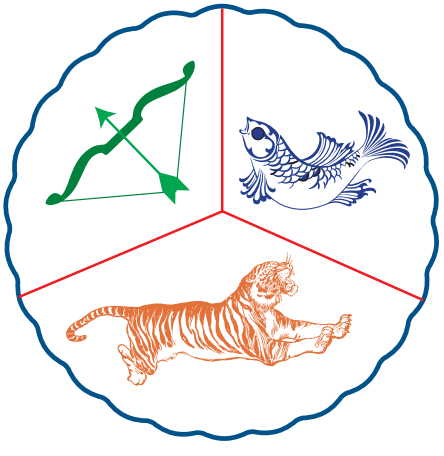

தமிழ்த்தாய் வாழ்த்து – பொருள்

ஒலி எழுப்பும் நீர் நிறைந்த கடலெனும் ஆடையுடுத்திய நிலமெனும் பெண்ணுக்கு, அழகு மிளிரும் சிறப்பு நிறைந்த முகமாகத் திகழ்கிறது பரதக்கண்டம். அக்கண்டத்தில், தென்னாடும் அதில் சிறந்த திராவிடர்களின் நல்ல திருநாடும், பொருத்தமான பிறை போன்ற நெற்றியாகவும், அதிலிட்ட மணம் வீசும் திலகமாகவும் இருக்கின்றன.

அந்தத் திலகத்தில் இருந்து வரும் வாசனைபோல, அனைத்துலகமும் இன்பம் பெறும் வகையில் எல்லாத் திசையிலும் புகழ் மணக்கும்படி (புகழ் பெற்று) இருக்கின்ற பெருமைமிக்க தமிழ்ப் பெண்ணே! தமிழ்ப் பெண்ணே! என்றும் இளமையாக இருக்கின்ற உன் சிறப்பான திறமையை வியந்து உன் வயப்பட்டு எங்கள் செயல்களை மறந்து உன்னை வாழ்த்துவோமே! வாழ்த்துவோமே! வாழ்த்துவோமே!

www.tntextbooks.in

तमिल माता की वंदना

(तमिलताय वाळ्तु)

नीरारूम कडलुडुत्त निलमडन्दै केळिलोळुगुम
सीरारूम वदनमेन तिगळ भारत खंडमिदिल,
तेक्कण।मुम अदिर्चिरन्द द्राविडनल् तिरूनाडुम
तकिकचिरू पिरैनुदलुम तरितनरून् तिलकमुमे
अत्तिलक वासनैपोल अनैत्तुलगुम इन्बमुर
एत्तिशैयुम पुगळ मण।क्क इरून्द पेरूंद्तमिलअणंगे!
तमिलअणंगे!
उन सीर इलमै तिरम वियन्दु
सेयल मरन्दु वाळ्त्तुदुमे!
वाळ्त्तुदुमे!
वाळ्त्तुदुमे!

'मनोनमणि।यम' पे. सुन्दरम पिल्लै

राष्ट्रिय प्रतिज्ञा

भारत मेरा देश है।

सब भारतवासी मेरे भाई-बहन है।

मैं अपने देश से प्रेम करता/करती हूँ।

इसकी समृद्ध एवं विविध संस्कृति पर मुझे गर्व है।

मैं सदा इसका सुयोग्य अधिकारी बनने का प्रयत्न करता/करती रहूँगा/रहूँगी।

मैं अपने माता-पिता, शिक्षको एवं गुरुजनो का सम्मान करूँगा/करूँगी और प्रत्येक के साथ विनीत रहूँगा/रहूँगी।

मैं अपने देश और देशवासियों के प्रति सत्यनिष्ठा की प्रतिज्ञा करता/करती हूँ।

इनके कल्याण एवं समृद्धि में ही मेरा सुख निहित है।

www.tntextbooks.in

विषय सूची

पद्य

		पृष्ट
1.	कबीरदास	01
2.	सूरदास	04
3.	स्वदेश प्रेम	09
4.	झाँसी की रानी	13
5.	नाचेंगे हम	17
6.	पता नहीं	21
7.	हिमालय	25
8.	समदर्शी भगवान	29

गद्य

1.	स्वतंत्रता का मूल	31
2.	मित्रता	35
3.	वल्लभ भाई पटेल	42
4.	विज्ञापन की कला	49
5.	घुमक्कड़ जिज्ञासा	56
6.	वह चीनी भाई	67

कहानी

1.	उसने कहा था	77
2.	पूस की रात	91
3.	दोपहर का भोजन	99
4.	पोस्टमास्टर	108

व्याकरण

1.	पदपरिचय के कुछ नमूने	116
2.	निबंध	118
3.	पत्र लेखन	118
4.	विषय ग्रहण गद्यांश	120
5.	पदों के नाम	122
6.	समास	126
7.	वाक्य शुद्धि	131
8.	अलंकार	133
9.	छंद	136

www.tntextbooks.in

www.tntextbooks.in

पद्य 1 कबीरदास

कवि परिचयः-

जन्म : सन् 1398 मृत्यु : सन् 1518

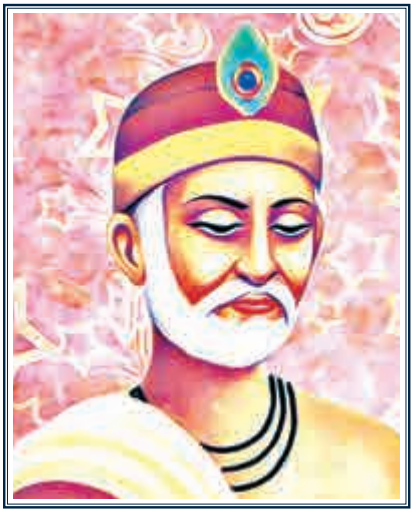

कबीरदास के धर्मपिता का नाम नीरू तथा माता का नाम नीमा था। जाति के वे जुलाहे थे। अपने इस व्यवसाय को वे इतनी अधिक प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते थे कि मृत्युपर्यंत इसीके द्वारा अपनी आजीविका चलाते रहे। जाति-पाँति की दीवार को तोड़कर सबको अपनी भक्ति-परंपरा में सम्मिलित करनेवाले स्वामी रामानंद के वे शिष्य थे।

उनकी समस्त कृतियाँ तीन भागों में विभक्त हैं– साखी, पदावली (सबद) और रमैनी। 'साखी' में दोहे और कहीं-कहीं एकाध सोरठे भी हैं, जिनमें अनेक उपदेशप्रद बातें कही गयी हैं। 'पदावली' में बाह्याडंबरों के प्रति तीव्र आक्रोश व्यक्त किया गया है तथा ब्रह्म, जीव और माया के रहस्यात्मक वर्णन के साथ भगवत्प्रेम की पराकाष्ठा दिखायी गयी है। 'रमैनी' में हम उनके सिद्धांतों का विशिष्ट रूप पाते हैं। इसमें साखी और पदावली में प्रयुक्त विषयों के सिवाय उपदेश, गुरु और राम-संबंधी भजन तथा योग, सत्संग और कर्तानिर्णय तथा कर्ता के स्वरूप-संबंधी अनेक पद हैं।

उनके काव्य में हृदयपक्ष की प्रधानता है। काव्य-कला की दृष्टि से देखने पर उनके पद्य काव्य की कसौटी पर खरे नहीं उतरते। यहाँ तक कि अनेक दोहे पिंगल के नियमों के प्रतिकूल हैं, पदों का भी यही हाल है। पर भाव, प्रेम और भक्ति की दृष्टि से उनकी कृतियाँ अनुपम हैं। हिन्दी साहित्य में व्यंग्यात्मक शैली के सर्वप्रथम आविष्कर्ता वे ही हैं। उनकी रचनाओं में 'बीजक' मुख्य है।

सीलवन्त सबतें बड़ा, सर्व रतन की खानि।
तीन लोक की संपदा, रही शील में आनि।। 1।।

शब्दार्थः- साखी - कबीरदास आदि संत कवियों के ज्ञान वैराग्य विषयक दोहे आदि; सीलवन्त - शीलवान, सुशील, तें-से; खानि - खान, भंडार, खजाना; संपदा - संपत्ति, दौलत; सील - शील, सदाचार, सद्वृत्ति; आनि - आकर।

शीलवान अर्थात् सच्चरित्र पुरुष ही समस्त मानवों में श्रेष्ठ है। वही सब गुण-रूपी रत्नों का भंडार है; क्योंकि शील, सदाचार या सच्चरित्र में ही तीनों लोकों की सारी संपत्ति आकार बसी हुई है। अब तक संसार में जितने महापुरुष हुए, वे सब शीलवान या सच्चरित्र रहे हैं। शील के अभाव में मनुष्य नहीं कहलाता। 'चरित्र गया तो सब कुछ गया' कथन का भाव भी यही है।

छिमा बड़न को चाहिये, छोटन को उतपात।
कहा विष्णु को घटि गयो, ली भृगु मारी लात।। 2 ।।

शब्दार्थः- छिमा - क्षमा; बड़न को - बड़ों को; छोटन को - छोटों का; उतपात - उत्पात, ऊगम; कहा - मनुष्य कहा ऐसा हुआ कि; घटि गयो - कम हो गया।

क्षमा एक महान गुण है, जो महापुरुषों में रहता है, छोटे अर्थात् समान्य अथवा निम्न प्रवृत्तिवाले लोग उनकी निंदा आदि के द्वारा उनको कष्ट पहुँचाते हैं। लेकिन महापुरुष उनके प्रति क्रोध नहीं करते, बल्कि क्षमा कर देते हैं। इस प्रकार क्षमा कर देने से उस महापुरुष की महत्ता और भी बढ़ जाती है। इस बात के समर्थन में कवि कबीरदास भगवान विष्णु और महर्षि भृगु का दृष्टांत देते हैं। जब महर्षि भृगु ने भगवान विष्णु के वक्ष पर लात मारी, तो भगवान ने महर्षि के उस अपराध को क्षमा कर दिया, जिससे विष्णु की महत्ता त्रिमूर्तियों में बढ़ गयी। वे श्रेष्ठ माने गये।

चाह गयी चिंता मिटी, मनुवाँ बेपरवाह।
जिनको कछू न चाहिए, सोई साहंसाह।। 3 ।।

शब्दार्थः- चाह - इच्छा, तृष्णा; मनुवाँ - मन; बेपरवाह - बेफ़िक्र; कछू - कुछ भी; सोई - वही; साहंसाह - चक्रवर्ती, सम्राट, शहनशाह।

मनुष्य को इच्छा ही संसार के अंदर बाँधे रखती है। अगर उसकी इच्छा या तृष्णा मिट जाए, अर्थात् वह तृष्णा रहित हो जाए तो उसे किसी बात की चिंता या फ़िक्र नहीं होगी। तब उसका मन बेफ़िक्र हो जाएगा, स्वच्छंद हो जाएगा, वह बंधन मुक्त हो जाएगा, क्योंकि जिसे किसी बात की आकांक्षा नहीं रहती, वही सर्वोपरि सम्राट है।

जो जल बाढ़ै नाव में, घर में बाढ़ै दाम।
दोऊ हाथ उलीचिये, यह सज्जन कौ काम ।। 4 ।।

शब्दार्थः- बाढ़ै - वृद्धि हो; दाम - द्रव्य, धन; उलीचना - पानी बाहर फेंकना, सत्पात्र को दान देना।

नाव में बैठकर यात्रा करते समय अगर नाव में पानी आ जाए, तो तुरंत दोनों हाथों से बाहर फेंक देना चाहिए, अन्यथा नाव के साथ यात्री भी पानी में डूबकर मर जाएँगे । उसी प्रकार घर में अगर द्रव्य अर्थात् धन अधिक संचित हो जाए, तो उसको सत्पात्र लोगों में वितरित कर देना चाहिए। यही सज्जन का कार्य है, अन्यथा वह लोभी कहलाएगा। लोभी का जीवन इह और पर दोनों दृष्टियों से व्यर्थ हो जाता है। यही उसका डूब जाना है। लोभ को पास फटकने न देना और त्याग को अपनाना - यही सज्जन का एक महान गुण है।

माँगन गये सो मरि रहे, मरे तो माँगन जाहिं
तिनते पहले वे मरे, होत करत जो नाहिं।।5 ।।

शब्दार्थः- माँगन - माँगने; सो - वह; तिनते - उनसे।

कोई व्यक्ति किसी से कुछ माँगने अर्थात् याचना करने जाता है, तो समझना चाहिए कि वह मर गया है, क्योंकि जो मर गया हो, वही माँगने जाता है। लेकिन इन माँगनेवालों से पहले उनको मृत समझना चाहिए, जो उसको कुछ देने से इनकार करते हैं।

www.tntextbooks.in

पद्य 2 सूरदास

कवि परिचय:-

जन्म : सन् 1483 (लगभग) मृत्यु : सन् 1563

सूरदास के प्रारंभिक जीवन के संबंध में कुछ विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती। वल्लभाचार्य से भेंट होने के पहले वे गऊघाट पर नवधा भक्ति में से दास्य भक्ति को अंगीकार कर विनय-संबंधी पदों की रचना किया करते थे। वल्लभाचार्य से भेंट होने पर उनके आदेश से सूरदास ने श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन करना प्रारंभ किया। वे अंधे थे और उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन शास्त्र-श्रवण, चिंतन, भगवान का कीर्तन, कीर्तन के अनुरूप विविध विषयक पदों की रचना और संतों की मर्यादा के अनुकूल परिभ्रमण करने में व्यतीत किया। भक्ति के निरूपण में उन्होंने वासुदेव-परंपरा में प्रचलित पौराणिक घटनाओं का कहीं-कहीं आश्रय लिया है।

उनकी रचनाओं में 'सूरसागर' प्रसिद्ध है। सूरसागर में श्रीकृष्ण के आसपास की सारी सृष्टि भी उन्हें अपना सखा मानकर उनकी प्रत्येक लीला में भाग लेती है। कवि ने राधा-कृष्ण के प्रेम-प्रसंगों का जो वर्णन किया है, उसमें मानव-हृदय सुख-दुख के भावों से स्पंदित होता रहता है। पाठक श्रीकृष्ण के हँसने के साथ हँसता है, उनके रोने के साथ रोता है और उनकी श्रृंगारिक चेष्टाओं में रागात्मिकता वृत्ति का अनुभव करता है।

सूर-द्वारा वर्णित श्रीकृष्ण अपने मानवीय रूप को छोड़ अतिमानव और कहीं-कहीं अलौकिक रूप को धारण करते हैं।

छाँडि मन हरि विमुखन को संग
जाके संग कुबुधि उपजति है, परत भजन में भंग।
कागहि कहा कपूर चुगाये, स्वान न्हवाये गंग।
खर को कहा अरगजा लेपन, मरकट भूषण अंग।
पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतौ करत निषंग।
'सूरदास' खल कारी कामरि, चढ़त न दूजौ रंग।।

शब्दार्थः- छाँडि - छोड़ो; हरि विमुखन को संग - ईश्वर-विरोधी का साथ; जाके - जिसके; कुबुधि - दुर्बुद्धि; उपजति है - पैदा होती है; परत भजन में भंग - भगवद् भजन में विघ्न पड़ता है; चुगाना - खिलाना; स्वान - कुत्ता; न्हवाना - स्नान कराना; अरगजा - चंदा, केसर आदि मिलाकर किया हुआ सुगंधित लेप; मरकट - बंदर; पाहन - पत्थर; नहिं बेधत - नहीं तोड़ता है; रीतौ - रिक्त; निषंग - तरकस; खल - दुष्ट; कामरि - कंबल; दूजौ - दूसरा।

सूरदास अपने मन में दुर्जन - संगति छोड़ देने को कहते हैं। जो भगवान से विमुख है अर्थात् जो भगवान को नहीं मानता, वही दुर्जन - खल है।

हे मन! जो भगवान से विमुख रहता है, उसकी संगति छोड़ देना। जिसके साथ रहने से दुर्बुद्धि पैदा होती है और भगवद् भजन में विघ्न पड़ता है, उसका संग छोड़ देना चाहिए। कह सकते हैं कि अपनी संगति से उसमें परिवर्तन लाऊँगा। उसको हरिभक्त बनाऊँगा। लेकिन यह संभव नहीं है। क्या कौए को कर्पूर खिलाने से वह सफ़ेद बनेगा? कुत्ते को गंगा में नहाने से क्या वह पवित्र बनेगा? गधे के बदन पर चंदन आदि सुगंध-द्रव्य लगाने से क्या फ़ायदा होगा? बंदर के अवयवों में आभूषण पहनाने से क्या वह सुंदर दिखेगा? ये सभी प्रयत्न जैसे व्यर्थ हो जाते हैं, वैसे ही दुष्ट को सज्जन बनाने का तेरा प्रयत्न भी व्यर्थ हो जाएगा। अगर कोई धनुर्धारी पत्थर पर तीर छोड़ता है, तो वह तीर पत्थर को तोड़ता नहीं, उल्टे अपनी इस मूर्खता के कारण वह धनुर्धारी अपने तरकस को ही खाली कर देता है। हे मन! याद रखो, दुर्जन काले कंबल के बराबर है। उसपर दूसरा रंग नहीं चढ़ता । अर्थात् दुर्जन कभी भी सज्जन नहीं बन सकेगा।

प्रभु मोरे अवगुनचित न धरो।
समदरसी है नाम तिहारो चाहे तो पार करो।
इक नदिया इक नार कहावत मैलो नीर भरो।
जब दोऊ मिलि एक बरन भये सुरसरि नाम परो।
इक लोहा पूजा में राखत इक घर बधिक परो।
पारस गुन अवगुन न चितवै कंचन करत खरो।
यह माया भ्रमजाल कहावै 'सूरदास' सगरो।
अबकी बार मोहिं पार उतारो नहिं पन जात टरो।।

शब्दार्थः- समरदसी - समदर्शी, सब पर समान दृष्टि रखनेवाला; तिहारो - तेरो; नार - नाला; मैलो - मैला; एक बरन - एक रंगवाले, एकाकार; बधिक - वध करनेवाला, कसाई; पारस - एक पत्थर जिसके स्पर्श से लोहा सोना हो जाता है, स्पर्शमणि; चितवै - देखता है; खरो - खालिस, स्वच्छ; सगरो - सारा, सब; पन जात टरो - प्रण टल जाता है।

भगवान शरणागत रक्षक है। भगवान की प्रतिज्ञा है कि जो कोई अनन्य भाव से मेरी शरण में आएँगे, उसके गुण और अवगुणों पर ध्यान न देकर मैं उनको अपना लूँगा। उनका उद्धार करूँगा। भगवान भक्त के अनन्य भाव को ही देखता है, अतः वे समदर्शी हैं। उनकी इस प्रतिज्ञा का स्मरण दिलाकर सूरदास भगवान से कहते हैं, मेरे भी अवगुणों पर ध्यान न देकर मेरा उद्धार करो, अन्यथा तुम्हारी प्रतिज्ञा झूठी हो जाएगी।

हे प्रभु! मेरे अवगुणों पर ध्यान न दो। तुम्हारा नाम समदर्शी है। अपने इस नाम को सार्थक बनाना चाहते हो तो मेरा उद्धार करो। देखो, एक प्रवाह है, जिसे नदी कहते हैं। दूसरा है नाला, जिसमें गंदा पानी भरा हुआ है। यह नदी है, वह नाला जब एक में मिल जाते हैं, गंगा नदी में मिलकर एकाकार धारण करते हैं, तब उसका 'सुर सरिता' (देवलोक की पवित्र नदी) नाम पड़ता है। इसी प्रकार दो लोहे की वस्तुएँ हैं, जिनमें एक पूजा गृह में रखी गयी है और दूसरी कसाईखाने में, लेकिन पारस इन दोनों में फ़रक नहीं करता। छूते ही दोनों को खालिस सोना बना देता है। छोड़ दीजिए इन सब बातों को, क्योंकि तर्क-वितर्क की ये बातें माया या भ्रमजाल कही जाती है। मेरी विनती यही है कि अब की बार मेरा उद्धार करो, अन्यथा तुम्हारी प्रतीज्ञा असत्य हो जाएगी।

यहाँ निदर्शना अलंकार है।

मैया मोहि दाऊ बहुत खिजायो।

मोसों कहत मोल को लीनो तू जसुमति कब जायो।

कहा कहौं इस रिस के मारे, खेलन-हौं नहिं जातु।

पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तुम्हारो तातु।

गोरे नन्द जसोदा गोरी, तुम कत श्याम सरीर।

चुटकी दै-दै हँसत बाल सब, सिखै देत बलबीर।

तू मोही को मारन सीखी, दाउहिं कबहु न खीजै।

मोहन को मुख रिससमेत लखि, जसुमति सुनि-सुनि रीझै।

सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत।

'सूरस्याम' मो गोधन की सौं, हौं माता तू पूत।।

शब्दार्थः- दाऊ - बड़ा भाई (बलराम), खिजायो - चिढ़ाया; मोसो - मुझसे; मोल को लीनो - मोल लिया हुआ; जायो - जन्म दिया; रिस - रोष, गुस्सा; हौं - मैं; तातु - पिता; कत - क्यों, कैसे; चुटकी दै - दै - चुटकी बजा बजाकर; सिखै देत - सिखा देते हैं; दाउहिं कबहु न खीजै - बड़े भैया पर कभी क्रोधित नहीं होती; चबाई - चुगलखोर; धूत - धर्त; गोधन की सौं - गायों की क्रसम।

यह कृष्ण की बाललीला से संबंधित पद है। शिशु कृष्ण अब बालक बन गया। वह दूसरे बालकों के साथ खेलों में भाग लेने लगा। खेलते-खेलते न जाने बालकों में स्पर्धा, ईर्ष्या, असूया आदि कितने भाव पैदा होते है। बालक कृष्ण के साथ भी यही बात हो गयी। दूसरे बालकों के साथ उसका झगड़ा हो गया। झगड़े में उसका बड़ा भाई बलराम भी उन लड़कों के साथ हो गया। सब मिलकर कृष्ण को खिजाने लगे। कृष्ण इसकी शिकायत माँ यशोदा से करता है।

माँ! मुझे भैया ने बहुत खिजाया है। वह मुझसे कहता है कि तू मोल लिया हुआ लड़का है; यशोदा ने तुझे कब जन्म दिया? क्या कहूँ? इस गुस्से के कारण मैं खेलने नहीं जाता। वह

बार-बार कहता है, तेरी माता कौन है? तेरा पिता कौन है? नंद और यशोदा दोनों गोरे हैं तब तुम क्यों श्याम-शरीर के हो? बलवीर ये बातें अन्य बालकों को सिखा देता है और वे सब चुट की बजा-बजाकर हँसते हैं। तूने तो मुझ ही को मारना सीखा है, भैया पर कभी गुस्सा नहीं करती। कृष्ण ये बातें गुस्से के साथ कहता था। मोहन कृष्ण के गुस्से से भरे मुख से इन बातों को सुनकर यशोदा का मन आनंद से भर जाता था। वह कहती है - "कृष्ण! सुनो, बलभद्र चुगलखोर है, वह जन्म सेः ही धूर्त है। मुझे गायों की कसम है; मैं ही तेरी माँ हूँ और तू मेरा पुत्र है। वात्सल्य रस का सुंदर उदाहरण है यह पद।

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिएः-

1. सूरदास क्यों ईश्वर विरोधी के संग को छोड़ने की बात कहते हैं?

2. क्या कौआ सफेद हो सकता है? इस पद के माध्यम से सूर क्या कहना चाहते हैं?

3. गधा, कुत्ता, कौआ आदि के उदाहरण के द्वारा सूरदास क्या उपदेश देना चाहते हैं?

4. पत्थर पर तीर चलाने का नतीजा क्या होता है?

5. काले कंबल पर दूसरा रंग नहीं चढ़ता? यह क्यों कहा गया है?

6. बंदर के अंगों में आभूषण पहनाने से वह सुंदर दिखेगा नहीं? सूरदास ने किसके लिए यह उदाहरण दिया है?

7. सूरदास प्रभु से अपने उद्धार करने की माँग किस तर्क पर करते हैं?

8. सूरदास अवगुणों को पवित्र मानने के लिए कौन-सा उदाहरण देते हैं?

10. भगवान की प्रतिज्ञा को सत्य प्रमाणित करने के लिए सूर ने कौन तर्क रखा?

www.tntextbooks.in

पद्य 3 स्वदेश प्रेम

पंडित रामनरेश त्रिपाठी (1889-1962) खड़ीबोली के उन विरले कवियों में अग्रणी हैं, जिन्होंने प्रांजल हिंदी में काव्य रचना कर एक नई काव्य भाषा का सूत्रपात किया। छायावाद पूर्व के महत्वपूर्ण कवि श्री रामनरेश त्रिपाठी का जन्म **1889** में कोइरीपुर, जिला जौनपुर (उ.प्र.) में हुआ। हिंदी, अंग्रेज़ी, बंगला और उर्दू में आधिकारिक ज्ञान प्राप्त कर वे समाज सुधार तथा देश प्रेम के आदर्शों के प्रति समर्पित रहे। लोक साहित्य के प्रति उनकी आसक्ति लोक सृजन का संरक्षण है, जिसे उन्होंने अपने कर्मक्षेत्र में अंगीकार किया। आलंकारिक भाषा प्रयोगों के लिए सुविख्यात श्री रामनरेश त्रिपाठी काव्यगुणों के सृजेता साहित्यकार हैं। उन्होंने कविता के अतिरिक्त नाट्य सृजन तथा आलोचना के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय कार्य किया। गाँधीवादी दृष्टि सम्पन्न श्री रामनरेश त्रिपाठी अपने प्रकृति चित्रण के अनूठे प्रयोगों के लिए चर्चित रहे।

साहित्यिक सेवा और रचनाएँ

कविता कौमुदी (आठ भाग) में उन्होंने हिंदी, उर्दू, बंगला और संस्कृत की लोकप्रिय कविताओं का संकलन किया है। इसीके एक खंड में लोकगीत संकलित हैं, जिन्हें उन्होंने गाँव-गाँव घूमकर एकत्रित किया था। लोक-साहित्य के संरक्षण की दृष्टि से हिंदी में यह उनका पहला मौलिक कार्य था। हिंदी में वे बाल-साहित्य के जनक माने जाते हैं। उन्होंने कई वर्षों तक बानर नामक बाल पत्रिका का संपादन किया, जिसमें मौलिक एवं शिक्षाप्रद कहानियाँ, प्रेरक प्रसंग आदि प्रकाशित होते थे। कविता के अलावा उन्होंने नाटक, उपन्यास, आलोचना, संस्मरण आदि अन्य विधाओं में भी रचनाएँ कीं।

त्रिपाठीजी ने अपनी रचना खड़ीबोली में की है। इनकी भाषा सजी संवरी खड़ीबोली है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है। इन प्रयोग से भाषा में व्यावधान उत्पन्न नहीं हुआ है, अपितु प्रसाद गुण का समावेश हुआ है। कविता में अलंकारों का प्रयोग भी

स्वाभाविक रूप में हुआ है। भाषा व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध एवं परिमार्जित है। भाषा मधुर तथा भावों को व्यक्त करने में सक्षम है।

त्रिपाठीजी कवि होने के साथ ही बाल साहित्यकार, आलोचक, नाटककार भी हैं। आपने प्रबन्ध एवं मुक्तक दोनों ही प्रकार की काव्य-रचना की है। आपके आख्यान मौलिक हैं। इनके काव्य में राष्ट्र-प्रेम की भावना भी कूट-कूटकर भरी है। काव्य में कर्मयोग की भावना भी विद्यमान है। गाँधीवादी आदर्शों की छाप आपके काव्य में स्पष्ट रूप से अंकित है। आपका प्रकृति चित्रण मौलिक तथा अनूठा है।

रचनाएँ -खंडकाव्य	–	स्वप्न, मिलन, पथिक।
आलोचना	–	तुलसीदास और उनका काव्य।
नाटक	–	पैसा परमेश्वर।
संपादित	–	कविता कौमुदी (आठ भाग)
बालोपयोगी	–	बालकथा – कहानी अनेक भागों में।

स्वदेश प्रेम

प्रस्तुत कविता 'स्वप्न' काव्य संग्रह से ली गई है। इसमें देश प्रेम की सीख के साथ ही देश के हितार्थ आत्म-त्याग करने का भी आह्वान है। मृत्यु को जीवन की महान यात्रा का पड़ाव स्वीकार किया गया है। कविता के पूर्व भाग में भारत की प्राचीन गौरव-गाथा का बखान है।

अतुलनीय जिनके प्रताप का

साक्षी है प्रत्यच्छ दिवाकर

घूम-घूम कर देख चुका है

जिनकी निर्मल कीर्ति निशाकर

देख चुके हैं जिनका वैभव

ये नभ के अनन्त तारागण

अगणित बार सुन चुका है नभ

जिनका विजय-घोष रण-गर्जन।।

www.tntextbooks.in

शोभित है सर्वोच्च मुकुट-से
जिनके दिव्य देश का मस्तक
गूँज रही हैं सकल दिशाएँ
जिनके जय गीतों से अब तक
जिनकी महिमा का है अविरल
साक्षी सत्य-रूप हिम-गिरि-वर
उतरा करते थे विमान-दल
जिनके विस्तृत वक्षस्थल पर।।

सागर निज छाती पर जिनके
अगणित अर्णव-पोत उठाकर
पहुँचाया करता था प्रमुदित
भू-मण्डल के सकल तटों पर
नदियाँ जिनकी यश-धारा सी
बहती हैं अब भी निशि-बासर
ढूँढो, उनके चरण-चिह्न भी
पाओगे तुम इनके तट पर।।

जब तक साथ एक भी दम हो
हो अवशिष्ट एक भी धड़कन
रखो आत्म-गौरव से ऊँची
पलकें, ऊँचा सिर, ऊँचा मन
एक बूँद भी रक्त शेष हो!
जब तक तन में हे शत्रुंजय!
दीन वचन मुख से न उचारो
मानो नहीं मृत्यु का भी भय ।।

सच्चा प्रेम वही है जिसकी
तृप्ति आत्म-बलि पर हो निर्भर
त्याग बिना निष्प्राण प्रेम है
करो प्रेम पर प्राण निछावर
देश प्रेम वह पुण्य-क्षेत्र है
अमल, असीम, त्याग से विलसित
आत्मा के विकाम से जिसमें
मनुष्यता होती है विकसित ।।

शब्दार्थ :-

प्रत्यच्छ–प्रत्यक्ष, साक्षात्; दिवाकर–सूर्य; निशाकर–चंद्र; सकल–समस्त, सभी; हिमगिरिवर--श्रेष्ठ हिमालय पर्वत; अर्णवपोत–समुद्री यान, जलपोत, पानी का जहाज़; निशि-वासर–रात-दिन; तरंगिणी–नदी; वारिधि–समुद्र; उडुगण–तारे; मेदिनी–पृथ्वी; विषुवत्-रेखा–भूमध्य रेखा; ध्रुव-वासी–पृथ्वी के ध्रुव पर स्थित देश में रहनेवाला; विभव–संपत्ति, वैभव; आगार–घर, खान; धरा शिरामणि–पृथ्वी के शीश का आभूषण; रज–धूल; शत्रुंजय–दुश्मन को जीतनेवाला।

अभ्यास

I. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:-

1. स्वदेश प्रेम की कविता किस काव्य संग्रह से ली गई है? इसके कवि कौन है?
2. भारत के अतुलनीय प्रताप, कीर्ति, और वैभव के साक्षी कौन-कौन हैं?
3. हमारे देश का मस्तक कैसे शोभित है?
4. विमुक्त देशवासी के उपमा के द्वारा कवि युवकों में देश प्रेम की भावना कैसे जगाता है?
5. भारत भूमि क्यों स्वर्ग तुल्य है?

II. निम्नलिखित पद्यांश का सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

जब तक साथ एक भी दम हो
हो अवशिष्ट एक भी धड़कन
रखो आत्म-गौरव से ऊँची
पलकें, ऊँचा सिर, ऊँचा मन
एक बूँद भी रक्त शेष हो!

पद्य 4 झाँसी की रानी

सुभद्राकुमारी चौहान (1905-1948) का जन्म प्रयाग जिले के निहालपुर गाँव में हुआ था। इन्होंने प्रयाग में ही शिक्षा ग्रहण की। सन् 1921 में असहयोग-आन्दोलन के प्रभाव से इन्होंने शिक्षा अधूरी ही छोड़ दी और ये राजनीति में भाग लेने लगीं। स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय भाग लेने के कारण इन्हें कई बार जेल जाना पड़ा। काव्य-रचना की ओर इनकी प्रवृत्ति विद्यार्थी-काल से ही थी। अपनी ओजस्वी कविताओं के कारण सुभद्राकुमारी चौहान को भारत भर में लोकप्रियता प्राप्त हुई।

इनकी कविताएँ 'त्रिधारा' और 'मुकुल' में संकलित हैं। भाव की दृष्टि से इनकी कविताओं को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम वर्ग में राष्ट्र-प्रेम की कविताएँ रखी जा सकती हैं जिनमें इन्होंने असहयोग या स्वतंत्रता की लड़ाई में भाग लेनेवाले वीरों को अपना विषय बनाया है। इनकी 'झाँसी की रानी' कविता जनता में बहुत लोकप्रिय हुई। दूसरे वर्ग के अन्तर्गत वे कविताएँ रखी जा सकती हैं जिनकी प्रेरणा इन्हें अपने पारिवारिक जीवन से प्राप्त हुई। ऐसी कविताओं में कुछ तो पति-प्रेम की भावना से अनुप्राणित हैं और कुछ में सन्तान के प्रति वात्सल्य की सहज एवं मार्मिक अभिव्यक्ति मिलती है। इनकी भाषा शैली भावों के अनरूप सरलता और गति लिये हुए है।

झाँसी की रानी

'झाँसी की रानी' कवयित्री सुभद्रकुमारी चौहान की अत्यंत लोकप्रिय और प्रेरणादायी कविता है। इसमें कवयित्री ने 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम की महान बलिदानी झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की जीवनगाथा को रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। ओज से परिपूर्ण इस वीर रस की कविता में सरल, सहज, प्रवाहपूर्ण लोकशैली के दर्शन होते हैं। कविता का आरंभ 1857 के भारतव्यापी जागरण के उल्लेख से होता है। अंग्रेज़ों को भारत से खदेड़ने के इस अभियान में 'झाँसी की रानी' के पौरुष का उल्लेख करने के बाद कवयित्री ने उनके बचपन और विवाह का उल्लेख किया है। ओज के साथ करुणा के चित्रण के कारण यह कविता बेजोड़ है। झाँसी के राजा गंगाधर राव निःसंतान ही स्वर्गवासी हो गये और रानी लक्ष्मीबाई को कमजोर समझकर

ईस्ट इंडिया कंपनी ने झाँसी को छल और बल से हड़पने की योजना को साकार रूप दे दिया। परंतु रानी कमजोर नहीं थीं। उन्होंने अत्यंत वीरतापूर्ण युद्ध कौशल का प्रदर्शन किया। जिस समय भारत के अनेक राज्यों में हमारे अनेक बलिदानी योद्धा अंग्रेजों के दाँत खट्टे कर रखे थे, उसी समय झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने भी उन्हें नाकों चने चबवा दिए। अनेक मोर्चों पर विजय प्राप्त करती हुई रानी का प्रशिक्षित घोड़ा भी इस संग्राम में स्वर्ग सिधार गया। नए घोड़े के एक स्थान पर अड़ जाने के कारण अंततः अकेली रानी अनेक शत्रुओं के बीच घिर गई और आखिरी साँस तक लड़ती हुई रानी ने वीर गति प्राप्त की। कवयित्री ने झाँसी की रानी को तेज का अवतार और साक्षात् स्वतंत्रता का नारी रूप कहा है। यह कविता स्वतंत्रता सेनानियों के लिए प्रेरणा का स्रोत थी। आज भी इसका उतना ही महत्व है। राष्ट्रीय चेतना इस कविता में कूट-कूट कर भरी है।ट

सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,

बूढ़े भारत में भी आई फिर से नई जवानी थी,

गुमी हुई आज़ादी की कीमत सबने पहचानी थी,

दूर फ़िरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,

चमक उठी सन् सत्तावन में

वह तलवार पुरानी थी।

बुंदेले हरबोलों के मुँह

हमने सुनी कहानी थी।

खूब लड़ी मर्दानी वह तो

झाँसी वाली रानी थी।।

वीर शिवाजी की गाथाएँ

उसको याद ज़बानी थीं।

बुंदेले हरबोलों के मुँह

हमने सुनी कहानी थी।

खूब लड़ी मर्दानी वह तो

झाँसी वाली रानी थी।।

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वह स्वयं वीरता की अवतार,

देख मराठे पुलकित होते उसकी तलवारों के वार,

नकली युद्ध, व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,

सैन्य घेरना, दुर्ग तोड़ना, ये थे उसके प्रिय खिलवार,

उदित हुआ सौभाग्य, मुदित महलों में उजयाली छाई,

किंतु कालगति चुपके-चुपके काली घटा घेर लाई,

तीर चलानेवाले कर में उसे चूड़ियाँ कब भाईं,

रानी विधवा हुई हाय! विधि को भी नहीं दया आई, अश्रुपूर्ण रानी ने देखा

झाँसी हुई बिरानी थी।

बुंदेले हरबोलों के मुँह

हमने सुनी कहानी थी।

खूब लड़ी मर्दानी वह तो

झाँसी वाली रानी थी।।

अनुनय विनय नहीं सुनता है, विकट फ़िरंगी की माया,

व्यापारी बन दया चाहता था जब यह भारत आया,

डलहौज़ी ने पैर पसारे अब तो पलट गई काया,

राजाओं नव्वाबों को भी उसने पैरों ठुकराया,

रानी दासी बनी, बनी यह
दासी अब महरानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी।।

शब्दार्थ :-

भृकुटी–भौंहें; गुमी–खोई; फ़िरंगी–विदेशी, अंग्रेज, भारत में यह शब्द अंग्रेज़ों के लिए प्रयुक्त; बुंदेले हरबोलों–बुंदेलखंड की एक जाति विशेष, जो राजा-महाराजाओं के यश गाती थी; छबीली–सुंदर; गाथा–कहानी; व्यूह–समूह, युद्ध में सुदृढ़ रक्षा-पंक्ति बनाने के उद्देश्य से सैनिकों का किसी विशेष क्रम में खड़ा होना; सुभट–रणकुशल, योद्धा; विरुदावली–विस्तृत कीर्ति गाथा, बड़ाई; मुदित–मोदयुक्त, आनंदित; विकट–भयंकर, दुर्गम, कठिन; घात–छल, चाल।

अभ्यास

I. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए:-

1. झाँसी की रानी कविता की कवयित्री का नाम क्या है?
2. बचपन में लक्ष्मीबाई किस प्रकार का खेल खेलती थी?
3. दया चाहनेवाले अंग्रेज निर्दयी कब बने?
4. अंग्रेज़ भारत में किस रूप में आये थे?
5. ब्रिटिश सेना नायक डल्हौसी की नीति क्या थी?
6. किन मुहावरों से मालूम होता है कि अंग्रेज़ी की नीति वामनावतार जैसी थी?

II. निम्नलिखित पद्यांश का सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

अनुनय विनय नहीं सुनता है, विकट फ़िरंगी की माया,
व्यापारी बन दया चाहता था जब यह भारत आया,
डलहौज़ी ने पैर पसारे अब तो पलट गई काया,
राजाओं नव्वाबों को भी उसने पैरों ठुकराया,

www.tntextbooks.in

पद्य 5 नाचेंगे हम

तमिल कवि सुब्रह्मण्य भारती **(1882-1921 ई.)** राष्ट्रीय चेतना के अमर गायक हैं। कविता से प्रेम उनकी सहज प्रकृति थी। वे बचपन से ही दिवास्वप्नों में खो जानेवाले बालक के रूप में जाने जाते थे। दिवास्वप्न देखनेवाले भारती का सबसे बड़ा स्वप्न राष्ट्र की मुक्ति से जुड़ा था। वे राष्ट्रीय अभ्युदय के कवि के रूप में जाने गये। 'कंबन' के बाद तमिल में भारती ही ऐसे कवि हुए, जिनका तमिल साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा।

भारती की सांस्कृतिक चेतना बनारस के वातावरण में पुष्ट हुई थी। वहाँ के सेंट्रल हिंदू स्कूल से उन्होंने मैट्रिक की शिक्षा प्राप्त की और प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। उनकी पहली कविता सन् 1904 में मदुरै की पत्रिका 'विवेक भानु' में छपी। चार साल बीतते-बीतते भारती नवीन शैली के कवि के रूप में ख्यात हुए। 'वन्दे मातरम्' शीर्षक कविता में उनकी राष्ट्रीय चेतना को देखा जा सकता है, जिसमें उनका संदेश है, "हम जाति या धर्म को महत्व नहीं देंगे। यदि उत्तम जन्म इस देश में प्राप्त कर लिया हो, तो फिर ब्राह्मण हो या अन्य किसी कुल के सब समान हैं।"

भारती कविता को सर्वोपरि मानते थे। राष्ट्रीय-चेतना और काव्य-चेतना उनके व्यक्तित्व के दो पहलू हैं। कविता ने उन्हें हँसमुख, उदार और स्वाभिमानी बनाया।

उनकी कविताओ को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है–देशभक्ति, देवताभक्ति। वे हिंदी के प्रबल पक्षधर थे। तमिल को वे अपनी माता मानते थे। 'तमिळ् ताय्' शीर्षक कविता में उन्होंने तमिल के जन्म का श्रेय शिव को दिया है। 'वन्देमातरम्', 'भारतदेशम्', 'एंगळताय्' शीर्षक कविताएँ उनकी राष्ट्रीय चेतना की प्रसिद्ध कविताएँ हैं। 'महात्मा गाँधी पंचकम्' लिखकर उन्होंने गाँधी के असहयोग आंदोलन को आगे बढ़ाया। यह कविता गाँधी के प्रति विराट् आस्था की कविता है।

भारती ने गद्य और पद्य दोनों में साहित्य रचा। वे सरल भाषा में रचना करते थे। कठिन भाषा वे 'असाधारण अलौकिक अंधकार' मानते थे।

नाचेंगे हम

राष्ट्रकवि श्री सुब्रह्मण्य भारती 'नाचेंगे हम' कविता के माध्यम से स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद भावी दृश्यों को रेखांकित करते हैं। उनका मानना है न कि अब ब्राह्मणों को कोई प्रभु कहेगा न फिरंगियों को हुजूर। जिस शासक ने हमें धोखे में रखकर भारत पर शासन के नाम पर प्रचुर शोषण किया, उसका सर्वनाश अब निश्चित है। वे दृढ़ होकर अपनी भावनाओं को प्रस्तुत करते हुए इंगित करते हैं कि अब न कोई ऊँच-नीच होगा, अच्छे लोग महान् कहलाएँगे और हम खुशी-खुशी किसानों का वंदन गाते हुए उद्योगों के माथे पर उन्नति का तिलक लगाएँगे। अब भारत देश पर हमारा अधिकार है। इस सत्य को कभी नहीं भूलेंगे और एकमात्र ईश्वर के अतिरिक्त किसीकी भी दासता नहीं करेंगे

नाचेंगे हम आनंद मगन हो नाचेंगे,

आनंदपूर्ण स्वराज मिला हमको हम नाचेंगे।

नाचेंगे हम आनंद मगन हो नाचेंगे।।

दिन बीत गया है, ब्राह्मण को प्रभु कहने का,

गोरे फिरंगियों को हुजूर भी कहने का।

हमसे करके याचना हमारे ऊपर ही–

शासन करनेवालों की सेवा करने का।।

जिसने हमको अब तक अंधियारे में रखा,

उस दगाबाज़ अन्यायी का दिन बीत गया, हम नाचेंगे।।

नाचेंगे हम आनंद मगन हो नाचेंगे।।1।।

सर्वत्र यही चर्चा है अब हम हैं स्वतंत्र,

हर कंठ यही गाता है अब हम हैं स्वतंत्र।

हैं निर्विवाद भारत भू के जन-जन समान–

www.tntextbooks.in

क्या ऊँचा-नीच सब कहते हैं हम सब स्वतंत्र।।

हम शंख फूँककर जय-जयध्वनि उच्चारेंगे–

धरणी के कोने-कोने में रव गूँजेगा–हम नाचेंगे।

नाचेंगे हम आनंद मगन हो नाचेंगे।।2।।

आया रे! दिन जब सब समान बन जाएँगे।

इस भू से जब छल दंभ स्वयं मिट जाएँगे।

ऊँच-नीच का पैमाना बदल गया–

सद्धर्मी, सद्कर्मी महान् कहलाएँगे।।

जाएँगे अपने आप यहाँ से पाखंडी–

वंचक विनष्ट हो जाएँगे वह दिन आया है, हम नाचेंगे।

नाचेंगे हम आनंद मगन हो नाचेंगे।।3।।

हम मुक्त कंठ से कृषि के वंदन गाएँगे।

उद्योगों के मस्तक पर तिलक लगाएँगे।

भक्षण करके भरपेट निकम्में –

उनको हम शब्द भर्त्सना भरे सुनायेंगे।।

ऊसर धरती में जल सिंचन से क्या होगा–

कोई न व्यर्थ कर्मों से समय गँवाएगा, हम नाचेंगे।

नाचेंगे हम आनंद मगन हो नाचेंगे।।4।।

अपना ही है यह देश हुआ है भास हमें,
अपना इसपर अधिकार हुआ है भास हमें।
परिपूर्ण ब्रह्म की सत्ता के अतिरिक्त किसी–
सत्ता पर होगा कभी नहीं विश्वास हमें।।
दासता उसी की केवल कर सकते हैं हम–
दूसरा हमें परतंत्र न रखने पाएगा–हम नाचेंगे।
नाचेंगे हम आनंद मगन हो नाचेंगे।।5।।

शब्दार्थ :-

प्रभु–स्वामी, मालिक; उच्चारेंगे–उच्चारण करेंगे; धरणी–धरती, पृथ्वी; रव–ध्वनि, आवाज़; वंचक–छली लुटेरा; भर्त्सना–तिरस्कार करना, निन्दा करना; भास–आभास, अहसास, अनुभव; सत्ता–शक्ति, शासन; दासता–गुलामी; परतंत्र–गुलाम।

अभ्यास

I. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिएः-

1. नाचेंगे हम कविता के कवि कौन है?
2. आजादी के पहले रचित इस कविता में सुब्रह्मण्य भारती की दूरदर्शिता है - व्यक्त कीजिएः-
3. आजादी के बाद के भारत की कल्पना कवि ने कैसे की हैं?
4. "नाचेंगे हम" कविता का सारांश लिखिए।

II. निम्नलिखित पद्यांश का सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

अपना ही है यह देश हुआ है भास हमें,
अपना इसपर अधिकार हुआ है भास हमें।
परिपूर्ण ब्रह्म की सत्ता के अतिरिक्त किसी–
सत्ता पर होगा कभी नहीं विश्वास हमें।।
दासता उसी की केवल कर सकते हैं हम–
दूसरा हमें परतंत्र न रखने पाएगा–हम नाचेंगे।
नाचेंगे हम आनंद मगन हो नाचेंगे।।5।।

www.tntextbooks.in

पद्य 6 पता नहीं

कविपरिचय:-

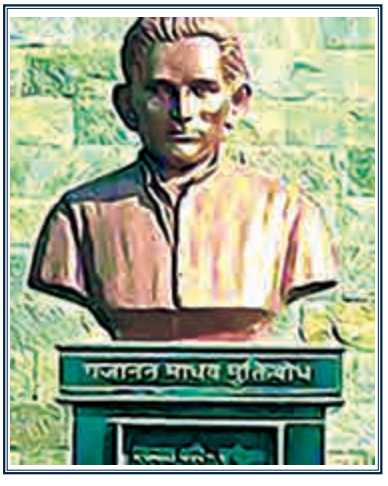

गजानन माधव 'मुक्तिबोध' (1917-1964 ई.) का जन्म ग्वालियर के श्योपुर कस्बे में हुआ था, जहाँ सौ साल पहले उनके पूर्वज आ बसे थे। पिता पुलिस में सब इंसपेक्टर थे, जिनकी बार-बार बदली होने के कारण 'मुक्तिबोध' की पढ़ाई का क्रम टूटता--जुड़ता रहा। सन् 1953 में उन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. करने के बाद राजनाद गाँव म.प्र. के डिग्री कालेज में अध्यापन कार्य आरंभ किया और जीवन पर्यन्त वहीं रहे। वे शिक्षक, पत्रकार तथा पुनः शिक्षक हुए तथा सरकारी और गैर सरकारी नौकरियाँ करते छोड़ते रहे।

'मुक्तिबोध' का जीवन संघर्षों और विरोधों के बीच बीता। उन्होंने विविध दार्शनिक विचारधाराओं का गंभीर अध्ययन किया। उनकी प्रतिभा का सर्वप्रथम परिचय उस समय हुआ जब 'अज्ञेय' द्वारा संपादित तार सप्तक (1943) में उनकी रचनाएँ प्रकाशित हुईं।

'मुक्तिबोध' की कविताओं के संग्रह 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' और 'भूरी–भूरी खाक–धूल' नाम से प्रकाशित हुए हैं। इसके अतिरिक्त दो कहानी संग्रह 'विपात्र' नामक एक उपन्यास, 'कामायनी एक पुनर्विचार' तथा 'एक साहित्यिक की डायरी' आदि उनकी अन्य महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं। 'मुक्तिबोध' का संपूर्ण साहित्य 'मुक्तिबोध रचनावली' नाम से छह खंडों में प्रकाशित हैं। आगे मुक्तिबोध की "पता नहीं" शीर्षक कविता दी गयी है। जो वर्तमान संशन्त और असंतुष्ट व्यक्ति की जिजीविषा की खोज की अकथ कहानी है।

पता नहीं

पता नहीं कब, कौन, कहाँ, किस ओर मिले,

किस सांझ मिले, किस सुबह मिले।।

यह राह जिन्दगी की

जिससे जिस जगह मिले
है ठीक वहीं, बस वहीं अहाते मेंहदी के
जिनके भीतर
है कोई घर
बाहर प्रसन्न पीली कनेर

बरगद ऊँचा, जमीन गीली
मन जिन्हें देखकर कल्पना करेगा जाने क्या।
तब बैठे एक
गम्भीर वृक्ष के तले
टटोलो, मन, जिससे जिस छोर मिले
कर अपने-अपने तप्त अनुभवों की तुलना
घुलना-मिलना।।
यह सही है कि चिचिला रहे फासले
तेज दूपहर भूरी
सब ओर गरम धार-सा रेंगता
काल बांका-तिरछा
पर, हाथ तुम्हारे में जब भी मित्र का हाथ
फैलेगी बरगद-छांह वहीं
गहरी-गहरी सपनीली-सी
जिसमें खुलकर सामने दिखेगी उरस् स्मृशा
स्वर्गीय उषा.....
लाखों आँखों से, गहरी अंतःकरण तृषा

तुमको निहारने बैठेगी
आत्मीय और इतनी प्रसन्न,
मान के प्रति, मानव के
जी की पुकार
जितनी अनन्य?
लाखों आँखों से तुम्हें देखती बैठेगी
वह भव्य तृषा
इतने समीप
ज्यों लाली भरा पास बैठा हो आसमान
आचंल फैले,
अपनेपन की प्रकाश-वर्ष
में रुधिर-स्नात हँसता समुद्र
अपनी गंभीरता के विरूद्ध चंचल होगा।।
मुख है कि मात्र आँखें हैं वे आलोक भरी,
जो सतत तुम्हारी थाह लिये होतीं गहरी,
इतनी गहरी
कि तुम्हारी थाहों में अजीब हलचल
मानो अनजाने रत्नों की
अनपहचानी-सी चोरी में,
घर लिये गये,
निज में बसने, कस लिये गये।
तब तुम्हें लगेगा अकस्मात,
....
ले प्रतिभाओं का सार, स्फुलिंगों का समूह।।

www.tntextbooks.in

अभ्यास

I. निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए:

1. "पता नहीं" कविता के कवि का परिचय दीजिए।
2. "पता नहीं" शीर्षक का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
3. "पता नहीं" कविता का सारांश लिखिए।

II. निम्नलिखित पद्यांश का सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

क. पता नहीं कब, कौन, कहाँ, किस ओर मिले,
किस सांझ मिले, किस सुबह मिले।।

ख. टटोलो, मन, जिससे जिस छोर मिले
कर अपने-अपने तप्त अनुभवों की तुलना
घुलना-मिलना।।

www.tntextbooks.in

पद्य 7 हिमालय

रामधारीसिंह दिनकर (1908-1974 ई.) का जन्म मुंगेर जिले के सिमरिया नामक गाँव में एक संपन्न किसान परिवार में हुआ। इनकी प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय पाठशाला में ही हुई। पटना कालेज से बी.ए. आनर्स किया। वे बरबीघा स्कूल में कुछ दिन अध्यापक भी रहे। 1947-1950 तक इन्होंने जनसंपर्क विभाग में निदेशक के पद पर काम किया। फिर लंगरसिंह कालेज में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष बने। 1952 में ये राज्यसभा के सदस्य निर्वाचित हुए* 1964 में इनकी नियुक्ति भागलपुर विश्वविद्यालय के कुलपति के पद पर हुई, जहाँ से 1965 में त्यागपत्र दे दिया और उन्होंने केंद्रीय सरकार के हिन्दी सलाहकार का पद संभाला।

दिनकर को भारत सरकार ने 'पद्मभूषण' की उपाधि से सम्मानित किया। 'संस्कृति के चार अध्याय' नामक उनकी पुस्तक पर 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' और 'उर्वशी' पर 'भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार' मिला। उन्होंने देश–विदेश में पर्याप्त भ्रमण भी किया।

दिनकर की प्रमुख काव्य-कृतियाँ 'रेणुका', 'हुंकार', 'रश्मिरथी', 'रसवंती', 'नील कुसुम', 'कुरुक्षेत्र', 'उर्वशी' आदि हैं। इनके अतिरिक्त 'शुद्ध-कविता की खोज', 'साहित्योन्मुखी', 'दिनकर की डायरी' आदि उनकी प्रमुख गद्य–कृतियाँ हैं।

यह कविता हिमालय को संबोधित है। कवि ने हिमालय को भारतीय पौरुष की एकाग्र आग अर्थात् ओज का प्रतीक माना है। हिमालय की मूकता कवि को किसी तपस्वी के ध्यान-जैसी प्रतीत होती है। अतः कवि उसे इस मौन तपस्या को त्यागकर राष्ट्रीय संकट का सामना करने के लिए पुकारता है। अभिप्राय यह है कि भारत की जनता में हिमालय जैसी अटल शक्ति भरी पड़ी है, परंतु वह शांत रहकर विदेशियों के हमले सहती रहती है। कवि चाहता है कि यह विराट जनसमूह जागकर अपने स्वाभिमान की वीरतापूर्वक रक्षा करे। ओज और उद्‌बोधन से भरी यह कविता देशप्रेम की प्रेरणा जगाने में सक्षम है

www.tntextbooks.in

मेरे नगपति! मेरे विशाल!

साकार दिव्य, गौरव विराट्

पौरुष के पुंजीभूत ज्वाल!

मेरी जननी के हिम-किरीट!

मेरे भारत के दिव्य भाल!

मेरे नगपति! मेरे विशाल।

युग-युग अजेय, निर्बंध, मुक्त,

युग-युग गर्वोन्नत, नित महान्,

निस्सीम व्योम में तान रहा,

युग से किस महिमा का वितान?

कैसी अखंड यह चिर समाधि?

यतिवर! कैसा यह अमर ध्यान?

तू महाशून्य में खोज रहा

किस जटिल समस्या का निदान?

उलझन का कैसा विषम जाल?

मेरे नगपति! मेरे विशाल!

ओ मौन तपस्या-लीन यती!

पल भर हो तेरा दृगोन्मेष!

रे ज्वालाओं से दग्ध, विकल

है तड़प रहा पद पर स्वदेश।

सुख सिंधु, पंचनद, ब्रह्मपुत्र,

गंगा, यमुना की अमिय धार

www.tntextbooks.in

जिस पुण्य भूमि की ओर बही

तेरी विगलित करुणा उदार,

जिसके पैरों पर खड़ा क्रांत

सीमापति! तूने की पुकार,

'पददलित इसे करना पीछे

पहले ले मेरा सिर उतार।'

उस पुण्य भूमि पर आज तपी!

रे, आन पड़ा संकट कराल

व्याकुल तेरे सुत तड़प रहे,

डँस रहे चतुर्दिक विविध व्याल

मेरे नगपति! मेरे विशाल!

कितनी मणियाँ लुट गईं? मिटा

कितना मेरा वैभव अशेष!

तू ध्यान-मग्न ही रहा, इधर

वीरान हुआ प्यारा स्वदेश।

ले अँगड़ाई उठ, हिले धरा,

कर निज विराट स्वर में निनाद,

तू शैल राट्! हुंकार भरे,

फट जाय कुहा, भागे प्रमाद!

तू मौन त्याग, कर सिंहनाद!

www.tntextbooks.in

रे तपी! आज तप का न काल!

नव युग शंख ध्वनि बजा रही,

तू जाग, जाग, मेरे विशाल!

शब्दार्थ :-

नगपति–पर्वतों का राजा, हिमालय; पुंजीभूत ज्वाल–एकत्र आग; हिम-किरीट–बर्फ़ का मुकुट; भाल–मस्तक; वितान–शामियाना; चिर–लंबे समय से विद्यमान, प्राचीन; यतिवर–श्रेष्ठ मुनि; महाशून्य–आकाश; निदान–पहचान, समाधान; दृगोन्मेष–आँख खोलना; अमिय–अमृत; विगलित करुणा–पिघली हुई करुणा (हिमालय की बर्फ़ के पिघलकर नदी बनकर बहने का प्रतीक); क्रांत–पार; पददलित–पैरों से रौंदा हुआ; तपी–तपस्वी; कराल–भयानक; व्याल–सर्प, साँप, नाग; अशेष–पूरा; शैलराट्–पर्वतराज, हिमालय; कुहा–अंधेरा, रात; प्रमाद–आलस्य।

अभ्यास

I. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-

क. मेरे नगपति! .....

..... मेरे विशाल।।

ख. ओ मौन .....

..... पर स्वदेश।

II. कवि परिचय देते हुए हिमालय कविता का सारांश लिखिए।

www.tntextbooks.in

पद्य 8 समदर्शी भगवान

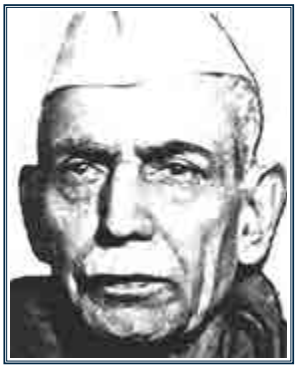

माखनलाल चतुर्वेदी एक निर्भीक कलाकार तथा राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता थे। आपका जन्म मध्यप्रदेश के होशंगाबाद जिले के अंतर्गत बाबई नामक ग्राम में ४ अप्रैल, १८८९ ई. को हुआ था। चतुर्वेदीजी का देहावसान १९६७ ई. में हुआ। आपका बाल्यकाल आर्थिक अभावों के मध्य व्यतीत हुआ, परन्तु उन्होंने परिस्थितियों से निरंतर संघर्ष किया। सामान्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् आपने अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। आपने संस्कृत, गुजराती, मराठी तथा हिन्दी साहित्य का गहन अध्ययन किया था। १९१३ ई. में आपने मासिक पत्रिका 'प्रभा' का सम्पादन किया और गणेशशंकर विद्यार्थी के प्रभाव के फलस्वरूप आपने देश की राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लिया। ब्रिटिश सरकार ने राजद्रोह के आरोप में आपको १९२१-२२ ई. में कारावास में बंद कर दिया। आपने 'प्रताप' एवं 'कर्मवीर' पत्रों का भी संपादन किया। १९४४ ई. में चतुर्वेदीजी हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष बनाये गये।

रचनाएँ – **काव्य संग्रह – मरण ज्वाल, हिमकिरीटिनी, माता, वेणुलो, गूँजे धरा, हिमतरंगिणी, युगचरण, साहित्य देवता आदि।**

नाटक – **कृष्णार्जुन युद्ध।**

निबन्ध – **'अमीर इरादे गरीब इरादे', 'चिन्तक की लाचारी' एवं 'समय के पाँव'।**

कहानी – **'वनवासी' और 'कला का अनुवाद'।**

इस कविता में कवि ने ईश्वर की समदर्शिता तर्क प्रस्तुत करते हुए उसके अनेक रूपों एवं महत्ता का प्रतिपादन किया है।

तू ही क्या समदर्शी भगवान?

क्या तू ही है अखिल जगत का न्यायाधीश महान्?

क्या तू ही लिख गया

वासना दुनिया में है पाप?

फिसलन पर तेरी आज्ञा-

से मिलता कुम्भीपाक।

फिर क्या तेरा धाम स्वर्ग है?
जो तप, बल से व्याप्त।
होती है वासना-पूरिणी
वहीं अप्सरा प्राप्त?
जो तू है, तेरा मेरा माधव
तू क्यों कर होवेगा?
तेरा हरि तो पतितों को,
उठने की अंगुलि देगा।
गो-गण में जो खेले
ग्वालों की झिकड़ी जो झेले,
जिसके खेल-कूद से टूटें,
जीवन-शाप झमेले।
व्याकुल ही जिसका घर है
अकुलातों कर गिरधर है।
मेरा वह नटवर है, जो
राधा का मुरलीधर है।

शब्दार्थ :-

समदर्शी–सबको समान समझनेवाला; अखिल–समस्त; कुंभीपाक–भयानक नरक; वासनापूरिणी–इच्छा (वासना) को पूर्ण करनेवाली; रिपु–शत्रु; क्यों कर–कैसे; अकुलातों–परेशान लोगों; गिरधर–पर्वत (गोवर्धन) को धारण करनेवाले (कृष्ण)।

अभ्यास

I. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-

क. क्या तू ही लिख गया .....
..... कुंभीपाक।

ख. व्याकुल ही .....
.....मुरलीधर है।

II .कवि परिचय देते हुए समदर्शी भगवान कविता का सारांश लिखिए।

www.tntextbooks.in

गद्य

1 स्वतंत्रता का मूल

- आचार्य श्री तुलसी

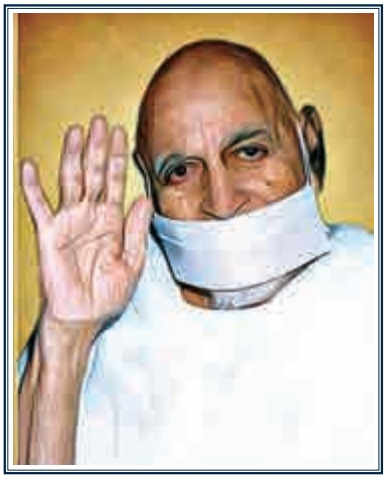

(आचार्य श्री तुलसी का जन्म राजस्थान राज्य के लाड़णू कस्बे में 20 अक्तूबर 1914 ई. को जैन परिवार में हुआ था। 11 वर्ष की अवस्था में उन्होंने जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्म में गृह त्यागकर मुनि की दीक्षा ली। 27 अगस्त 1936 ई को बाइस वर्ष की अवस्था में वे अपने धर्मसंघ के आचार्य बने। वे राजस्थानी, संस्कृत, प्राकृत, पाली और हिंदी के श्रेष्ठ विद्वान होने के साथ-साथ विचारक और समाज-सुधारक भी थे। आज़ाद भारत के नागरिकों के चरित्र में नैतिकता का स्थान सर्वोपरि रहे और संकल्प बल ऊँचा रहे, इसी दृष्टि से 2 मार्च 1949 ई. को उन्होंने एक नागरिक आचार संहिता की घोषणा की जो आगे चलकर अणुव्रत आंदोलन के नाम से देश-विदेश में प्रचलित हुआ। अणुव्रत आंदोलन को गाँधी परंपरा की अगली कड़ी माना जाता है जो अहिंसक समाज रचना की बुनियाद है।)

आचार्य तुलसी संत के साथ-साथ श्रेष्ठ वक्ता, श्रेष्ठ साहित्यकार और श्रेष्ठकवि थे। राजस्थानी, संस्कृत और हिंदी भाषाओं में उन्होंने सैकड़ों पुस्तकें लिखी हैं - हिंदी में 'भरत मुक्तिकाव्य', राजस्थानी में "कालू यशोबिलाश' बृहद काव्य। सत्तर वर्षों तक देश भर में लगातार पैदल चलकर उन्होंने नैतिकता का संदेश घर-घर पहुँचाया।

23 जून 1997 ई. को उनका पार्थिव शरीर हमसे अलग हुआ। उनका साहित्य एवं उनका आंदोलन आज भी हमारे बीच में है।

आचार्य कहते हैं कि स्वतंत्रता की चाह उसी व्यक्ति की सच्ची हो सकती है जो दूसरों की स्वतंत्रता में बाधा नहीं डालता, दूसरों के लिए अपने स्वार्थों का बलिदान करना एवं दूसरों के साथ एकता स्थपित करना ही स्वतंत्रता के मूल्यों को प्रतिष्ठापित करना है।

स्वतंत्रता शाश्वत सत्य है। हर युग में मनुष्य उसके लिए संघर्ष भी कर रहा है। किंतु परंत्रता की पकड़ आज भी ढीली नहीं हुई है। स्वतंत्रता की इतनी अदम्य चाह होने पर भी

परंत्रता से मुक्ति नहीं मिली, इसका रहस्य क्या है? यह जिज्ञासा बार-बार मन में उभरती है। गहरे मनोमन्थन के बाद आत्मानुभूति के विरल क्षण में मुझे इसका उत्तर मिला कि मनुष्य दूसरों को स्वतंत्रता दिये बिना अपनी स्वतंत्रता चाहता है। यही परतंत्रता की पकड़ है। स्वतंत्रता की चाह होने पर भी उसकी प्रक्रिया त्रुटिपूर्ण है तो वह कैसे पूर्ण होगी?

स्वतंत्रता की चाह उसी व्यक्ति की सच्ची हो सकती है जो दूसरों की स्वतंत्रता में बाधा नहीं डालता। यह अहिंसा का मार्ग है। परतंत्रता हिंसा का ही दूसरा नाम है। जितनी हिंसा बढ़ती है, उतनी ही परतंत्रता बढ़ती है। मनुष्य को हिसा प्रिय है, इसका फलितार्थ है कि उसे परतंत्रता प्रिय है। क्या ऐसा कोई आदमी है जो हिंसा का बीज बोकर परतंत्रता की फसल नहीं काटता?

आदमी-आदमी से घृणा करता है, यह हिंसा का पहला चरण है।आदमी आदमी को नीच मानता है यह हिंसा का दूसरा चरण है। घृणा करनेवाला आदमी सामनेवाले व्यक्ति के स्वतंत्र अस्तित्व को स्वीकार करता तो वह उससे घृणा नहीं करता। मिस्र के विदेशमंत्री ने यह स्वीकार किया कि इजरायल की सर्वभौम सत्ता को अस्वीकार करना एक भूल थी। यदि यह सच्चाई प्रारंभ में ही प्रकट हो जाती तो संभवतः युद्ध नहीं हुआ होता। युद्ध क्यों होता है? जब लगता है कि दूसरा देश उसकी स्वतंत्रता को अस्वीकार कर रहा है, तभी युद्ध होता। तभी युद्ध का बिगुल बज उठता है।

मनुष्य ने सामाजिक जीवन की पद्धति स्वीकार की, इसका अर्थ है उसने परतंत्रता के साथ समझौता किया है। यदि वह असामाजिक होता तो निरपेक्ष स्वतंत्र होता। सामाजिक आदमी सापेक्ष-स्वतंत्रता को ही पसंद कर सकता है। वह अपनी स्वतंत्रता का उसी सीमा में प्रयोग कर सकता है, जिससे दूसरों की स्वतंत्रता में कोई विघ्न न हो। परतंत्रता अपनी वृत्तियों में भी पलती है। श्रम करनेवाला आदमी रोटी के मामले में स्वतंत्र हो जाता है। जिनमें श्रम को हेय मानने की मनोवृत्ति है, वे दूसरों के मोहताज रहते हैं। हिंदुस्तान में बड़प्पन की कसौटी है श्रम नहीं करना। श्रम करनेवाला छोटा माना जाता है। क्या विलास पराधीनता नहीं है?

मैं उस स्वतंत्रता को कोई मूल्य नहीं देता, जिसमें उसके पोषक तत्व कम हों। मुझे लगता है कि हिंदुस्तान स्वतंत्र होने के बाद भी स्वतंत्रता का मूल्य आंकने में बहुत सफल नहीं हुआ है। इसका मूल कारण है हिंदुस्तान की आत्मा को न पहचानना। हिंदुस्तान की आत्मा है त्याग, त्याग और त्याग।

इंद्रिय-विजय, त्याग और स्वावलम्बन का केवल धार्मिक मूल्य ही नहीं है, इनका सामाजिक मूल्य भी बहुत स्पष्ट है। अपना स्वार्थ साधना, अपने स्वार्थ का संग्रह करना उसकी आत्मा का हनन है। जहाँ जातीय, साम्प्रदायिक, दलीय और भाषायी हित प्रधान बन जाते हैं, वहाँ व्यापक

www.tntextbooks.in

एकता विघटित होने लग जाती है। उसका परिणाम होता है, स्वतंत्रता का विघटन। जनतंत्र में प्रत्येक जाति को अपने विकास का पूर्ण अधिकार है। किंतु उसका उपयोग अहिंसा की मर्यादा को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। दूसरी जातियों को आघात पहुंचाये बिना किया जानेवाला विकास अहिंसा की मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करता, इसलिए वह स्थायी होता है। सांप्रदायिक और दलीय आधार पर दूसरों पर निम्न स्तर के आरोप लगाये जाते हैं, यह प्रतिहिंसा को जन्म देनेवाली हिंसा है।

धर्म के क्षेत्र में ऐसा किया जाता है, वह सबसे बड़ा अधर्म है। धर्म की हत्या अधर्म से नहीं होती, किंतु उसकी हत्या उसके उन उपक्रमों से होती है जो अपने सम्प्रदाय के हितों के लिए दूसरे संप्रदायों के हितों को कुचलने का यत्न करते हैं। क्या राजनीतिक दल दूसरों के लिए कांट बिखेर अपने पैरों को सुरक्षित रख सकते हैं? अवांछनीय परंपरा का सूत्रपात करनेवाले इस तथ्य को न भुलाएँ कि एक दिन उसका परिणाम उन्हें भी भुगतना होगा। अपनी मातृभाषा को पर्याप्त विकास किया जा सकता है किंतु दूसरों के साथ होनेवाले संपर्क सूत्र को काटकर अपने हितों की सुरक्षा नहीं की जा सकती। बहुत बार ऐसा होता है कि तात्कालिक हितों की साधना में दीर्घकालीन हित भुला दिये जाते हैं।

त्याग, शालीनता और उदारता भारतीय जीवन के महत्वपूर्ण अंग रहे हैं। दूसरों के लिए अपने स्वार्थों का बलिदान करना प्रवृत्तियों के स्तर को ऊँचा बनाए रखना और दूसरों के साथ एकता स्थापित करना स्वतंत्रता के मूल्यों को प्रतिष्ठापित करना है। इन मूल्यों को प्रतिष्ठापित करनेवाले स्वतंत्रता को परतंत्रता की पकड़ से मुक्त करते हैं और अपने स्वार्थी की पूजा करनेवाले उसका भाग्य परतंत्रता के हाथों में सौंप देते हैं।

I कठिन शब्दार्थ :-

शास्वत - स्थायी; संघर्ष - संग्राम; परतंत्रता - गुलामी; मनोमन्थन - तत्व बोध के लिए किसी विषय को बार-बार सोचना; फलितार्थ - पूरा अर्थ; विघ्न - बाधा/रुकावट; मोहताज होना - मन में मंथन करना; हताज होना; आत्मा का हनन - आत्मा की गिरावट; विघटित होना - नष्ट होना; आघात पहुँचाना - मानसिक व्यथा पहुँचाना; अतिक्रमण करना - उल्लंघन करना; दलीय आधार - दल का आधार; दीर्घकालीन हित - लंबे समय के बाद मिलनेवाला लाभ;

II संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए:-

1. स्वतंत्रता की चाह उसी व्यक्ति की सच्ची हो सकती है जो दूसरों की स्वतंत्रता में बाधा नहीं डालता।

www.tntextbooks.in

2. हिंदुस्तान में बड़प्पन की कसौटी है श्रम नहीं करना। श्रम करनेवाला छोटा माना जाता है।

3. दूसरों के लिए अपने स्वार्थों का बलिदान करना प्रवृत्तियों के स्वर को ऊँचा बनाये रखना और दूसरों के साथ एकता स्थापित करना स्वतंत्रता के मूल्यों को प्रतिष्ठापित करना है।

III वाक्यों में प्रयोग कीजिए:-

समझौता करना, स्वावलंबन, आरोप लगाना, सूत्रपात करना, शालीनता, प्रतिष्ठापित करना

IV पर्यायवाची शब्द लिखिए:-

चाह, विघ्न, त्याग, विकास, परिणाम

V एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. "स्वतंत्रता का मूल"पाठ के लेखक कौन है?
2. आचार्य श्री तुलसी की राजस्थानी में लिखे गये बृहद काव्य का नाम क्या है?
3. हिंसा का पहला चरण क्या है?
4. युद्ध कब होता है?
5. श्रम करनेवाला क्या माना जाता है?
6. हिंदुस्तान की आत्मा क्या है?
7. आत्मा का हनन क्या है?
8. हिंदुस्तान में बड़प्पन की कसौटी क्या है? वह कैसा है?
9. परतंत्रता से मुक्ति न मिलने का कारण क्या है?

VI पाँच-पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. स्वतंत्रता के विघटन का कारण बताइए?
2. प्रतिहिंसा को जन्म देनेवाली हिंसा के बारे में आप क्या जानते है।
3. धर्म की हत्या का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
4. लेखक किसे संपर्क सूत्र कहते हैं और उसे काटने का क्या परिणाम होता है?
5. स्वतंत्रता के मूल्यों को कैसे प्रति स्थापित किया जा सकता है?

www.tntextbooks.in

गद्य 2 मित्रता

- रामचंद्र शुक्ल

हिंदी समालोचना, निबंध तथा हिंदी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्पराओं को सुदृढ़ करने की दृष्टि से आचार्य रामचंद्र शुक्ल का नाम सबसे अग्रणी है। शुक्ल जी का जन्म सन्1888 में तथा देहावसान सन् 1940 में हुआ। शुक्ल जी ने संस्कृत तथा अंग्रेज़ी साहित्य, मनोविज्ञान, इतिहास आदि का गहन अध्ययन किया। आपने "हिंदी साहित्य का इतिहास" लिखकर साहित्य के इतिहास-लेखन की वैज्ञानिक नींव डाली। "श्रद्धा और भक्ति", "उत्साह", "करुणा" जैसे मनोविकारों पर गम्भीर निबंध लिखकर हिंदी निबंध को नई दिशा प्रदान की। जायसी, तुलसी, सूर आदि के काव्यों की गहरी मीमांसा कर तथा रस जैसे शास्त्रीय विषयों पर सैद्धान्तिक और व्यावहारिक समीक्षा लिखकर हिंदी आलोचना को गंभीर स्वरूप प्रदान किया। उनके मनोविकार संबंधी निबंध 'चिन्तामणि" भाग 1-2 में संकलित हैं। आपने वर्षों तक "नागरी प्रचारिणी पत्रिका" का संपादन किया। गद्यकार के साथ-साथ आप कहानीकार भी थे।

"मित्रता" शुक्ल जी का मनोविकार संबंधी एक सरल, विचार-प्रधान तथा प्रेरणा देनेवाला निबंध है। इस निबंध में उन्होंने सरल भाषा में मित्रता की आवश्यकता, अच्छे मित्र के गुण, सत्संगति का लाभ आदि पर व्यावहारिक विचार प्रस्तुत किए हैं।

जब कोई युवा पुरुष अपने घर से बाहर निकलकर बाहरी संसार में अपनी स्थिति जमाता है, तब पहली कठिनता उसे मित्र चुनने में पड़ती है। यदि उसकी स्थिति बिलकुल एकांत और निराली नहीं रहती तो उसकी जान-पहचान के लोग धड़ाधड़ बढ़ते जाते हैं और थोड़े ही दिनों में कुछ लोगों से उसका हेल-मेल हो जाता है। मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता पर उसके जीवन की सफलता निर्भर हो जाती है; क्योंकि संगत का गुप्त प्रभाव हमारे आचरण पर बड़ा भारी पड़ता है। हम लोग ऐसे समय में समाज में प्रवेश करके अपना कार्य आरंभ करते हैं जब कि हमारा चित्त कोमल और हर तरह का संस्कार ग्रहण करने योग्य रहता है, हमारे भाव अपरिमार्जित और हमारी प्रवृत्ति अपरिपक्व रहती है, हम

लोग कच्ची मिट्टी की मूर्ति के समान रहते हैं जिसे जो जिस रूप में चाहे उस रूप का करें - चाहे वह राक्षस बनावे चाहे देवता। ऐसे लोगों का साथ करना हमारे लिए बुरा है जो हमसे अधिक दृढ़-संकल्प के हैं; क्योंकि हमें उनकी हर एक बात बिना विरोध के मान लेनी पड़ती है। पर ऐसे लोगों का साथ करना और बुरा है जो हमारी ही बात को ऊपर रखते हैं क्योंकि ऐसी दशा में न तो हमारे ऊपर कोई दाब रहती है और न हमारे लिए कोई सहारा रहता है। दोनों अवस्थाओं में जिस बात का भय रहता है, उसका पता युवा पुरुषों को प्रायः विवेक से कम रहता है। यदि विवेक से काम लिया जाय तो यह भय नहीं रहता; पर युवा पुरुष प्रायः विवेक से कम काम लेते हैं। कैसे आश्चर्य की बात है कि लोग एक घोड़ा लेते हैं तो उसके गुण-दोषो को कितना परख लेते हैं पर किसी को मित्र बनाने में उसके पूर्व आचरण और प्रकृति आदि का कुछ भी विचार और अनुसंधान नहीं करते। वे उसमें सब बातें अच्छी-ही-अच्छी मानकर उस पर अपना पूरा विश्वास जमा देते हैं। हँसमुख चेहरा, बातचीत का ढंग, थोड़ी चतुराई व साहस-ये ही दो-चार बातें किसी में देखकर लोग चटपट उसे अपना बना लेते हैं। हम लोग यह नहीं सोचते कि मैत्री का उद्देश्य क्या है तथा जीवन के व्यवहार में उसका कुछ मूल्य भी है। यह बात हमें नहीं सूझती कि यह एक ऐसा साधन है जिससे आत्मशिक्षा का कार्य बहुत सुगम हो जाता है। एक प्राचीन विद्वान का वचन है - (विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है, जिसे ऐसा मित्र मिल जाए तो उसे समझना चाहिए कि खजाना मिल गया। विश्वासपात्र मित्र जीवन एक औषध है। हमें अपने मित्रों से यह आशा रखनी चाहिए कि वे उत्तम संकल्पों में हमें दृढ़ करेंगे, दोषों और त्रुटियों से हमें बचावेंगे, हमारे सत्य, पवित्रता और मर्यादा के प्रेम को पुष्ट करेंगे, जब हम कुमार्ग पर पैर रखेंगे, तब वे हमें सचेत करेंगे, जब हम हतोत्साह होंगे तब हमें उत्साहित करेंगे; सारांश यह है कि वे हमें उत्तमतापूर्वक जीवन-निर्वाह करने में हर तरह से सहायता देंगे। सच्ची मित्रता में उत्तम-से-उत्तम वैद्य की-सी निपुणता और परख होती है, अच्छी-से-अच्छी माता का-सा धैर्य और कोमलता होती है। ऐसी ही मित्रता करने का प्रयत्न प्रत्येक युवा पुरुष को करना चाहिए।

छात्रवास में तो मित्रता की धुन सवार रहती है। मित्रता हृदय से उमड पड़ती है। पीछे के जो स्नेह-बंधन होते हैं, उसमें न तो उतनी उमंग रहती है और न उतनी खिन्नता। बालमैत्री में तो मनन करनेवाला आनंद होता है जो हृदय को बेधनेवाली ईर्ष्या होती है, वह और कहाँ कैसी मधरता कैसी अनुरक्त होती हैा कैसा अपार विश्वास होता है। हृदय के कैसे-कैसे उद्‌गार निकलते हैं। वर्तमान कैसे आनन्दमय दिखाई पड़ता है और भविष्य के संबंध में कैसी लुभानेवाली कितनी जल्दी बातें लगती है और कितनी जल्दी मानना-मनाना होता है। 'सहपाठी की मित्रता' इस उक्ति में हृदय के कितने भारी उथल-पुथल का भाव

www.tntextbooks.in

भरा हुआ है। किंतु जिस प्रकार युवा पुरुष की मित्रता स्कूल के बालक की मित्रता से दृढ़, शांत और गंभीर होती है, उसी प्रकार हमारी युवावस्था के मित्र बाल्यावस्था के मित्रों से कई बातों में भिन्न होते हैं। मैं समझता हूँ कि मित्र चाहते हुए बहुत से लोग मित्र के आदर्श की कल्पना मन में करते होंगे, पर इस कल्पित आदर्श से तो हमारा काम जीवन की झंझटों में चलता नहीं। सुंदर प्रतिभा, मनभावनी चाल और स्वच्छन्द प्रकृति से ही दो-चार बातें देखकर मित्रता की जाती है, पर जीवन-संग्राम में साथ देनेवाले मित्रों में इससे कुछ अधिक बातें चाहिए। मित्र केवल उसे नहीं कहते जिसके गुणों की तो हम प्रशंसा करें पर जिससे हम स्नेह न कर सके, जिससे अपने छोटे-मोटे काम तो हम निकालते जाएँ, पर भीतर ही भीतर घृणा करते रहें। मित्र सच्चे पथ-प्रदर्शक के समान होना चाहिए जिस पर हम पूरा विश्वास कर सकें; भाई के समान होना चाहिए जिसे हम अपनी प्रीतिपात्र बना सके। हमारे और हमारे मित्र के सच्ची सहानुभूति होनी चाहिए। ऐसी सहानुभूति जिससे एक के हानि-लाभ को दूसरा अपना हानिलाभ समझे। मित्रता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो मित्र एक ही प्रकार काम करते हों व एक ही रुचि के हों। इसी प्रकार प्रकृति और आचरण की समानता भी आवश्यक व वांछनीय नहीं है। दो भिन्न प्रकृति के मनुष्यों में बराबर प्रीति और मित्रता रही है। राम धीर और शांत प्रकृति के थे, लक्ष्मण उग्र और उद्धत स्वभाव के थे, पर दोनों भाइयों में अत्यंत प्रगाढ़ स्नेह था। उदार तथा उच्चाशय कर्ण और लोभी दुर्योधन के स्वभावों में कुछ विशेष समानता न थी, पर उन दोनों की मित्रता खूब निभी। यह कोई भी बात नहीं है कि एक ही स्वभाव और रुचि के लोगों में ही मित्रता हो सकती है। समाज में विभिन्नता देखकर लोग एक-दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं। जो गुण हम में नहीं हैं, हम चाहते हैं कि कोई ऐसा मित्र मिले जिसमें वह गुण हो। चिंताशील मनुष्य प्रफुल्लचित्त मनुष्य का साथ ढूँढता है, निर्बल बली का, धीर उत्साही का। उच्च आकांक्षा वाला चंद्रगुप्त युक्ति और उपाय के लिए चाणक्य का मुँह ताकता था। नीति-विशारद अकबर मन बहलाने के लिए बीरबल की ओर देखता था।

मित्र का कर्तव्य इस प्रकार बतलाया गया है - "उच्च और महान कार्यों में इस प्रकार सहायता देना, मन बढ़ाना और साहस दिलाना कि तुम अपनी निज की सामर्थ्य से बाहर काम कर जाओ"। यह कर्तव्य उसी से पूरा होगा जो दृढ़-चित्त और सत्य-संकल्प का हो। इससे हमें ऐसे ही मित्रों की खोज में रहना चाहिए जिनमें हमसे अधिक आत्मबल हो। हमें उनका पल्ला उसी तरह पकड़ना चाहिए कि जिस तरह सुग्रीव ने राम का पल्ला पकड़ा था। मित्र हों तो प्रतिष्ठित और शुद्ध हृदय के हों, मृदुल और पुरुषार्थी हों, शिष्ट और सत्यनिष्ठ हों, जिसमें हम अपने को उनके भरोसे पर छोड़ सके और यह विश्वास

कर सकें कि उनसे किसी प्रकार का धोखा न होगा। मित्रता एक नई शक्ति की योजना है। बर्क ने कहा है कि आचरण-दृष्टांत ही मनुष्य जाति की पाठशाला हैं; जो कुछ वह उनसे सीख सकता है, वह और किसी से नहीं।

संसार में अनेक महान पुरुष मित्रों की बदौलंत बड़े-बड़े कार्य करने में समर्थ हुए हैं। मित्रों ने उनके हृदय के उच्च भावों को साहस दिया है। मित्रों ही के दृष्टांतों को देखकर उन्होंने अपने हृदय को दृढ़ किया है। अहा! मित्रों ने कितने मनुष्यों के जीवन को साधु और श्रेष्ठ बनाया है। उन्हें मूर्खता और कुमार्ग के गड्हों से निकालकर सात्विकता के पवित्र शिखर पर पहुँचाया है। मित्र उन्हें सुंदर मंत्रणा और सहारा देने के लिए सदा उद्यत रहते हैं उनके सुख और सौभाग्य की चिंता वे निरंतर करते रहते हैं। ऐसे भी मित्र होते हैं जो विवेक को ज़ागृत करना और कर्तव्य-बुद्धि को उत्तेजित करना जानते हैं। ऐसे भी मित्र होने हैं जो टूटे जी का जोड़ना और लड़खड़ाते पाँवों को ठहराना जानते हैं। बहुतेरे मित्र हैं जो ऐसे दृढ़ आशय और उद्देश्य की स्थापना करते हैं जिससे कर्मक्षेत्र में आप भी श्रेष्ठ बनते हैं और दूसरों को भी श्रेष्ठ बनाते हैं। मित्रता जीवन और मरण के मार्ग में सहारे के लिए है। यह सैर-सपाटे और अच्छे दिनों के लिए भी है तथा संकट और विपत्ति के बुरे दिनों के लिए भी है। यह हँसी-दिल्लगी के गुलछर्रों में भी साथ देती है और धर्म के मार्ग में भी। मित्रों को एक-दूसरे के जीवन के कर्तव्यों को उन्नत करके उन्हें साहस, बुद्धि और एकता द्वारा चमकाना चाहिए। हमें अपने मित्र से कहना चाहिए - "मित्र! अपना हाथ बढ़ाओं। यह जीवन और मरण में हमारा सहारा होगा। तुम्हारे द्वारा मेरी भलाई होगी। पर यह नहीं कि सारा ऋण मेरे ही ऊपर रहे, तुम्हारा भी उपकार होगा, जो कुछ तुम करोगे उससे तुम्हारा भी भला होगा। सत्यशील, न्यायी और पराक्रमी बने रहो, क्योंकि यदि तुम चूकोगे तो मैं भी चूकूँगा। जहाँ-जहाँ तुम जाओं, मैं भी आऊँगा। तुम्हारी बढ़ौती होगी तो मेरी भी बढ़ौती होगी। जीवन के संग्राम में वीरता के साथ लड़ों क्योंकि तुम्हारी ढाल मैं लिए हूँ।"

जो बात ऊपर मित्रों के संबंध में कही गई है, वही जान-पहचानवालों के संबंध में भी ठीक है। जो मनुष्य संस्कार में लगा हो, उसे अपने मिलने-जुलनेवालों के आचरण पर भी दृष्टि रखनी चाहिए, उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि उनकी बुद्धि और उनका आचरण ठिकाने का है। साधारणतः हमें अपने ऊपर ऐसे प्रभावों को न पड़ने देना चाहिए जिनसे हमारी विवेचना की गति मंद हो व भले-बुरे का विवेक क्षीण हो। जीवन का उद्देश्य क्या है? क्या वह भविष्य के लिए आयोजन का स्थान नहीं। क्या वह तुम्हारे हाथ सौंपा हुआ ऐसा पदार्थ नहीं है जिसका लेख तुम्हें परमात्मा को और अपनी आत्मा को देना होगा? सोचो तो कि दो, चार, दस गुना करके लौटाना चाहिए, अथवा ज्यों के त्यों बिना व्याज

व वृद्धि के। यदि जीवन एक प्रहसन ही है जिसमें तुम गा-बजाकर और हँसी-मजाक करके समय काटो, तब जो कुछ उसके महत्व के विषय में मैने कहा है, सब व्यर्थ ही है। पर जीवन में गंभीर बातें और विपत्ति के दृश्य भी हैं। मेरी समझ में तो महाराणा प्रताप की भाँति संकट में दिन काटना बाजिदअली शाह की भाँति भोग-विलास करने से अच्छा है। मेरी समझ में शिवाजी के सवारों की तरह चने बाँधकर चलना औरंगजेब के सवारों की तरह हुक्के और पानदान के साथ चलने से अच्छा है। मैं जीवन को न तो दुःखमय और न सुखमय बतलाना चाहता हूँ बल्कि उसे एक ऐसा अवसर समझता हूँ, जो हमें कुछ कर्तव्यों के पालन के लिए दिया गया है, जो परलोक के लिए कुछ कमाई करने के लिए दिया गया है। हमारे सामने ऐसे बहुत से लोगों के दृष्टांत हैं जिनके विचार भी महान् थे, कर्म भी महान् थे। जैसा कि महात्मा डिमास्थिनीज ने एथेंस वासियों से कहा था, उसी प्रकार हमें भी अपने मन में समझना चाहिए कि "यदि हमें अपने महान् पूर्व-पुरुषों की भांति कर्म करने का अवसर न मिले, तो हमें कम-से-कम अपने विचार उनकी भाँति रखने चाहिए और उनकी आत्मा के महत्व का अनुकरण करना चाहिए।" अतः हमें सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हम कैसा साथ करते हैं। दुनिया में जैसी हमारी संगति होगी, वैसा हमें समझेगी ही; पर हमें अपने कामों में भी संगत ही के अनुसार सहायता व बाधा पहुँचेगी। उसका चित्त अत्यंत दृढ़ समझना चाहिए

जिसकी चित्तवृत्ति पर उन लोगों का कुछ भी प्रभाव न पड़े जिनका बराबर साथ रहता है। पर अच्छी तरह समझ रखो कि यह कभी हो नहीं सकता। चाहे तुम्हें जान न पड़े, पर उनका प्रभाव तुम पर बराबर हर घड़ी पड़ता रहेगा और उसी के अनुसार तुम उन्नत व अवनत होगे, उत्साहित व हतोत्साह होगे। एक विद्वान से पूछा गया - "जीवन में किस शिक्षा की सबसे अधिक आवश्यकता हैं?" उसने उत्तर दिया - 'व्यर्थ की बातों को जानकर भी अनजान होना।" यदि हम जान - पहचान करने में बुद्धिमत्ता से काम न लेंगे तो हमें बराबर अनजान बनना पड़ेगा।

कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है। यह केवल नीति और सद्वृत्ति का ही नाश नहीं करता, बल्कि बुद्धि का भी क्षय करता है। किसी युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी, तो वह उसके पैर में बँधी चक्की के समान होगी जो उसे दिन-दिन अवनति के गढ़े में गिराती जाएगी और यदि अच्छी होगी तो सहारा देनेवाली बौंहु के समान होगी जो उसे निरंतर उन्नति की ओर उठाती जाएगी।

www.tntextbooks.in

अभ्यास

I कठिन शब्दार्थ :-

अनुसंधान - खोज; विश्वास पात्र - भरोसा रखने योग्य; पथ प्रदर्शक - मार्ग दर्शन; निष्कलंक - स्वच्छ / पवित्र; सात्विकता - सादगी; आचरण - व्यवहार

II संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए:-

1. लोग एक घोड़ा लेते हैं तो उसके गुण दोष को कितना परख लेते हैं पर किसी को मित्र बनाने में उसके पूर्व आचरण और प्रकृति आदि का कुछ भी विचार और अनुसंधान नहीं करते।

2. मित्रता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो मित्र एक ही प्रकार का कार्य करते हो वह एक ही रुचि के हो।

3. हृदय को उज्जवल और निष्कलंक रखने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि बुरी संगत की छूत से बचो।

4. हमारे सामने ऐसे बहुत से लोगों के दृष्टांत है जिनके विचार भी महान थे, कर्म भी महान थे।

5. हँसमुख चेहरा, बातचीत का ढंग, थोड़ी चतुराई व साहस ये ही दो चार बातें किसी में देखकर लोग चटपट उसे अपना मित्र बना लेते हैं।

6. बुरी बाते हमारी धारणा में बहुत दिनों तक टिकती है।

III वाक्यों में प्रयोग कीजिए:-

सहानुभूति होना, धुन सवार होना, ज्यों का त्यों, दृढ़ संकल्प, अनुकरण करना, साहस दिखाना, हतोत्साहित होना, जीवन - संग्राम, उच्च आकांक्षा

IV एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:

1. मित्रता निबंध से क्या सीख मिली?

2. अच्छे मित्र का लक्षण बताइए?

www.tntextbooks.in

3. कौन-सा ज्वर सबसे भयानक होता है?

4. युवा पुरुष को मित्र चुनने की कठिनता कब होती है?

5. शुकलजी के अनुसार जीवन की औषधि क्या है?

6. सच्चा मित्र कौन हैं?

V प्रश्नों का उत्तर तीन वाक्यों में दीजिए:-

1. किन गुणों को देखकर लोग चटपट उसे अपना मित्र बना लेते हैं?

2. राम लक्ष्मण के स्वभाव, कर्ण और दुर्योधन के स्वभाव में अंतर होने पर भी उनके बीच में मित्रता कैसे खूब निभी?

3. चंद्रगुप्त चाण्क्य का मुँह और अक्बर बीरबल की ओर क्यों देखता था?

4. मित्र के कर्तव्य और लक्षणों पर शुक्लजी का विचार क्या था?

5. शुक्लजी महान पुरुषों का जिक्र करके क्या बातें कहते हैं?

6. मनुष्य का जीवन थोड़ा है - शुक्लजी किस बात पर की ओर सचेत करते हैं

VI प्रश्नों का उत्तर पाँच-पाँच वाक्यों में दीजिए:-

1. सच्चे मित्र का लक्षण बताइए।

2. अच्छे मित्र का क्या-क्या कर्तव्य है?

3. किन-किन लोगों से मित्रता नहीं रखनी चाहिए?

www.tntextbooks.in

गद्य 3 वल्लभ भाई पटेल

--- रामनाथ 'सुमन'

लेखक परिचय

श्री रामनाथ 'सुमन' प्रयाग के निवासी और हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक और कवि हैं। इन्होंने पद्य की अपेक्षा गद्य-लेखन की दिशा में अधिक और महत्वपूर्ण काम किया है। इनकी भाषा तो जैसे इनके पीछे हाथ जोड़े चलती है। रचनाओं में कुछ तो साधारण शैली में हैं, जो भारतीय पारिवारिक जीवन से संबंधित साहित्य के अन्तर्गत आती हैं और कुछ ओजस्वी एवं स्फूर्तिदायक शैली में हुई हैं, जो नवयुवकों के लिए विशेष प्रेरणादायक हैं। 'वेदी के फूल' नाम से इन्होंने एक गद्य-काव्य भी लिखा है, जिसमें राष्ट्र की वेदी पर मर मिटनेवाले वीरों की मर्मस्पर्शी गाथाएँ हैं।

इन सबके अतिरिक्त राष्ट्र-नेताओं की जीवनियाँ भी इन्होंने प्रौढ़ और विवेचनात्मक शैली में लिखी हैं। इनकी ख्याति का आधार वस्तुतः इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। नीचे स्वर्गीय सरदार पटेल की सुमनजी द्वारा प्रस्तुत जीवन-झाँकी दी जा रही है, इसीसे लेखक की प्रतिभा का परिचय पाठकों को मिल जाएगा।

आपने बहुत-से आदर्श चरित्रों को पढ़ा और सुना होगा, लेकिन वल्लभभाई पटेल जैसा दृढ, निर्भीक, सच्चा और सरल चरित्र शायद ही कहीं देखा हो। यही कारण है कि उनका व्यक्तित्व आज भी युवा पीढ़ी के लिए आदर्श बना हुआ है। यह पाठ पढ़कर आप सहज ही समझ सकेंगे उन्हें 'लौह पुरुष' क्यों कहा जाता है!

सबसे पहली बात, जो वल्लभभाई के जीवन में शुरू से अन्त तक एक स्वर्ण-रेखा की तरह चली गयी थी, उनकी सच्ची वीरता थी। उनके जीवन पर निर्भयता की छाप थी। वल्लभभाई ने महात्माजी को अपनाया ज़रूर; पर वह उनकी भाँति साधक नहीं, शिक्षक नहीं, एक योद्धा थे। इसी रूप में वह खिलते थे। आदर्श सत्याग्रही की भाँति वह अपने को मिट्टी में, शून्य में नहीं मिला सकते थे, उनमें सत्याग्रही की अजातशत्रुता नहीं थी, उनमें वीरोचित क्षमा थी। युद्ध उनका स्वभाव था। युद्ध को देखकर उनमें अद्भुत भावावेश उमड़ता था और मध्ययुगीन वीर राजपूत की नाईं सामने के युद्ध में उनका जीवन हँस उठता था। वल्लभभाई को तब देखो जब कोई

युद्ध चल रहा हो– छाती में आँधी का साहस, भुजाएँ फड़कती हुईं, दिल उमंगों के सुरूर पर चढ़ा हुआ, वाणी आग उगलनेवाली! युद्ध में वह जीते-से मालूम पड़ते थे। युद्ध के बाद के वल्लभभाई को युद्ध के समय के वल्लभभाई से मिला लो, उनका रहस्य निकल आएगा। पहला दूसरे के सामने मुर्दा है।

यह आदमी अपने जीवन की प्रत्येक साँस के साथ खतरे को प्यार करता था। जोखिम का काम हो, फिर देखो उसे। उसका दिल जूझने के लिए बल्लियाँ उछलता था। वह आग से खेलना चाहता था। बारडोली की लड़ाई की भूमिका जब बँध रही थी तब उसने किसानों की सभा में कहा था-"मेरे साथ कोई खिलवाड़ नहीं कर सकता। मैं किसी ऐसे काम में नहीं पड़ता। जिसमें कोई खतरा या जोखिम न हो। जो लोग आपत्तियों को निमंत्रण दें, उनकी सहायता के लिए मैं तैयार हूँ।"

और ऐसा भी नहीं कि यह प्रवृत्ति असहयोग-काल में यकायक उत्पन्न हो गयी हो। नहीं, वह उनमें शुरू से थी। कठिनाइयाँ उन्हें झुका नहीं सकतीं, भय उन्हें डरा नहीं सकता। जब वह बालक थे, तब भी यही निर्भीकता थी। उसी बालपन की घटना है– उनकी काँख में फोड़ा हुआ; एक गँवार वैद्य ने दवा बतायी-लोहा गर्म करके फोड़े में भोंक दो। बालक वल्लभभाई झट तैयार! लोहा गर्म हुआ। भोंकनेवाले ने उसे हाथ में लिया, पर उसका दिल इस कोमल बालक को देखकर काँप गया। हिचकिचाने लगा। बालक झुँझला उठा– "क्या देख रहा है भाई? लोहा ठंडा हो रहा है। ले, तुझसे नहीं बनता, तो मैं भोंक लूँ!" ग्रामीण दंग रह गया।

इस वीर पुरुष के दिल में वह लोहा कभी ठंडा न हुआ। जब वह उस लोहे को ठंडा होता देखता, तो तड़प उठता। जब तक वह गर्म है तब तक वातावरण में आँधी है, तूफ़ान है, खतरा है। जब तक ज्वाला धू-धू करके आकाश में उठती जाती है तब तक उसका स्वर्ग है। आँधी रुकी, ज्वाला बुझी और दिल उछालनेवाली चीज़ सुस्त पड़ी। खतरे के समय ज्वालामुखी की तरह उसके मुख से आग ही आग निकलती है।

सच बात यह है कि वल्लभभाई का विवेक गाँधीजी को भले ही चुमता हो, पर उनकी 'स्पिरिट', उनकी प्रेरणा, उनकी प्रकृति लोकमान्य से ज़्यादा मिलती है। निश्चय ही लोकमान्य के 'शठं प्रति शाठ्यम्' – 'जैसे को तैसा' को वल्लभभाई ने गाँधीजी के प्रभाव में कोमल कर दिया। गाँधीजी के 'शठं प्रत्यपि सत्यं' – 'काँटे के बदले फूल' को वह अपनाना चाहते थे; जहाँ तक शरीर का सवाल है, अपना ही लिया; उसे श्रेष्ठ भी समझा, पर उनका जीवन जिन चीज़ों से गढ़ा गया था, उनमें वह 'फ़िट' नहीं होता था, मिलकर बिलकुल ही एक नहीं हो जाता था-- अलग ही अलग रहता था। वह उसे अपनाते थे, पर गाँधीजी की भाँति, इस साधना में उनकी आत्मा परिपूर्ण होकर खिल नहीं उठती थी। वह परिस्थिति एवं बुद्धि-विवेक से 'गाँधीत्व' की तरफ़

झुके हुए था, पर प्रकृति, स्वभाव और प्रवृत्ति से 'लोकमान्यत्व' की तरफ़। और सब मिलकर जैसे थे, उनमें न लोकमान्य थे, न गाँधी, इन दोनों के सम्मिश्रण थे। दोनों की कुछ बातें थीं, कुछ नहीं थीं।

क्षण-भर वल्लभभाई को लोकमान्य और गाँधी दोनों की कसौटी पर कसकर देखें। लोकमान्य की अगाध विद्वत्ता वल्लभभाई में नहीं थी। लोकमान्य के गंभीर शास्त्रज्ञान से वह दूर थे। लोकमान्य की राजनीतिक व्यवहार-बुद्धि भी उनमें नहीं थी। दूसरी ओर उनमें वह अथक परिश्रम वह दृढ लगन हम देखते हैं, जो लोकमान्य के जीवन की विशेषता थी। लोकमान्य की भाँति ही वल्लभभाई जनसेवा में आत्मविस्तृत होकर चलते थे। लोकमान्य के सदृश ही वह अपने महत्त्व का स्मरण नहीं रखते थे। और अपने विषय में बहुत कम लिखते या बोलते थे। इतना ही क्यों, लोकमान्य की भाँति ही ऊपर से रूखे, निष्ठुर और अभिमानी-सा लगते हुए भी भीतर से सरल, कोमल और निराभिमान थे।

इतनी समानताओं के बाद कुछ निष्कर्ष निकालने ही बैठें, तो क्या निकले? पर इतना तो स्पष्ट हो ही जाता है कि उन्हें हम लोकमान्य के साथ नहीं बैठा सकते। सब कुछ होते हुए भी लोकमान्य और वल्लभभाई के निर्माण में एक महान अन्तर है। और वह यह है कि लोकमान्य जहाँ राजनीतिज्ञ थे, वहाँ वल्लभभाई राजनीतिज्ञ नहीं–यौद्धा थे, सैनिक थे, सेनापति थे। राजनीतिज्ञ और योद्धा में तत्त्वतः ही अन्तर है। राजनीतिज्ञ का ज़बान पर काबू होता है; उसके लिए वह एक अस्त्र है। उसके शब्द ठंडे, प्रायः दो-अर्थी होते हैं। वह अपने मन का भाव ज़बान तक नहीं आने देता। वह अवसर का उपयोग करता है। और योद्धा जिसे हम उपयोगिता कहते हैं, उसे लेकर नहीं चलता; भावना को, स्पिरिट' को लेकर चलता है। वह खतरे को प्यार करता है। वीरता उसकी देवी है और साहस उसका अनुचर है। जब आसमान पर घटाएँ छा रही हों तब जहाँ राजनीतिज्ञ के ललाट पर विचार की रेखाएँ होती हैं और आँखों में चिन्ता की छाया, वहाँ योद्धा का दिल उमंगों से भरा हुआ-अब उमड़ा, अब उमड़ा, ऐसा होता है। शत्रु की ललकार सुनकर राजनीतिज्ञ सोचेगा कि अभी वार करना चाहिए या नहीं; योद्धा झट बाहर निकल पड़ेगा। इस दृष्टि से लोकमान्य और वल्लभभाई समान प्रवृति लेकर भी समान नहीं हैं और उनमें अन्तर है।

और महात्माजी को लेकर वल्लभभाई की ओर देखते हैं, तो भी इसी बात पर पहुँचते हैं कि दोनों में अन्तर है। अन्तर मात्राओं का नहीं, प्रवृत्ति के साथ तात्त्विक भेद भी तो है। गाँधीजी एक साधक थे। सत्य, आत्म साक्षात्कार उनका लक्ष्य था। इसलिए स्वभावतः उनका जीवन अनावृत, खुला हुआ है। इसकी साधना में सहायक होनेवाली छोटी से छोटी बात भी वह कह डालते थे– जिन व्यक्तिगत बातों के कहने में आदमी काँप उठे, सत्य की साधना में ज़रा भी सहायता मिलने की संभावना हो, तो उन्हें भी वह अत्यन्त निष्ठुरता के साथ कह डालते। कुछ

नगण्य व्यक्तिगत उपहार पास रख लेने पर कस्तूरबा के सम्बन्ध में उन्होंने जो कुछ और जैसी निष्ठुरता के साथ लिखा था, वह दूसरे से संभव नहीं, वह निर्मोही आध्यात्मिक साधक से ही संभव है; वह उसीका पथ है। वल्लभभाई एक सच्चे आत्मत्यागी वीर पुरुष की भाँति अपने जीवन के प्रति मौन थे। इतने मौन कि झुंझलाहट होती है।

गाँधीजी विरोधी के साथ लड़ते हैं, पर उसे विरोधी समझकर नहीं, उसके विनाश के लिए नहीं, उसे सुधारने के लिए, उसे गलत रास्ते से हटाने के लिए। युद्ध के समय भी विरोधी के सच्चे कल्याण का ध्यान उन्हें रहता है। यह साधक की अन्तःकरण के पोर-पोर में भीनी हुई उदारता है, जिसकी ऊँचाई पर वस्तुतः कोई शत्रु नहीं रह जाता। वल्लभभाई की उदारता वीर योद्धा की उदारता थी। जो छिपकर वार करना नहीं जानती, पर सामने की लड़ाई में शत्रु को आग्नेय नेत्रों से देखती है और उसे मटिया-मेट कर देना चाहती है, जो शत्रु की पराजय से उल्लासित है। इसी प्रकार जब गाँधीजी सच्चे सत्याग्रही की भाँति विरोधी को अपने कार्यक्रम की सूचना पहले ही दे देते हैं, तब वल्लभभाई उनके मुँह से, शत्रु या मित्र क्रिया में आने के पहले उनका कोई कार्यक्रम नहीं जान सकता था।

इतना ही नहीं, माखनलालजी के सुन्दर शब्दों में तो "जब महात्माजी छोटे से छोटे आदमी के कुतूहलों तक का जवाब थे (तब) वल्लभभाई से सवाल पूछने का साहस ही बहुत कम को हो पाता था।

उनके विषय में तो केवल यही कहा जा सकता है कि वह जवाब सदैव अपने विरोधी को ही देते थे। महात्माजी जीवन की आत्मकथा लिख सकते थे, किन्तु वल्लभभाई आत्मचर्चा कभी करते ही नहीं थे। महात्माजी का संन्यास और उनका तप महान प्रयत्नों की सिद्धि था, वीर वल्लभभाई का संन्यास एक दिन प्रातःकाल उठकर किया हुआ, किन्तु सदैव टिकनेवाला सिपाही का प्रण था। महात्माजी साधक, सुधारक और शिक्षक थे। वल्लभभाई न सुधारक थे, न साधक, न शिक्षक। वह योद्धा थे, सेनानी थे, सिपाहसालार थे। महात्माजी की महान क्षमा में आत्मनिरीक्षण और आत्मचिन्तन होना ही चाहिए। वल्लभभाई की क्षमा वीरोचित क्षमा थी, उसमें अपने योद्धा की सौ भूलें माफ़ थीं....।"

इतनी बातें कर लेने पर यह कहने का अवसर आया है कि वल्लभभाई वस्तुतः उन उपकरणों से बने थे जिनसे शहीद का सृजन होता है। वह एक योद्धा थे। बुद्धि-विवेक, परिस्थिति, मौनावलंबन और संघटनशक्ति ने इस योद्धा को योद्धा से ऊपर उठाया था और तत्त्वतः योद्धा होते हुए भी उसे सेनापति-सरदार के आसन पर ला खड़ा किया था। वल्लभभाई में वह कूट रहस्यमयता नहीं, जो राजनीतिज्ञ की खास चीज़ है; पर उनमें वह गंभीरता और प्राणोन्मादकारी साहस दोनों उपयुक्त मात्रा में थे, जो एक सफल सरदार या सेनापति के निर्माण के लिए

आवश्यक हैं। युद्ध में वह इस तरह स्वतंत्रतापूर्वक खेलते थे जैसे पानी में मछली तैरती है। उस समय कोई कठिनाई उनका दम नहीं तोड़ सकती। परन्तु राजनीतिज्ञता की बातों और समझौते की चर्चाओं में उनका यह भावावेश शिथिल पड़ जाता था और प्रतिभा कुण्ठित हो जाती थी। उन्होंने स्वयं कहा था– मुझे लड़ते-लड़ते जो संकट और जो उलझन पड जाए, उसे मैं तड़ाक से सुलझा लूँगा। ऐसी उलझनें सुलझाने की सूझ कहाँ से मिलती है, मैं नहीं जानता। परन्तु समझौते की फ़ीकी चर्चाओं में मेरा जी नहीं लगता। ऐसी अकर्मण्य चर्चाओं में कितनी ही बार तो मैं गड़बड़ में पड़ जाता हूँ।

और जब युद्ध चलता हो, तो उनकी वाणी की आग देखिए। मैं दूसरे किसी भारतीय नेता को नहीं जानता जो युद्धकाल में इतने सरल, सीधे, पर इतने शक्तिमान शब्दों की सृष्टि करने में समर्थ हो। उनकी वाणी आग उगलती थी और उसके चन्द नमूने ये हैं– "शत्रु का लोहा गरम भले ही हो जाए, पर हथौड़ा तो ठंडा रहकर ही काम दे सकता है।" बारडोली के किसानों से कष्ट-सहन की तैयारी के लिए कहते हुए– "किसान होकर यह बात मत भूल जाना कि वैशाख-जेठ की भयंकर गर्मी के बिना आषाढ़-श्रावण की वर्षा नहीं होनेवाली है।" या "मरने-मारने की तालीम सिपाहियों को देने में सरकार को छः महीने लगते हैं। हमें तो सिर्फ़ मरना ही सीखना है, उसमें तीन महीने भी क्यों लगने चाहिए?" वल्लभभाई ने विद्वान की परिभाषा भी खूब बनायी थी– "विद्वान वह जो भाषा को अटपटी और कुढंगी बना दे।" विद्यार्थियों के सामने भाषण देते हुए कहते– "अरे, क्या साँप को अपनी केंचुली उतार फेंकने में दुःख होता है, क्या कोई मेहनत पड़ती है? इसी तरह हम भी एक दिन पराये शासन की केंचुली उतार देंगे। उसमें श्रम और कष्ट काहे का?" इसी प्रकार यदि राजसत्ता अत्याचारी हो, तो किसान का सीधा उत्तर यही है-- "जा, जा, तेरे जैसे कितने ही राज मैंने मिट्टी में मिलते देखे हैं।" इसी प्रकार बारडोली सत्याग्रह के समय भाषण देते हुए कहा– "सरकार जेल में मेहमान चाहती है। आप उसे मुँह-माँगे मेहमान देना।" इसी प्रकार गिरफ़्तारी के समय के ये वाक्य भारतीय वातावरण में गूँजते हैं– "सरकार यदि यह समझती हो कि मेरे पंख काट देने से मैं बिना पंखोंवाला हो जाऊँगा, तो यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि वे तो वर्षा की घास की तरह नित्य नये उगते जानेवाले हैं!"

यह युद्ध के समय का बोलना है; पर वैसे वल्लभभाई में बोलने की आदत बहुत कम थी। वह बोलते कम थे, करते अधिक थे। बात-शूर उन्हें लुभा नहीं सकता था। वह लेक्चर फट कारनेवाले आदमी नहीं थे। विज्ञापनबाज़ी उन्हें पसन्द नहीं; और हो भी तो बहुत थोड़ी, आवश्यकता-भर; व्यक्तिगत की तो बिलकुल ही नहीं। वह गरजनेवाला मेघ नहीं, बरसनेवाला धुआँधार थे। वैसे उनका मौन गज़ब का था। वह ठोस वीरता के पुजारी योद्धा थे, पोल के शब्द उन्हें आकर्षित नहीं कर सकते थे।

www.tntextbooks.in

कठोर मुख, दृढ जबड़े, शत्रु को ललकारती आँखें जिनमें उनके लिए व्यंग्य और ज़हर भरा हो, यह वल्लभभाई थे! एक अंग्रेज़ी पत्रकार ने ठीक ही लिखा था कि उनकी मुखमुद्रा से उनकी आन्तरिक शक्ति का पता चलता है। उनके व्यंग्य अपने विष के लिए अमर हैं। गाँधीजी से लेकर साधारण अनुयायी तक किसी पर व्यंग्य करने का अवसर आने पर व्यंग्य करने से नहीं चूकते। तूफ़ानों में वह चट्टान की भाँति अचल थे, विरोधी के प्रति लोहे की भाँति सख्त। गाँधीजी का इस्पात का लचीलापन उनमें नहीं था। विरोधी, चाहे वे काँग्रेस के अन्दर के हों या बाहर के, उनसे डरते थे। क्योंकि यह वह आदमी थे जो पीछे लगे, तो जड़ उखाड़कर फेंक दे। निश्चय ही संगठन और कार्य की उनमें अपूर्व क्षमता थी और गुजरात में उनकी शक्ति को ललकारनेवाला कोई पैदा नहीं हुआ।

फिर इन सबके अलावा वल्लभभाई ने किसानों का दिल देखा था और भारत के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में उन्हें अपना लिया था। वह किसानों को खूब समझते थे और किसानों ने उन्हें खूब समझा। काका कालेलकर ने ठीक ही लिखा– "जब किसान व्याकुल होने लगता है, तब वल्लभभाई का खून खौलने लगता है।" इस दर्द के कारण ही उन्होंने गाँवों को अपना क्षेत्र बनाया और किसानों को अपनाने के लिए स्वयं किसान बन गये।

I कठिन शब्दार्थ :-

की नाई - की तरह; जोखिम - खतरा; जूझना - संघर्ष करना / लड़ना; बल्लियाँ उछलना - बहुत खुश होना; काँख- बगल; काबू - नियंत्रण / बस / अधिकार; निष्ठुर - बेरहम; अनुचर - पीछे चलनेवाला/ दास / नौकर; तात्विक - वास्तविक; कुण्ठित - निराशा; फीकी - बेअसर; आग्नेय - जलता हुआ / क्रोध; सेनानी - सेनापति धुआँधार - बरसनेवाला बादल

II संदर्भ सहित व्याख्या कीजिएः-

1. मेरे साथ कोई खिलवाड़ नहीं कर सकता। मैं किसी ऐसे काम में नहीं पड़ता जिस में खतरा या जोखिम न हो।
2. क्या देख रहा है भाई? लोहा ठंडा हो रहा है। तुझसे नहीं बनता तो मैं भोंक लूँ।
3. शत्रु का लोहा भले ही गरम हो, पर हथौड़ा तो ठंडा रहकर ही काम दे सकता है।
4. मरने-मारने की तालीम सिपाहियों को देने में सरकार को छः महीने लगते हैं। हमें तो सिर्फ़ मरना ही सीखना है। उसमें तीन महीने भी क्यों लगने चाहिए।
5. सरकार यदि यह समझती हो की मेरे पंख काट देने से मैं बिना पंखवाला हो जाऊँगा तो यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि वे तो वर्षा की घार की तरह नित्य नये उगते जानेवाले हैं।

www.tntextbooks.in

III वाक्यों में प्रयोग कीजिए:

आग बबूला होना, शंठ प्रतिशाठयम, मटिया मेट कर देना, शंठ प्रत्यपि सत्यं

IV पर्यायवाची

शिक्षक, फूल, उपहार, संकट, नित्य, वर्षा, विद्यार्थी, शुरू

V एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. वल्लभ भाई पटेल पाठ के लेखक का नाम क्या है?
2. वल्लभ भाई किस प्रकार के व्यक्ति थे?
3. वल्लभ भाई ने अपने जीवन में किन व्यक्तियों के महान गुणों को अपनाया?
4. वल्लभ भाई कब बहुत खुश होते थे?
5. मरने मारने की तालीम देने में सरकार को कितने महीने लगते थे?

VI तीन वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. पटेल और महात्मा के गुणों में क्या अंतर था?
2. वल्लभ भाई की निर्भिकता का परिचय दीजिए।
3. पटेल लोकमान्य के किन गुणों से प्रभावित थे?
4. पटेल का स्वभाव कैसा था?
5. किसानों के प्रति पटेल का विचार क्या था?

VII पाँच-पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. वल्लभ भाई पटेल के जीवन के बारे में पाँच वाक्य लिखिए।
2. खतरे को देखकर वल्लभ भाई क्या अनुभव करते थे?
3. काँख में निकले फोडे का इलाज़ कैसे हुआ?
4. बाारडोली किसानों की परिस्थिति का वर्णन कीजिए।
5. युद्धकाल में पटेल के व्यवहार का वर्णन कीजिए।
6. काका कालेलकर ने वल्लभ भाई पटेल के बारे में क्या कहा था?

www.tntextbooks.in

गद्य

4 विज्ञापन की कला

--- बाबू गलाबराय

लेखक परिचय

बाबू गुलाबराय हिंदी के प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान लेखक और आलोचक हैं। आपने दर्शन-शास्त्र में एम.ए. और एल.एल.बी. भी पास किए हैं। 28 वर्ष तक छतरपुर राज्य के प्राइवेट सेक्रेटरी रह चुके हैं। संस्कृत और अंग्रेज़ी के अतिरिक्त बंगला पर भी अधिकार रखते हैं। पूर्व और पाश्चात्य दर्शन शास्त्र का तुलनात्मक अध्ययन किया है। दो बार हिंदी साहित्य सम्मेलन के अंतर्गत होनेवाली दर्शन परिषद के सभापति भी रह चुके हैं। 'नवरस' आपकी सर्वश्रेष्ठ कृति है। 'तर्क-शास्त्र', 'कर्तव्य-शास्त्र' आदि ग्रंथ लिखकर आपने बड़ अभाव को पूर्ति की है। आप हिंदी के निबंधकारों में सम्मानित हैं। आपके निबंध 'फिर निराशा क्यों' में संकलित है। वे भावात्मक और विचारात्मक दोनों कोटि के हैं। 'ठलुआ कलब' और 'मेरी असफलताएँ' आपकी हास्यरस की कृतियाँ हैं, जिनमें 'मेरी असफलताएँ' उनके निजी जीवन से संबंध रखती हैं। यह पुसतक बड़ी लोक प्रिया हुई है। आप हिंदी के आलोचना प्रधान मासिक पत्र, 'साहित्य संदेश' के संपादक भी रहे।

आपकी भाषा सरल और सुबोध होती है। कठिन से कठिन बात को सरल से सरल बनाकर कहने में आप हिंदी में सबसे आगे हैं। संस्कृत की सूक्तियों का प्रयोग बराबर करते हैं।

गुलाबराय कहते हैं कि आजकल विज्ञापन का युग है। विज्ञापनों का कौशलपूर्ण आयोजन और संयोजन कुशल व्यापारी का प्रथम कर्तव्य है।

विज्ञापनबाजी चाहे अखबार छापेखानों के प्रगतिशील युग की देन हो किंतु विज्ञापन की प्रवृत्ति अर्थात् अपने और अपनी चीज़ को ज्वलन्त प्रकाश में लाने की चाह मानव समाज में चिरकाल से वर्तमान है जंगल में आखेट के सहारे जीवन-यात्रा चलाने वाले आदिम पुरुष या स्त्री जो अपने को रंग विरंगे गोदनों से विभूषित करते थे, उनके वे अलंकरण एक-दूसरे आकर्षित करने के रंगीन विज्ञापन के सिवाय और क्या थे? पर्दे के दुर्भेघ दुर्ग में रहनेवाली असूर्यंपश्र्या रमणियाँ भी अपने कंकण, किंकण, नूपुर एवं पायलों की झंकार द्वारा अपने लावण्यमय अस्तित्व

का पुकार-पुकार कर परिचय देती थीं।

नुकीली मूँछे, लहराती-फहराती डाढ़ियाँ, चमकते-दमकते पानीदार हथियार और अलकजाल या तर्कजाल-सी उलझी हुई पेचदार रंगीन पागें आकाश-पाताल के कुलावे मिलानेवाली डींगभरी गर्वोक्तियाँ, ये सब शौर्य सौन्दर्य के आत्म-विज्ञापन ही तो थे।

'चूरन अमल वेत का जिसको खाते हैं, 'बंगाली' गाकर रसिक चूरन बेचनेवाले; भँवर कालीजामने एवं पेड़ के पके पपीते की पुकार लगानेवाले रूपक और अनुप्रासप्रिय अलंकारशास्त्री फेरी वाले; चमन का अंगूर, काश्मीर का सेब, काबुल का सर्दा, कन्धारी अनार, बम्बई के केले, नागपुर के संतरे की आवाज़ लगाकर बिना फीस के भूगोल का पाठ पढ़ाने वाले मेवेफरोश; लैला की उँगलियाँ और मजनू की पसलियाँ कहकर पतली मुलायम ककड़ी बेचेनेवाले लखनऊ के कुँजडे, 'क्या खूब सौदा नकद है, इस हाथ दे उस हाथ ले, साँझ का दिया सबेरे पावे' की लगानेवाले परलोक व धर्म के व्यापारी फकीर; हर माल पाँच आने कहकर अपना सामान लुटानेवाले दिलादार ठेले वाले सौदागर; बादाम का मजा मूँगफली मे उद्घोष करनेवाले चलते-फिरते स्कन्धवाही दूकानदार- ये सब एक से एक बढ़कर विज्ञापन-कला-विशारद ही तो होते हैं किंतु उनकी आवाज़ उनके साथ ही चलती है और वह कुछ ही क्षणों में अनन्त महासागर में विलीन हो जाती है। वह तन से हटा तो मन से भी हटा। खामचेवाले के चले जाने के बाद बालक भी रोना मचलना बंद कर देता है।

नारद मुनि के अवतार स्वरूप समाचार पत्रों की बदौलत, जिनका प्रवेश सूर्योदय की स्वर्ण रश्मियों के साथ घर-घर में हो जाता है और जो जब तक रद्दी-बोतल वाले के बोरे के हवाले न हो जायें घर के कोने-कोने में अधिकार जमाये रहते हैं, विक्रेताओं की आवाज़ घर-घर में गूँजे जाती है औरा विक्रेता लोग अपनी गद्दियों या अपने सोफासेटों का आनंद लेते रहते हैं।

अखबारों और प्रेस के सुलभ साधन होते हुए भी विज्ञापन देना एक कला है। सफल व्यापारी को अपनी वस्तुओं के प्रचार के लिए विज्ञापनों का चक्रव्यूह रचना पड़ता है। एक बार ऐसी भरोसे की वस्तु तैयार कर लेने पर जो कि बाजार में कम्पिटीशन के होते हुए भी अंगद की भाँति दृढ़ता के साथ अपना पैर जमा लेगी वह दिग्विजय की तैयारी कर लेता है। उसका हवाई हमला शुरू हो जाता है। वह ऐसी ही चीज़ तैयार करता है जो समाज की किसी बड़ी जरूरत को पूरा करे और यदि उसकी ज़रूरत न भी हो तो वह अपने प्रोपेगेण्डा के बल पर जरूरत को पैदा कर लेता है। चाय के प्रचार के कारणों में दूध का अपेक्षाकृत अभाव अवश्य है, किंतु उसका असली श्रेय 'गर्मियों में गर्म चाय ठंडक पहुँचाती है", "रोज चाय पीओ, बहुत दिन जीओ" वाली निःस्वार्थ सलाह अथवा उसके प्रचार के रंग-बिरंगे पोस्टरों को है।

विज्ञापनों द्वारा जनता की मनोवृत्ति का निमार्ण होता है। बड़े विज्ञापनदाता 'चट मँगनी पट

www.tntextbooks.in

ब्याह' वाले तात्कालिक प्रभाव में विश्वास नहीं करते। वे तो धैर्य के साथ 'कबहूँ तो दीनदयाल के भनक परेगी कान' वाली सावधानी की नीति में विश्वास करते हैं। वे सामूहिक प्रभाव के फल से भली-भाँती परिचित रहते हैं। बहुत से जहर ऐसे होते हैं जिनका एकदम असर नहीं होता वरन् उनका प्रभाव पूर्व जन्म के कर्मों की भाँति धीरे-धीरे संचित होता रहता है। विज्ञापनों का प्रभाव भी इसी प्रकार का हाता है। थोड़े दिन पूर्व कुछ चीनी दवाइयों के विज्ञापन निकले थे। उनमें एक आदमी दूसरे आदमी के दिमाग में कील ठोकता हुआ दिखाया जाता था। बस विज्ञापन का यही स्वरूप है। विज्ञापनदाता लुहार की-सी एक चोट तो कम लगाता है। किंतु सुनार की-सी धीरे-धीरे चोटें अधिक लगाता रहता है।

झूठे विज्ञापन देनेवालों को विज्ञापन की कला से कुछ अधिक काम लेना पड़ता है। उसके लिए तो उतनी ही चतुराई की आवश्यकता है जितनी कि ठगी में। किंतु अच्छे और उपयोगी माल बनानेवालों को भी इस कला का सहारा लेना पड़ता है। "मुश्क आनस्त कि खुद बिबोयद न कि अत्तर बिगोयद' अर्थात् कस्तूरी वही है जिसकी खुशबू खुद आये, न कि अत्तर कहे कि यह कस्तूरी है। संस्कृत में भी कहा है कि कस्तूरी की सुगन्ध बताने के लिए कसम खाने की जरूरत नहीं पड़ती - "नहिं कस्तूरि-कामोद शपथेन विभाव्यते"। यह सब ठीक है किंतु कस्तूरी की खुश्बू भी अत्तर की दूकान तक ही सीमित रहती है। उसके लिए भी विज्ञापन आवश्यक हो जाता है। विज्ञापन देनेवाले की सबसे जरूरत यह है कि वह यह समझे कि उसकी वस्तु की खपत किस क्षेत्र में होगी। उसी क्षेत्र के अखबारों में वह विज्ञापन दे। खालसा अखबार में रेजर ब्लेडस और सिगरेटों के विज्ञापन देने से लाभ न होगा और न वैष्णवों के अखबारों में चॉकलेट, टॉफी, जेम और जेली का विज्ञापन अपना खर्च निकाल सकेगे। नंगों के देश में धोबी क्या करेगा?

विज्ञापन का ढंग और उसकी विज्ञापन कला का प्रधान अंग है। आजकल विज्ञापन देनेवाला पृथ्वी पर स्वर्ग हीं घसीट लाना चाहता। वह सत्य और वास्तविकता की सीमाओं को जानता है। वह उनसे बाहर नहीं जाता। वह असम्भव या अविश्वासनीय बात नहीं कहता है।

विज्ञापन देनेवालों में कुछ तो सीधा मार्ग पसंद करते हैं और कुछ पेचीदा। लेकिन सीधे और पेचीदे दोनों मार्गों के लिए उसकी कला का ज्ञान आवश्यक होता है। विज्ञापन वाले के लिए यह ज़रूरी नहीं कि वह पूरा पेज मैटर से भर ही दे। बहुत से विज्ञापन देनेवाले दो-एक अंकों के पूरे पेज को कोरा छोड़कर नीचे केवल यही छाप देते हैं कि यह स्थान अमुक कम्पनी के विज्ञापनों के लिए सुरक्षित है। उसका प्रभाव पाठक पर कम-से-कम यह तो विज्ञापन ही है कि यह कंपनी बहुत बड़ी है।

विज्ञापनदाता की सबसे पहली चिंता इस बात की होती है कि उसका विज्ञापन किस प्रकार

पाठक की निगाह को आकर्षित कर ले। आजकल के भागदौड़ के युग में बहुत से लोगों को विज्ञापन पढ़ने की फुर्सत नहीं होती और वे विज्ञापन के पृष्ठों को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं इसलिए लोग विज्ञापन को एक पृष्ठों में देना चाहते हैं जो आवश्यक रूप से पढ़े जाते हो। इससे यह अभिप्राय नहीं कि साधारण पृष्ठों में विज्ञापन देना निरर्थक होता है। ज़रूरत वाला अपनी आवश्यकता की चीज़ को खोज़ ही निकालता है और आँखों के अंधे गाँठ के पूरे बेकार लोगों की कमी नहीं जो समय का भार हलका करने के लिए विज्ञापन के पृष्ठों में भी अपनी दृष्टि रमाया करते हैं। फिर भी आवश्यक रूप से पढ़े जानेवाले पृष्ठों तथा कवरों पर विज्ञापन देना अधिक लाभदायक होगा कयोंकि उन पर चलते फिरते की सहज में दृष्टि पड़ जाती है।

विज्ञापन की सफलता के लिए उत्तम स्थान ही आवश्यक नहीं है वरन् उस स्थान के अनुकूल सुपाठ्य और आकर्षक सामग्री भी जिसके बिना स्थान पर किया हुआ व्यय सार्थक नहीं होता। स्थान क्लास में मैले-कुचैले कपड़ पहने हुए भिखारी को बैठा देना। ऐसा करना 'ऊँची दूकान , फीका पकवान' का उदाहरण बन जायगा। विज्ञापन को आकर्षक बनाने के लिए उसमें मूर्तिमत्ता लाना पहली आवश्यकता है। पाठक की आँखें, बुद्धि और कल्पना पर जोर पड़े बिना, विज्ञापन दाता का अभिप्राय सूखे ईधन की आग की भाँति एक साथ प्रकाशित हो जाय, यही विज्ञापन-कला की सफलता समझना चाहिए। यह मानी हुई बात है कि शब्दों की अपेक्षा तस्वीरें अधिक आकर्षक होती हैं। मूर्त पदार्थ हमारे ध्यान को शीघ्र ही अपनी ओर खींच लेते हैं। तसवीर नित्य ऑर कुछ असाधारण होनी चाहिए। विविधता पाठक के मन में ऊब नहीं पैदा होने देती।

साहित्य की भाँति विज्ञापन कला में तीर से सीधे निशाने का तो महत्व होता है किंतु पाठकों की कौतूहल वृत्ति को जाग्रत करने के लिए बात थोड़े बहुत घुमाउ-फिराउ ढंग से कहने की भी आवश्यकता पड़ती है। उसमें एक विशेष आकर्षण आ जाता है। सीधी बात कहने पर बल अवश्य आ जाता है किंतु वक्रता और घुमाउ-फिराउ में सौन्दर्य अधिक रहता है। भगवान कृष्ण की छबीली झाँकी उनके त्रिभंगी बँकि बिहारी रूप में ही मिलती है।

अखबारी विज्ञापन ही विज्ञापन के एकमात्र साधन नहीं हैं। कुछ लोग कहानियाँ लिखवाते हैं जिससे उनकी वस्तु का विज्ञापन हो। केशरंजन तेल के प्रचार के लिए बँगला में एक जासूसी उपन्यास निकला था। उसमें दिखाया गया था कि एक स्त्री अपने अभिभावकों से पृथक हो गई थी। उसका पता इस तरह लगा कि उसके सर में पड़े केशरंजन तेल की सुगंध बाहर तक फैली हुई थी। उस घर की तलाशी लेने पर उस स्त्री का पता चल गया। डायरी, कैलेण्डर, पेपरवेट , तश्तरियाँ आदि भेंट करना तथा और भी अनेकानेक साधन हैं।

डायरी और सूचीपत्रों में ऐसी ज्ञातव्य बातें लिखी जाती हैं जिनके लिए लोग उन्हें सुरक्षित रखें। कौन नहीं चाहेगा कि उसके पास पन्ना हो क्योंकि पन्ने की आवश्यकता को तो कविवर

बिहारी भी नहीं मिटा सके थे।(पन्ना ही तिथि पाइए वा घर के चहुँ पास, निसदिन पूनो ही रहे आनन ओप उजास) कौन नहीं चाहेगा कि उसके पास एक-एक दिन की तन्ख्वाह का तुरंत हिसाब लगाने नकसा हो? छुट्टियों की सूची सभी अपने पास रखना चाहते हैं। डाकखाने की पार्सल वगैरह की रेटों की जानकारी से सभी लोग लाभ उठाना चाहते हैं।

आजकल तो विज्ञापन वाले शहर की दीवारों को रंग मारते हैं किंतु उनकी विशेष कदर नहीं होती। इन मुफ्त या चोरी के विज्ञापनों में तो किसी की दीवार किराये पर ले लेना अधिक लाभदायक तथा सज्जनोचित है।

ट्रेन, बस, रेलवे स्टेशन की दीवारें आदि नोटिसों के लिए भित्ति का काम देती हैं। बहुत से लोग अखबार केवल विज्ञापन की सुविधा के लिए निकालते है क्योंकि उसमें एक पैसे के टिकट से काम चल जाता है।

आजकल के सिनेमा प्रेमी संसार के लिए स्लाइडों द्वारा विज्ञापन देना विशेष रूप से सफल होता है क्योंकि स्लाइड का मैटर बरबस आँखों के सामने आ जाता है। किंतु कभी-कभी जब इनकी संख्या बढ़ जाती है तब दर्शक लोग विज्ञापन की अपेक्षा फिल्म देखने के लिए अधिक उत्सुक होते हैं।

स्लाइड की अपेक्षा फिल्म ज्यादा आकर्षक होती है। इसीलिए बड़ी-बड़ी कम्पनियों के चलते हुए कारखानों की फिल्में दिखाई जाती हैं जिससे कि पाठकों के मन पर उनके कार्य व्यापार की विशालता का प्रभाव पड़े। बंगाल केमीकल, कोटोजम और डालडा कंपनियों के कारखानों की फिल्मों का प्रदर्शन हो चुका है। कोई-कोई मनचले लोग हवाई जहाज द्वारा विज्ञापन वितरण कराते हैं। ये सब ग्राहकों को आकर्षित करने के विभिन्न रूप हैं।

आजकल विज्ञापन का युग है। बहुत सी विदेशी कंपनियों तो तीन चौथाई रुपया विज्ञापन में खर्च करना चाहती हैं और एक चौथाई रुपया वस्तु के बनाने में। आजकल की व्यापारिक सफलता का अधिकांश श्रेय विज्ञापनों को है। विज्ञापनों का कौशल पूर्ण आयोजन और संयोजन कुशल व्यापारी का प्रथम कर्तव्य है। इसके लिए अनुभव, शिक्षा और सत्परामर्श की आवश्यकता है।

I कठिन शब्दार्थ :-

अभाव - कमी; प्रवृत्ति - आरंभ, मन का झुकाव; गोदना - ताना मारना, लुभाना, प्रेरित करना; असूर्यंपश्र्या - जिन पर सूरज की धूप न पड़ा हो; की भाँती - के जैसे; विविधता - अनेकता; घोषण करना - ऐलान करना; साबित करना - प्रमाणित करना; कदर करना -आदर

www.tntextbooks.in

करना, इज्जत देना; वितरण कराना - बँटवाना

II संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए:-

1. पर्दे के दुर्भेदय दुर्ग में रहनेवाली असूर्यपश्र्या रमणियाँ भी अपने कंकण, किंकण, नूपुर एवं पायलों की झंकार द्वारा अपने लावण्यमय अस्तित्व का पुकार-पुकार कर परिचय देती थी।

2. खोमचेवाले के चले जाने के बाद बालक भी रोना-मचलना बंद कर देता है।

3. नंगों के देश में धोबी क्या करेगा?

4. ऐसा करना 'ऊँची दूकान, फीका पकवान', का उदाहरण बन जाएगा।

5. तस्वीर नित्य और कुछ असाधारण होनी चाहिए। विविधता पाठक के मन में ऊब नहीं पैदा होने देती।

6. इसी सहज आकषर्ण का सहारा लेकर वे बड़े सुंदर चित्र देते हैं।

7. इस के लिए अनुभव, शिक्षा और सत्यपरामर्श की आवश्यकता है।

III मुहावरों का वाक्यों में प्रयोग कीजिए:-

घर-घर में गूँजना, अधिकार जमाना, पैर जमाना, चट मँगनी पट ब्याह, कलई खुल जाना, कसम खाना, घुमाउ-फिरउ ढंग से कहना, कहरे पानी पैठना, शनी की सी क्रूर दृष्टि देखना, पृथक हो जाना, निसदिन पूनो ही रहै, कदर होना, विलीन हो जाना, चंगुल में फँसना, घोषणा करना

IV एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. विज्ञापन की कला लेख के लेखक कौन है?

2. गुलाबराय के अनुसार आजकल कौन-सा युग है?

3. विज्ञापन बाजी किन साधनों के प्रगतिशील युग की देन है?

4. सफल व्यापरी को अपनी वस्तुओं के प्रचार के लिए कौन-सा चक्रव्यूह रचना पड़ता है?

www.tntextbooks.in

5. चाय के प्रचार में कौन सी युक्ति अपनाई जाती है?

6. झूठे विज्ञापनवाले क्या करते हैं?

7. विज्ञापन कला का प्रधान अंग क्या है?

8. विज्ञापन दाता की सबसे पहली चिंता किस बात को लेकर होती है?

9. विज्ञापन को आकर्षक बनाने के लिए पहली आवश्यकता क्या होती है?

10. डायरी और सूचीपत्रों को ग्राहक सुरक्षित रखने के लिए क्या करते हैं?

VI अनुच्छेद में उत्तर लिखिए:-

1. विज्ञापन देना एक कला है। सोदाहरण समझाइए।

2. विज्ञापन की आवश्यकता पर एक लेख लिखिए।

3. झूठे विज्ञापनवाले किस सिद्धांत पर चलते हैं?

www.tntextbooks.in

गद्य 5 घुमक्कड़ जिज्ञासा

— राहुल सांकृत्यायन

लेखक परिचय

महापंडित राहुल सांकृत्यायन विश्वविख्यात विद्वान और लेखक थे। बचपन में उनका नाम केदारनाथ पाण्डे था और परिव्राजक बनने पर राम उदारदास कहलाये। काशी और तिरुमळिशै (तमिलनाडु) आदि स्थानों में संस्कृत का अध्ययन किया, पीछे बौद्ध धर्म में राहुल सांकृत्यायन नाम से दीक्षित हुए तथा श्रीलंका जाकर त्रिपिटकाचार्य की उपाधि प्राप्त की। वह बहु-भाषाविद और जन्मजात घुमक्कड़ थे। घुमक्कड़ी के दौरान में भी उनकी लेखनी अविराम गति से चलती रही थी। ढेरों पुस्तकें उनकी प्रकाशित हो चुकी हैं। यात्रा, कहानी, उपन्यास से लेकर दर्शन-विज्ञान, राजनीति तक- प्रायः हर विषय पर उन्होंने अपनी लेखनी चलायी थी। संसार के अधिकांश हिस्सों की यात्रा कर चुके थे।

'घुमक्कड़ी शास्त्र' नामक पुस्तक में राहुलजी ने घुमक्कड़ी का शास्त्रीय विवेचन किया है, और इस प्रकार उन्होंने जैसे एक अभिनव 'शास्त्र' की ही रचना कर डाली है। निस्संदेह उससे भावी घुमक्कड़ों को बड़ी प्रेरणा मिलेगी और साथ ही मार्गदर्शन भी मिलेगा।

प्रस्तुत लेख उसी पुस्तक का प्रथम अध्याय है। प्राचीन काल से ही उदाहरण देते हुए लेखक ने उसमें घुमक्कड़ी की महिमा और उपयोगिता समझायी है और यह सिद्ध किया है कि मेधावी घुमक्कड़ों से मानव-समाज का बड़ा कल्याण होता है।

संसार रूपी पुस्तक में ही संपूर्ण ज्ञान निहित है। और मनुष्य की 'घुमक्कड़-जिज्ञासा' इस ज्ञान को प्राप्त करने का एकमात्र साधन है। मानव जाति का इतिहास इस बात का गवाह है कि उसके समस्त ज्ञान एवं विकास का मूल आधार यह 'घुमक्कड़ जिज्ञासा' ही थी। इतिहास यह सिद्ध करता है कि किसी भी देश या जाति के पतन का मुख्य कारण 'घुमक्कड़ जिज्ञासा' का अभाव ही था। यह पाठ पढ़कर आप स्वयं निर्णय कीजिए कि 'घुमक्कड़ जिज्ञासा' हमारे लिए कितनी ज़रूरी है।

शास्त्रों में जिज्ञासा ऐसी चीज़ के लिए होनी बतलायी गयी है, जो कि श्रेष्ठ हो तथा व्यक्ति और समाज सबके लिए परम हितकारी हो। व्यास ने अपने शास्त्र में ब्रह्मा को सर्वश्रेष्ठ मानकर उसे जिज्ञासा का विषय बनाया। व्यास-शिष्य जैमिनी ने धर्म को श्रेष्ठ माना। पुराने ऋषियों से मतभेद रखना हमारे लिए पाप की वस्तु नहीं है। मेरी समझ में दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वस्तु है घुमक्कड़ी। घुमक्कड़ी से बढ़कर व्यक्ति और समाज का कोई हितकारी नहीं हो सकता। कहा जाता है कि ब्रह्मा ने सृष्टि को पैदा, धारण और नाश करने का ज़िम्मा अपने ऊपर लिया है। पैदा करना और नाश करना दूर की बातें हैं, उनकी यथार्थता सिद्ध करने के लिए न प्रत्यक्ष प्रमाण सहायक हो सकता है, न अनुमान ही। हाँ, दुनिया के धारण की बात तो निश्चय ही न ब्रह्मा के ऊपर है, न विष्णु के और न शंकर ही के ऊपर। दुनिया – दुख में हो, चाहे सुख में – सभी समय यदि सहारा पाती है, तो घुमक्कड़ों की ही ओर से। प्राकृतिक आदिम मनुष्य परम घुमक्कड़ था। खेती, बाग़वानी तथा घर-द्वार से मुक्त वह आकाश के पक्षियों की भाँति पृथ्वी पर सदा विचरण करता था, जाड़े में यदि इस जगह था, तो गर्मियों में वहाँ से दो सौ कोस दूर।

आधुनिक काल में घुमक्कड़ों के काम की बात कहने की आवश्यकता है, क्योंकि लोगों ने घुमक्कड़ों की कृतियों को चुराके उन्हें गला फाड़-फाड़कर अपने नाम से प्रकाशित किया, जिससे दुनिया जानने लगी कि वस्तुतः तेली के कोल्हू के बैल ही दुनिया में सब कुछ करते हैं। आधुनिक विज्ञान में चार्लस डारविन का स्थान बहुत ऊँचा है। उसने प्राणियों की उत्पत्ति और मानव वंश के विकास पर ही अद्वितीय खोज नहीं की, बल्कि सारे विज्ञानों को उससे सहायता मिली। कहना चाहिए कि सभी विज्ञानों को डारविन के प्रकाश में दिशा बदलनी पड़ी। लेकिन क्या डारविन अपने महान आविष्कारों को कर सकता था, यदि उसने घुमक्कड़ी का व्रत नहीं लिया होता?

मैं मानता हूँ, पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ी का रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फ़ोटो देखकर आप हिमालय के देवदार के गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरों के सौंदर्य, उनके रूप, उनकी गंध का अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओं से आपको उस बूँद से भेंट नहीं हो सकती जो कि एक घुमक्कड़ को प्राप्त होती है। अधिक से अधिक यात्रा-पाठकों के लिए यही कहा जा सकता है कि दूसरे अन्धों की अपेक्षा उन्हें थोड़ा आलोक मिल जाता है और साथ ही ऐसी प्रेरणा भी मिल सकती है, जो स्थाई नहीं, तो कुछ दिनों के लिए उन्हें घुमक्कड़ बना सकती है। घुमक्कड़ क्यों दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति है? इसीलिए कि इसी ने आज की दुनिया को बनाया है। यदि आदिम पुरुष एक जगह नदी या तालाब के किनारे गर्म मुल्क में पड़े रहते, तो वह दुनिया को आगे नहीं ले जा सकते थे। आदमी की घुमक्कड़ी ने बहुत बार खून की नदियाँ बहायी हैं, इसमें सन्देह नहीं, और घुमक्कड़ों से हम हर्गिज़ नहीं चाहेंगे कि वह खून के रास्ते को पकड़े, किन्तु अगर घुमक्कड़ों के काफ़िले न आते-जाते, तो सुस्त मानव जातियाँ सो जातीं, और पशु से ऊपर नहीं उठ पातीं। आदिम घुमक्कड़ों में से आर्यों, शकों, हूणों

ने क्या-क्या किया, अपने खूनी पथों द्वारा मानवता के पथ को जिस तरह प्रशस्त किया, इसे इतिहास में हम उतना स्पष्ट वर्णित नहीं पाते, किन्तु मंगोल घुमक्कड़ों की करामतों को तो हम अच्छी तरह जानते हैं। बारूद, तोप, कागज़, छापाखाना, दिग्दर्शक, चश्मा यही चीज़ें थीं, जिन्होंने पश्चिम में विज्ञान-युग का आरंभ कराया, और इन चीज़ों को वहाँ ले जानेवाले मंगोल घुमक्कड़ थे।

कोलम्बस और वास्को-द-गामा भी घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता खोला। अमेरिका अधिकतर निर्जन-सा पड़ा था। एशिया के कूप-मंडूकों को घुमक्कड़-धर्म की महिमा भूल गयी, इसलिए उन्होंने अमेरिका पर अपनी झंड़ी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों के पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था! चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इनको इतना अक़ल नहीं आयी कि जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते। आज अपनी 40-50 करोड़ की जनसंख्या के भार से भारत और चीन की भूमि दबी जा रही है, और आस्ट्रेलिया में एक करोड़ भी आदमी नहीं हैं। आज एशियायियों के लिए आस्ट्रेलिया का द्वार बन्द है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथ की चीज़ थी। क्यों भारत और चीन आस्ट्रेलिया की अपार संपत्ति और अमित भूमि से वंचित रह गये? इसलिए कि वह घुमक्कड़ धर्म से विमुख थे, उसे भूल चुके थे। हाँ, मैं इसे भूलना ही कहूँगा, क्योंकि किसी समय भारत और चीन ने बड़े-बड़े नामी घुमक्कड़ पैदा किये। वे भारतीय घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने दक्षिण-पूरब में लंका, बर्मा, मलाया, यवद्वीप, श्याम, काम्बोज, चम्पा, बोर्नियो और सेलीबीज़ ही नहीं, फ़िलिपाइन तक का धावा मारा था, और एक समय तो जान पड़ा कि न्यूज़ीलैण्ड और आस्ट्रेलिया भी बृहत्तर भारत का अंग बननेवाले हैं; लेकिन कूप-मंडूकता, तेरा सत्यानाश हो! इस देश के बुद्धुओं ने उपदेश करना शुरू किया कि समुन्दर के खारे पानी और हिन्दू धर्म में बड़ा वैर है, उसके छूने मात्र से वह नमक की पुतली की तरह गल जाएगा। इतना बतला देने पर क्या कहने की आवश्यकता है कि समाज के कल्याण के लिए घुमक्कड़ धर्म कितनी आवश्यक चीज़ है? जिस जाति या देश ने इस धर्म को अपनाया, वह चारों फलों का भागी हुआ, और जिसने इसे दुराया, उसके लिए नरक में भी ठिकाना नहीं। आखिर घुमक्कड़ धर्म को भूलने के कारण ही हम सात शताब्दियों तक धक्का खाते रहे, ऐरे-ग़ैरे जो भी आये, हमें चार लात लगाते गये।

शायद किसी को सन्देह हो कि मैंने इस शास्त्र में जो युक्तियाँ दी हैं, वे सभी लौकिक तथा शास्त्रबाह्य हैं। अच्छा, तो धर्म से प्रमाण लीजिए। दुनिया के अधिकांश धर्मनायक घुमक्कड़ रहे। धर्माचार्यों में आचार-विचार, बुद्धि और तर्क तथा सहृदयता में सर्वश्रेष्ठ बुद्ध घुमक्कड़ राज थे। यद्यपि वह भारत से बाहर नहीं गये, लेकिन वर्षा के तीन मासों को छोड़कर एक जगह रहना वह पाप समझते थे, वह अकेले ही घुमक्कड़ नहीं थे, बल्कि आरंभ ही में अपने शिष्यों को उन्होंने

www.tntextbooks.in

कहा था– 'चरथ भिक्खवे! चारिकं' जिसका अर्थ है– 'भिक्षुओ! घुमक्कड़ी करो।' बौद्ध भिक्षुओं ने अपने गुरु की शिक्षा को कितना माना, क्या इसे बताने की आवश्यकता है? क्या उन्होंने पश्चिम में मकदूनिया तथा मिस्र से पूरब में जापान तक, उत्तर में मंगोलिया से लेकर दक्षिण में बाली आदि द्वीपों तक को रौंदकर रख नहीं दिया?

जिस बृहत्तर भारत के लिए हरेक भारतीय को उचित अभिमान है, क्या उसका निर्माण उन्हीं घुमक्कड़ों की चरण-धूलि ने नहीं किया? केवल बुद्ध ने ही अपनी घुमक्कड़ी से प्रेरणा नहीं दी, बल्कि घुमक्कड़ों का इतना ज़ोर बुद्ध से एक-दो शताब्दियों पूर्व भी था, जिसके ही कारण बुद्ध-जैसे घुमक्कड़ राज इस देश में पैदा हो सके। उस वक्त पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ तक जम्बू-वृक्ष की शाखा ले अपनी प्रखर प्रतिभा का जौहर दिखाती, बाद में कूप-मण्डूकों को पराजित करतीं और सारे भारत में मुक्त होकर विचरा करती थीं।

कोई-कोई महिलाएँ पूछती हैं– क्या स्त्रियाँ भी घुमक्कड़ी कर सकती हैं, क्या उनको भी इस महाव्रत की दीक्षा लेनी चाहिए? इसके बारे में तो अलग अध्याय ही लिखा जानेवाला है, किन्तु यहाँ इतना कह देना है कि घुमक्कड़ धर्म संकुचित धर्म नहीं है, जिसमें स्त्रियों के लिए स्थान नहीं हो। स्त्रियाँ इसमें उतना ही अधिकार रखती हैं, जितना पुरुष। यदि वह जन्म सफल करके व्यक्ति और समाज के लिए कुछ करना चाहती हैं, तो उन्हें भी दोनों हाथों इस धर्म को स्वीकार करना चाहिए। घुमक्कड़ी धर्म से छुड़ाने के लिए ही पुरुष ने बहुत-से बन्धन नारी के रास्ते में लगाये हैं। बुद्ध ने सिर्फ़ पुरुषों के लिए घुमक्कड़ी करने का आदेश नहीं दिया, बल्कि स्त्रियों के लिए भी उनका वही उपदेश था।

भारत के प्राचीन धर्मों में जैन धर्म भी है। जैन धर्म के प्रतिष्ठापक श्रमण महावीर कौन थे? वह भी घुमक्कड़ राज थे। घुमक्कड़ धर्म के आचरण छोटी से बड़ी तक सभी बाधाओं और उपाधियों को उन्होंने त्याग दिया था– घर-द्वार और नारी-संतान ही नहीं, वस्त्र का भी वर्जन कर दिया था। 'करतलभिक्षा, तरुतलवासः' तथा दिग्-अम्बर को उन्होंने इसलिए अपनाया था कि निर्द्वन्द्व विचरण में कोई बाधा न रहे। श्वेतांबर बन्धु दिगम्बर कहने के लिए नाराज़ न हों। वस्तुतः हमारे वैशालिक महान घुमक्कड़ कुछ बातों में दिगम्बरों की कल्पना के अनुसार थे और कुछ बातों में श्वेतांबरों के उल्लेख के अनुसार। लेकिन इसमें तो दोनों संप्रदाय और बाहर के मर्मज्ञ भी सहमत हैं कि भगवान महावीर दूसरी-तीसरी नहीं, प्रथम श्रेणी के घुमक्कड़ थे। वह आजीवन घूमते ही रहे। वैशाली में जन्म लेकर विचरण करते हुए पावा में उन्होंने अपना शरीर छोड़ा। बुद्ध और महावीर से बढ़कर यदि कोई त्याग, तपस्या और सहृदयता का दावा करता है, तो मैं उसे केवल दम्भी कहूँगा। आजकल कुटिया या आश्रम बनाकर तेली के बैल की तरह कोल्हू से बन्धे कितने ही लोग अपने को अद्वितीय महात्मा कहते हैं या चेलों से कहलवाते हैं; लेकिन मैं तो

कहूँगा घुमक्कड़ी को त्यागकर यदि महापुरुष बन जाता, तो फिर ऐसे लोग गली-गली में देखे जाते। मैं तो जिज्ञासुओं को खबरदार कर देना चाहता हूँ कि वे ऐसे मुलम्मेवाले महात्माओं और महापुरुषों के फेर से बचे रहें। वे स्वयं तेली के बैल तो हैं ही, दूसरों को भी अपने ही जैसा बना रखेंगे।

बुद्ध और महावीर-जैसे सृष्टिकर्ता ईश्वर से इनकारी महापुरुषों की घुमक्कड़ी की बात से यह नहीं मान लेना होगा कि दूसरे लोग ईश्वर के भरोसे गुफ़ा या कोठरी में बैठकर सारी सिद्धियाँ पा गये या पा जाते हैं। यदि ऐसा होता, तो शंकराचार्य, जो साक्षात् ब्रह्म स्वरूप थे, क्यों भारत के चारों कोनों की खाक छानते फिरे? शंकर को शंकर किसी ब्रह्म ने नहीं बनाया, उन्हें बड़ा बनानेवाला था यही घुमक्कड़ी धर्म। शंकर बराबर घूमते रहे– आज केरल देश में थे, तो कुछ ही महीने बाद मिथिला में और अगले साल काश्मीर या हिमालय के किसी दूसरे भाग में। शंकर तरुणाई में ही शिवलोक सिधार गये, किन्तु थोड़े-से जीवन में उन्होंने सिर्फ़ तीन भाष्य ही नहीं लिखे, बल्कि अपने आचरण से अनुयायियों को वह घुमक्कड़ी का पाठ पढ़ा गये कि आज भी उसका पालन करनेवाले सैकड़ों मिलते हैं।

वास्को-द-गामा के भारत पहुँचने से बहुत पहिले शंकर के शिष्य मास्को और यूरोप तक पहुँचेथे। उनके साहसी शिष्य सिर्फ़ भारत के चार धामों से ही सन्तुष्ट नहीं थे, बल्कि उनमें से कितनों ने जाकर बाकू (रूस) में धूनी रमायी। एक ने पर्यटन करते हुए वोल्गा तट पर निज़ीनोवोग्राद के महा-मेले को देखा। फिर क्या था, कुछ समय के लिए वहीं ठहर गया और उसने ईसाइयों के भीतर कितने ही अनुयायी पैदा कर लिये, जिनकी संख्या भीतर ही भीतर बढ़ती इस शताब्दी के आरंभ में कुछ लाख तक पहुँच गयी थी।

भला हो रामानन्द और चैतन्य का, जिन्होंने पंक से पंकज बनकर आदिकाल से चले आते महान घुमक्कड़ धर्म की फिर से प्रतिष्ठापना की, जिसके फलस्वरूप प्रथम श्रेणी के तो नहीं, किन्तु द्वितीय श्रेणी के बहुत-से घुमक्कड़ उनमें भी पैदा हुए। ये बेचारे बाकू की बड़ी ज्वालामाई तक कैसे जाते, उनके लिए तो मानसरोवर तक पहुँचना भी मुश्किल था। अपने हाथ से खाना बनाना, माँस-अंडे से छू जाने पर भी धर्म का चला जाना, हाड़-तोड़ सर्दी के कारण हर लघु-शंका के बाद बर्फ़ीले पानी से हाथ धोना और हर महा-शंका के बाद स्नान करना तो यमराज को निमन्त्रण देना होता, इसीलिए बेचारे फूँक-फूँककर ही घुमक्कड़ी कर सकते थे। इसमें किसे उज्र हो सकता है कि शैव हो या वैष्णव, वेदान्ती हो या सदान्ती, सभी को आगे बढ़ाया केवल घुमक्कड़ धर्म ने? बौद्ध धर्मरूपी महान घुमक्कड़ धर्म का भारत से लुप्त होना क्या था, तब से कूप-मंडूकता का हमारे देश में बोलबाला हो गया। सात शताब्दियाँ बीत गयीं, और इन सातों

शताब्दियों में दासता और परतंत्रता हमारे देश में पैर तोड़कर बैठ गयीं, यह कोई आकस्मिक बात नहीं थी। समाज के अगुओं ने चाहे कितना ही कूप-मंडूक बनाना चाहा, लेकिन इस देश में माई के लाल जब-तब पैदा होते रहे, जिन्होंने कर्मपथ की ओर दृष्टिपात किया। हमारे इतिहास में गुरुनानक का समय दूर का नहीं है, लेकिन अपने समय के वह महान घुमक्कड़ थे। उन्होंने भारत-भ्रमण को ही पर्याप्त नहीं समझा और ईरान और अरब तक का धावा मारा।

घुमक्कड़ी किसी बड़े योग से कम सिद्धिदायिनी नहीं है, और निर्भीक तो वह एक नम्बर का बना देती है। घुमक्कड़ नानक मक्के में जाकर काबा की ओर पैर फैलाकर सो गये, मुल्लों में इतनी सहिष्णुता होती तो आदमी होते। उन्होंने एतराज किया और पैर पकड़कर दूसरी ओर करना चाहा। उनको यह देखकर बड़ा अचरज हुआ कि जिस तरफ़ घुमक्कड़ नानक का पैर घूम रहा है, काबा भी उसी ओर चला जा रहा है। यह है चमत्कार! आज के सर्वशक्तिमान, किन्तु कोठरी में बन्द महात्माओं में है कोई ऐसा, जो नानक की तरह हिम्मत और चमत्कार दिखलाए?

दूर शताब्दियों की बात छोड़िए, अभी शताब्दी भी नहीं बीती, इस देश से स्वामी दयानन्द को बिदा हुए। स्वामी दयानन्द को ऋषि दयानन्द किसने बनाया? इसी घुमक्कड़ी धर्म ने। उन्होंने भारत के अधिकांश भागों का भ्रमण किया; पुस्तक लिखते, शास्त्रार्थ करते वह बराबर भ्रमण करते रहे। शास्त्रों को पढ़कर काशी के बड़े-बड़े पंडित महा-महा मंडूक बनने में ही सफल होते रहे, इसलिए दयानन्द को मुक्त बुद्धि और तर्कप्रधान बनाने का कारण शास्त्रों से अलग कहीं ढूँढना होगा। और वह है उनकी निरंतर घुमक्कड़ी धर्म का सेवन। उन्होंने समुद्र-यात्रा करने, द्वीपांतरों में जाने के विरुद्ध

जितनी थोथी दलीलें दी जाती थीं, सबको चिद्दी-चिद्दी उड़ा दिया और बतलाया कि मनुष्य स्थावर-वृक्ष नहीं है, वह जंगम प्राणी है। चलना मनुष्य का धर्म है, जिसने इसे छोड़ा वह मनुष्य होने का अधिकारी नहीं है।

बीसवीं शताब्दी के भारतीय घुमक्कड़ी की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं। इतना लिखने से मालूम हो गया होगा कि संसार में यदि कोई अनादि सनातन धर्म है, तो वह घुमक्कड़ धर्म है। लेकिन वह संकुचित संप्रदाय नहीं है, वह आकाश की तरह महान है, समुद्र की तरह विशाल है। जिन धर्मों ने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, वह केवल घुमक्कड़ धर्म ही के कारण। प्रभु ईसा घुमक्कड़ थे, उनके अनुयायी भी ऐसे घुमक्कड़ थे जिन्होंने ईसा के संदेश को दुनिया के कोने-कोने में पहुँचाया। यहूदी पैग़म्बरों ने घुमक्कड़ी धर्म को भुला दिया, जिसका फल शताब्दियों तक उन्हें भोगना पड़ा। उन्होंने अपने जाने, चूल्हे से सिर निकालना नहीं चाहा।

घुमक्कड़ धर्म की ऐसी भारी अवहेलना करनेवाली की जैसी गति होनी चाहिए वैसी गति उनकी हुई। चूल्हा हाथ से छूट गया और सारी दुनिया में घुमक्कड़ी करने को मज़बूर हुए, जिसने आगे उन्हें मारवाड़ी सेठ बनाया; या यों कहिए कि घुमक्कड़ धर्म की एक छींट पड़ जाने से मारवाड़ी सेठ भारत के यहूदी बन गये।

जिसने इस धर्म की अवहेलना की उसे रक्त के आँसू बहाने पड़े। अभी इन बेचारों ने बड़ी कुर्बानी के बाद और दो हज़ार वर्ष की घुमक्कड़ी के तजुर्बे के बल पर फिर अपना स्थान प्राप्त किया। आशा, है, स्थान प्राप्त करने से वह पुनः चूल्हे में सिर रखकर बैठनेवाले नहीं बनेंगे। सनातन धर्म से पतित यहूदी जाति को महान पाप का प्रायश्चित या दंड घुमक्कड़ी के रूप में भोगना पड़ा और अब उन्हें पैर रखने का स्थान मिला है। यह घुमक्कड़ी धर्म ही है, जिसने यहूदियों को केवल व्यापार-कुशल और उद्योग-निष्णात ही नहीं बनाया, बल्कि विज्ञान, दर्शन, साहित्य, संगीत आदि सभी क्षेत्रों में चमकने का मौक़ा दिया। समझा जाता था कि व्यापारी तथा घुमक्कड़ जहूदी युद्ध-विद्या में कच्चे निकलेंगे; लेकिन उन्होंने पाँच-पाँच अरबी साम्राज्यों की सारी शेखी को धूल में मिलाकर चारों खाने चित कर दिया और सबने नाक रगड़कर उनसे शांति की भिक्षा माँगी।

इतना कहने से अब कोई सन्देह नहीं रह गया कि घुमक्कड़ धर्म से बढ़कर दुनिया में धर्म नहीं है। धर्म भी छोटी बात है, उसे घुमक्कड़ के साथ लगाना 'महिमा घटी समुद्र की, रावण बसा पड़ोस' वाली बात होगी। घुमक्कड़ होना आदमी के लिए परम सौभाग्य की बात है। यह पन्थ अपने अनुयायी को मरने के बाद किसी भी काल्पनिक स्वर्ग का प्रलोभन नहीं देता, इसके लिए तो कह सकते हैं– "क्या खूब सौदा नक़द है, इस हाथ दे उस हाथ ले।"

घुमक्कड़ी वही कर सकता है, जो निश्चिंत है। किन साधनों से संपन्न होकर आदमी घुमक्कड़ बनने का अधिकारी हो सकता है, यह आगे बतलाया जाएगा; किन्तु घुमक्कड़ी के लिए चिंताहीन होना आवश्यक है, और चिन्ताहीन होने के लिए घुमक्कड़ी भी आवश्यक है। दोनों अन्योन्याश्रित होना दूषण नहीं, भूषण है। घुमक्कड़ी से बढ़कर सुख कहाँ मिल सकता? आखिर चिन्ताहीनता सुख का सबसे स्पष्ट रूप है। घुमक्कड़ी में कष्ट भी होते हैं; लेकिन उन्हें उसी तरह समझिए जैसे भोजन में मिर्च। मिर्च में यदि कड़वाहट न हो, तो क्या कोई मिर्च-प्रेमी उसमें हाथ भी लगाएगा? वस्तुतः घुमक्कड़ी में कभी-कभी होनेवाले कड़वे अनुभव उसके रस को और बढ़ा देते हैं, उसी तरह जैसे काली पृष्ठभूमि में चित्र अधिक खिल उठता है।

व्यक्ति के लिए घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई नकद धर्म नहीं है। जाति का भविष्य घुमक्कड़ों

पर निर्भर करता है, इसलिए मैं कहूँगा कि हरेक तरुण और तरुणी को घुमक्कड़ व्रत ग्रहण करना चाहिए; इसके विरुद्ध दिये जानेवाले सारे प्रमाणों को झूठ और व्यर्थ का समझना चाहिए। यदि माता-पिता विरोध करते हैं, तो समझना चाहिए कि वह भी प्रह्लाद के माता-पिता के नवीन संस्करण हैं। यदि हित-बांधव बाधा उपस्थित करते हैं, तो समझना चाहिए कि वे दिवांध हैं। यदि धर्माचार्य कुछ उल्टा-सीधा तर्क देते हैं, तो समझ लेना चाहिए कि इन्हीं ढोंगों और ढोंगियों ने संसार को कभी सरल और सच्चे पथ पर चलने नहीं दिया। यदि राज्य और राजसी नेता अपनी कानूनी रुकावटें डालते हैं, तो हज़ारों बार की तजुर्बा की हुई बात है कि महानदी के वेग की तरह घुमक्कड़ी की गति को रोकनेवाला दुनिया में कोई पैदा नहीं हुआ। बड़े-बड़े कठोर पहरेवाली राज्य-सीमाओं को घुमक्कड़ों ने आँख में धूल झोंककर पार कर दिया। मैंने स्वयं ऐसा एक से अधिक बार किया है। (पहली तिब्बत-यात्रा में अंग्रेज़ों, नेपाल राज्य और तिब्बत के सीमा-रक्षकों की आँख में धूल झोंककर मुझे जाना पड़ा था।)

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि यदि कोई तरुण-तरुणी घुमक्कड़ धर्म की दीक्षा लेता है– यह मैं अवश्य कहूँगा कि यह दीक्षा वही ले सकता है जिसमें बहुत भारी मात्रा में हर तरह का साहस है– तो उसे किसी की बात नहीं सुननी चाहिए, न पिता के भय की और उदास होने की, न भूल से ब्याह लायी अपनी पत्नी के रोने-धोने की फ़िक्र करनी चाहिए और न किसी तरुणी को अपने पति के कलपने की। बस, शंकराचार्य के शब्दों में यही समझना चाहिए-निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः? और मेरे गुरु कपोतराज के वचन को अपना पथ-प्रदर्शक बनाना चाहिए–

"सैर कर दुनिया की गाफ़िल, ज़िन्दगानी फिर कहाँ?
ज़िन्दगी गर कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ?"

दुनिया में मनुष्य-जन्म एक ही बार होता है और जवानी भी केवल एक ही बार आती है। साहसी और मनस्वी तरुण-तरुणियों को इस अवसर से हाथ नहीं धोना चाहिए। कमर बाँध लो भावी घुमक्कडो! संसार तुम्हारे स्वागत के लिए बेकरार है!

I. कठिन शब्दार्थ

जिज्ञासा - जानने की इच्छा; घुमक्कड़ - घूमते रहनेवाला; आदिम - आदि (शुरू) में उत्पन्न, सर्वप्रथम; कृतियाँ - रचनाएँ; देवदार - पहाड़ों पर पाया जानेवाला एक तरह का लंबा और सुन्दर वृक्ष; हिममुकुटित - हिम (बर्फ़) का मुकुट पहने हुए; मुल्क - देश; काफ़िला - कारवाँ, यात्रियों का दल; मंगोल - मंगोलिया का निवासी; करामत - चमत्कार; दिग्दर्शक - दिशा का

ज्ञान कराने वाला यंत्र, कुतुबनुमा; कूपमंडूक- कुँए का मेंढक (वह व्यक्ति जिसके ज्ञान की सीमा कुँए के सीमित क्षेत्र में रहनेवाले मेंढक की तरह संकुचित हो।); बृहत्तर भारत - विशाल भारत; खारा - नमकीन; पुतली - मूर्ति; दुराना - दूर रखना, तिरस्कार या उपेक्षा दिखाना; ऐरे-गैरे - तुच्छ; शास्त्र-बाह्य - शास्त्र से बाहर का; जम्बू वृक्ष - जामुन का पेड़; वर्जन - मनाही; करतल भिक्षा तरुतलवास - अपने हाथ से भिक्षा माँगकर पेड़ के नीचे निवास करना; दिग्अम्बर - दिशा रूपी वस्त्र; श्वेताम्बर - श्वेत वस्त्र धारण करनेवाले जैन साधु; वैशालिक - जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर, जिनका जन्म वैशाली में हुआ था; दम्भी - घमंडी; मुल्म्मेवाले - नकली, ढोंगी; खाक छानना - किसी चीज़ की तलाश में मारे-मारे फिरना; भाष्य - किसी ग्रंथ की व्याख्या; चार धाम - चारों दिशाओं में स्थित चार प्रमुख तीर्थ (पूर्व में पूरी, पश्चिम में द्वारका, उत्तर में बद्रीनाथ और दक्षिण में रामेश्वरम); धूनी रमाना - डेरा डालना;

II. निम्नलिखित मुहावरों का वाक्यों में प्रयोग कीजिए:-

सदा विचरण करना, कोलहू का बैल होना, दिशा बदलना, अकल न आना, धूल में मिलाना, नाक रगड़ना, रक्त के आँसू बहाना, अन्योन्या श्रित होना, खिल उठना, आँखों में धूल झोंकना, अवसर से हाथ धोना

III. एक या दो वाकयों में उत्तर दीजिए:-

1. घुमक्कड़ जिज्ञासा पाठ के लेखक का नाम क्या है?
2. राहुल साकृत्यायन ने घुमक्कड़ जिज्ञासा पाठ में क्या बताया है?
3. जिज्ञासा किस प्रकार की चीज के लिए होनी चाहिए?
4. लेखक के अनुसार दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वस्तु क्या है?
5. आधुनिक विज्ञान में किसका स्थान ऊँचा है?
6. पुस्तकीय ज्ञान और घुमक्कड़ी ज्ञान में अंतर क्या है?
7. किन घुमक्कडों ने पश्चिमी देशों के आगे बढ़ने का रास्ता खोला?
8. आदिम घुमक्कड़ कौन-कौन थे?
9. आदि काल में भारतीय घुमक्कड़ कहाँ-कहाँ गये थे?

10. घुमक्कड़ धर्म के भूलने का नतीजा क्या हुआ?

11. संसार में चारों फलों के भागी कौन हुए?

12. भारत के घुमक्कड धर्माचार्य कौन-कौन थे?

13. क्या स्त्रियाँ भी घुमक्कड़ी कर सकती है?

14. महावीर का जन्म कहाँ हुआ और मत्यु कहा हुई?

15. प्रथम श्रेणी के घुमक्कड़ कौन थे?

16. शंकर को शंकर किस धर्म ने बनाया?

17. घुमक्कड़ धर्म की दीक्षा कौन ले सकता है?

IV. विस्तृत उत्तर लिखिएः-

1. लेखक ने दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वस्तु किसे और क्यों माना?

2. घुमक्कड़ धर्म से विमुख होने के दुष्परिणाम क्या-क्या है?

3. धर्माचारियों ने घुमक्कड़ धर्म को क्यों अपनाया? भारत के महान घुमक्कड़ों का विवरण दीजिए।

4. घुमक्कड़ी कौन-कर सकता है - पाठ के अधार पर स्पष्ट कीजिएः-

V. संदर्भ सहित व्याख्या कीजिएः-

1. जाड़े में यदि इस जगह था, तो गर्मियों में वहाँ से दो सौ कोस दूर।

2. खेती, बाग़वानी तथा घर-द्वार से मुक्त वह आकाश के पक्षियों की भाँति पृथ्वी पर सदा विचरण करता था, जाड़े में यदि इस जगह था, तो गर्मियों में वहाँ से दो सौ कोस दूर।

3. उसने प्राणियों की उत्पत्ति और मानव वंश के विकास पर ही अद्वितीय खोज नहीं की, बल्कि सारे विज्ञानों को उससे सहायता मिली।

4. चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इनको इतना अक़ल नहीं आयी कि

www.tntextbooks.in

जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते।

5. यदि वह जन्म सफल करके व्यक्ति और समाज के लिए कुछ करना चाहती हैं, तो उन्हें भी दोनों हाथों इस धर्म को स्वीकार करना चाहिए।

6. दूर शताब्दियों की बात छोड़िए, अभी शताब्दी भी नहीं बीती, इस देश से स्वामी दयानन्द को बिदा हुए। स्वामी दयानन्द को ऋषि दयानन्द किसने बनाया?

7. शैव हो या वैष्णव वेदांती हो या सदांती सभी को आगे बढ़ाया केवल घुमक्कड़ धर्म ने।

8. परतंत्र हमारे देश में पैर तोड़कर बैठ गयी। यह कोई आकस्मिक बात नहीं थी।

9. जिसने इस धर्म की अवहेलना की उसे रक्त के आँसू बहाने पड़े।

www.tntextbooks.in

गद्य 6 वह चीनी भाई

— श्रीमति महादेवी वर्मा

लेखक परिचय

(हिंदी की सुप्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा सिद्धहस्त गद्य लेखिका भी हैं। उनकी गद्यलेखन-शैली इतनी सरस और प्राणवान है कि वह पाठक के मन पर अमिट छाप छोड़ जाती है। विशेषकर उनके शब्द चित्र अत्यंत ही सुंदर एवं मर्मस्पर्शी है। गीतों की मर्यादित सीमा में उनकी जो भावनाएँ पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं पा सकी थीं उन्हें गद्य का सुगम एवं सुविस्तृत क्षेत्र मिला। जीवन की गहराई में उतरकर यथार्थ का हृदयस्पर्शी चित्रण करने में महादेवीजी ने अद्‌भुत कुशलता दिखायी है। 'गद्य ही कवियों की प्रतिभा की कसौटी है - इस उक्ति को उन्होंने चरितार्थ किया है। उनकी 'स्मृति की देखाएँ' और 'अतीत के चलचित्र' आदि पुस्तकों में वर्णन की सूक्ष्मता और शैलीकी सरसता देखते ही बनती है।

'वह चीनी भाई' एक मार्मिक शब्द-चित्र है। चीन भारत का पड़ोसी है और वहाँ के निवासी हमारी तरह ही एशियायी हैं। लेकिन किसी समय लेखिका ने अवज्ञ के साथ एक चीनी फेरीवाले को 'विदेशी' कहा था जिसका उत्तर उसने दिया - "हम क्या विदेशी? हम तो चाईना से आता है"। चीनी भाई के इस सहज-सरल उत्तर से लेखिका के मन में जो कचोट पैदा हुई, उसी ने आगे चलकर इस संस्मरणात्मक शब्द चित्र करूप लिया।

मुझे चीनियों में पहचानकर स्मरण रखने योग्य विभिन्नता कम मिलती है। कुछ समतल मुख एक ही साँचे में ढ़ले-से जान पड़ते हैं और उनकी एकरसता दूर करनेवाली, वस्त्र पर पड़ी हुई सिकुडन-जैसी नाक की गठन में भी विशेष अंतर नहीं दिखाई देता। कुछ तिरछी, अधखुली और विरल भूरी बरुनियोंवाली आँखों की तरल रेकाकृति देखकर भ्रांति होती है कि वे सब एक नाप के अनुसार किसी तेज़ धार से चीरकर बनायी गयी है। स्वाभाविक पीतावर्ण, धूप के चरण-चिन्हों पर पड़े हुए धूल के आवरण के कारण कुछ ललछौहे सूखे पत्ते की समानता पर लेता है। आकार-प्रकार , वेष-भूषा सब मिलकर इन दूर-देशियों को यंत्रचालित पुतलों की भूमिका दे देते हैं, इसीसे अनेक बार देखने पर भी एक फेरीवाले चीनी को दूसरे से भिन्न करके पहचानना कठिन है।

पर आज उन मुखों की एकरूप स्मष्टि में मुझे आर्द्र नीलिमामयी आँखों के साथ एक मुख स्मरण आता है, जिसकी मौन भंगिमा कहती है – "हम कार्बन की कापियाँ नहीं हैं। हमारी भी एक कथा है। यदि जीवन की वर्णमाला के संबंध में तुम्हारी आँखें निरक्षर नहीं, तो तुम पढ़कर देखो न।"

कई वर्ष पहले की बात है, मैं तांगे से उतरकर भीतर आ रही थी कि भूरे कपड़े का गट्ठर बायें कंधे के सहारे पीठ पर लटकाये हुए और दाहिने हाथ में लोहे का गज़ घुमाता हुआ चीनी फेरीवाला फाटक से बाहर निकले आ रहा था। संभवतः मेरे घर को बंद पाकर वह लाटा जा रहा था। "कुछ लेगा मेम साहब!" — दुर्भाग्य का मारा चीनी! उसे क्या पता कि यह संबोधन मेरे मन में रोष की सबसे तुंग तरंग उठा देता है। मइया, माता जीजी, दिदिया, बिटिया आदि न जाने कितने संबोधनों से मेरा परिचय है और सब मुझे प्रिय है, पर यह विजातीय संबोधन मानों सारा परिचय छीनकर मुझे गाउन में खड़ा कर देता है। इस संबोधन के उपरांत मेरे पास से निराशा होकर न लौटना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है।

मैंने अवज्ञा से उत्तर दिया—मैं फ़ारन (विदेशी) नहीं खरीदती।

"हम क्या फ़ारन है? हम तो चाइना से आता है।" कहनेवाले के कण्ठ में सरल विस्मय के साथ उपेक्षा की चोट से उत्पन्न क्षोभ भी था। इस बार रुककर उत्तर देनेवाले को ठीक से देखने की इच्छा हुई। धूल से मटमैले सफ़ेद किरमिच के जूते में छोटे पैर छिपाये, पतलून और पाजामें का सम्मिश्रित परिणाम-जैसा पाजामा और कुरता तथा कोट की एकता के आधार पर सिला कोट पहने, उधड़े हुए किनारों से पुरानेपन की घोषणा करते हुए हैट से आधा माथा ढके, दाढ़ी-मूँछविहीन, दुबली-नाटी जो मूर्ती खड़ी थी, वह तो शाश्वत चीनी है। उसे सबसे अलग करके देखने का प्रश्न जीवन में पहली बार उठा।

मेरी उपेक्षा से उस विदेशीय को चोट पहुँची, यह सोचकर मैंने अपनी 'नहीं' को और अधिक कोमल बनाने का प्रयास किया, 'मुझे कुछ नहीं चाहिए भाई।" चीनी भी विचित्र निकला,"हमको भय बोला है, तुम जरूल लेगा, जरूल लेगा—हाँ?" "होम करते हाथ जला" वाली कहावत हो गयी–विवश कहना पड़ा, 'देखूँ तुम्हारे पास है क्या।" चीनी बरामदे में कपड़े का गट्ठा उतारता हुआ कह चला, "भोत अच्छा सिल्क आता है सिस्तर। चाइना सिल्क क्रेप...." बहुत कहने-सुनने के उपरांत दो मेज़पोश खरीदना आवश्यक हो गया। सोचा—चलो छुट्टी हुई, इतनी कम बिक्री होने के कारण चीनी अब कभी इस ओर आने की भूल न करेगा।

पर कोई पंद्रह दिन बाद वह बरामदे में अपनी गठरी पर बैठकर गज को फ़र्श पर बजा-बजाकर गुनगुनाता हुआ मिला। मैंने उसे कुछ बोलने का अवसर न देकर, व्यस्त भाव से कहा

—अब तो मैं कुछ न लूँगी। समझे? चीनी खड़ा होकर जेब से कुछ निकालता हुआ प्रफुल्ल मुद्रा से बोला—सिस्तर आपका वास्ते हैं कि लाता है, भोत बेस्त सब सेल हो गया। हम इसको पाकेट में छिपाके लाता है।

देखा–कुछ रूमाल थे। ऊदी रंग के डोरे भरे हुए, किनारों का हर घुमाव और कानों में उसी रंगसे बने नन्हें फूलों की प्रत्येक पंखुड़ी चीनी-नारी की कोमल उँगलियों की कलात्मकता ही नहीं व्यक्त कर रही थी, जीवन के अभाव की करुण ही कह रही थी। मेरे मुख के निषेधात्मक भाव को लक्ष्य कर अपनी नीली रेखाकृत आँखों को जल्दी-जल्दी बंद करते और खोलते हुए वह एक साँस में 'सिस्तर का वास्ते लाता है, दोहराने लगा।

मन में सोचा, अच्छा भाई मिला है। बचपन में मुझे लोग चीनी कहकर चिढ़ाया करते थे। संदेह होने लगा, उस चिढ़ाने में कोई तत्व भी रहा होगा। अन्यथ आज एक सचमुच का चीनी, सारे इलाहाबाद को छोड़कर मुझसे बहन का संबंध क्यों जोड़ने आता। पर उस दिन से चीनी को मेरे यहा जब-तब आने का विशेष अधिकार प्राप्त हो गया है। चीन का साधारण श्रेणी का व्यक्ति भी कला के संबंध में विशेष अभिरुचि रखता है, इसका पता भी उसी चीनी की परिष्कृत रुचि में मिला।

नीली दीवार पर किस रंग के चित्र सुंदर जान पड़ते हैं, हरे कुशन पर किस प्रकार के पक्षी अच्छे लगते हैं, सफ़ेद पर्दे के कोने में किस बनावट के फूल-पत्ते खिलेंगे आदि के विषय में चीनी उतनी ही जानकारी रखता था, जितनी किसी अच्छे कलाकार में मिलेगी। रंग से उसका अतिपरिचय यह विश्वास उत्पन्न कर देता था कि वह आँखों पर पट्टी बाँध देने पर भी केवल स्पर्श से रंग पहचान लेगा। चीन के वस्त्र, चीन के चित्र आदि की रंगमयता देखकर भ्रम होने लगता है कि वहाँ की मिट्टी का हर कण भी इन्हीं रंगों से रंगा हुआ न हो। चीन देखने की इच्छा प्रकट करते ही 'सिस्तर' का वास्ते हम चलेगा"। कहते-कहते चीनी की आँखों की नीली रेखा प्रसन्नता से उजली हो उठती थी।

अपनी कथा सुनाने के लिए वह विशेष उत्सुक रहा करता था। पर कहने सुननेवाले के बीच की खाई बहुत गहरी थी। उसे चीनी और बर्मी भाषाएँ आती थीं जिनके संबंध में अपनी सारी विद्या-बुद्धि के साथ मैं 'आँखों के अंधे नाम नैनमुख' की कहावत चरितार्थ करती थी। अंग्रेज़ी की क्रियाहीन संज्ञाओं और हिंदुस्तानी की संज्ञाहीन क्रियाओं के सम्मिश्रण के जो विचित्र भाषा बनती थी, उसमें कथा का सारा मर्म बँध नहीं पाता था। पर जो कथाएँ हृदय का बाँध तोड़कर दूसरों को अपना परिचय देने के लिए बह निकली है, प्रायः करुण होती है और करुणा की भाषा शब्दहीन रहकर भी बोलने में समर्थ है। चीनी फेरीवाले की कथा भी इसका अपवाद नहीं।

जब उनके माता-पिता ने माडले (बर्मा) आकर चाय की छोटी दूकान खोली, तब उसका जन्म नहीं हुआ था। उसे जन्म देकर और सात वर्ष की बहन से संरक्षण छोड़कर जो परलोक सिधारी उस अनदेखी माँ के प्रति चीनी की श्रद्धा अटूट थी।

संभवतः माँ ही ऐसी प्राणी है जिसे कभी न देख पाने पर भी मनुष्य ऐसे स्मरण करता है, जैसे उसके संबंध में जानना बाकी नहीं। यह स्वाभाविक भी है।

मनुष्य को संसार में बाँधनेवाला विधाता माँ ही है, इसीसे उसे न मानकर संसार को न मानना सहज है। पर संसार को मानकर उसे न मानना असंभव ही रहता है।

पिता ने जब दूसरी बर्मी चीनी स्त्री को गृहिणी-पद पर अभिषिक्त किया तब उन मातृहीनों की यातना की कठोर कहानी आरंभ हुई। दुर्भाग्य इतने से ही संतुष्ट नहीं हो सका, क्योंकि उसके पाँचवें वर्ष में पैर रखते-रखते एक दुर्घटना में पिता ने भी प्राण खोये।

अब अबोध बालकों के समान उसने सहज ही अपनी परिस्थितियों से समझौता कर लिया, पर बहन और विमाता में किसी प्रस्ताव को लेकर जो वैमनस्य बढ़ रहा था, वह इस समझौती को उत्तरोत्तर

विषाक्त बनाने लगा। किशोरी बालिका की अवज्ञा का बदला उसीको नहीं, उसके अबोध भाई को कष्ट देकर भी चुकाया जाता था। अनेक बार उसने ठिठुरती हुई बहन की कंपित अंगुलियों में अपने हाथ रख उसके मलिनवस्त्रों में अपना आँसुओं से धुला मुख किया और उसीकी छोटी सी गोद में सिमटकर भूख भुलायी थी। कितनी ही बार सबेरे आँख मूँदकर बंद द्वार के बाहर दीवार से टिकी हुई बहन के ओस-से गीले बालों में अपनी ठिठुरती हुई उँगलियों को गर्म करने का व्यर्थ प्रयास करते हुए उसने पिता के पास जाने का रास्ता पूछा था। उत्तर में बहन के फीके गाल पर चुपचाप ढुलक आनेवाले आँसू की बड़ी बूँद देखकर वह घबराकर बोल उठा था--"उसे कहवा नहीं चाहिए, वह तो पिता को देखना भर चाहता है।"

कई बार पड़ोसियों के यहाँ रकावियाँ धोकर और काम के बदले भारत माँगकर बहन ने भाई को खिलाया था। व्यथा की कौन सी अंतिम मात्रा ने बहन के नन्हे हृदय का बाँध तोड़ जाला, इसे अबोध बालक क्या जाने। पर एक रात उसने बिछौने पर लेटकर बहन की प्रतीक्षा करते-करते आधी आँख खोली और विमाता को कुशल बाजीगर की तरह मैली-कुचैली बहनका कायापलट करते देखा। उसके सूखे ओंठों पर विमाता की मोटी उँगली ने दौड़-दौड़कर लाली फेरी, उसके फीके गालों पर चौड़ी हथेली ने घूम-घूमकर सफ़ेद गुलाबी रंग भरा, उसके रूखेवालों को कठोर हाथों ने घेरे-घेरकर सँवारा और तब नये रंगीन वस्त्रों में सजी हुई उस मूर्ती को एक

प्रकार से ठेलती हुई विमाता रात के अंधकार में बाहर अंतर्निहित हो गई।

बालक का विस्मय भय में बदल गया और भय ने रोने में शरण पाई। कब वह रोते-रोते सो गया इसका पता नहीं, पर जब वह किसीके स्पर्श से जागा तो बहन उस गठरी बने हुए भाई के मस्तक पर मुख रखकर सिसकियाँ रोक रही थी। उस दिनउसे अच्छा भोजन , मिला दूसरे दिन कपड़े, तीसरे दिन खिलौने - पर बहन के दिनों- दिन विवर्णहोनेवाले ओंठों पर अधिक गहरे रंग की आवश्यकता पड़ने लगी, उसके उत्तरोतर फीके पड़नेवाले गालों पर देर तक पाउडर मला जाने लगा।

बहन के छीजते शरीर और घटती शक्ति का अनुभव बालक करता था, पर वह किससे कहे, क्या करे, यह उसकी समझ के बाहर की बात थी। बार-बार सोचता था, पिता का पता मिल जाता तो सब ठीक हो जाता। उसके स्मृतिपट पर माँ कोई रेखा नहीं, परंतु पिता को जो अस्पष्ट चित्र अंकित था उससे उनके स्नेहशील होने में संदेह नहीं रह जाता।प्रतिदिन निश्चित करता कि दूकान में आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति से पिता का पता पूछेगा और एक दिन चुपचाप उनके पास पहुँचेगा और उसी तरह चुपचाप उन्हें घर लाकर खड़ा कर देगा—तब यह विमाता कितनी डर जाएगी और बहन कितनी प्रसन्न होगी।

चाय की दूकान का मालिक अब दूसरा था, परंतु पुरने मालिक के पुत्र के साथ उसके व्यवहार में सहृदयता कम नहीं रही, इसीसे बालक एक कोने में सिकुडकर खड़ा हो गया और आनेवालों से हकला हकलाकर पिता का पता पूछने लगा। कुछ ने उसे आश्चर्य से देखा, कुछ मुस्कुरा दिय, पर दो-एक ने दूकानदार से कुछ ऐसी बातकही, जिससे वह बालक को हाथ पकड़कर बाहर ही छोड़ आया, इस भूल की पुनरावृत्ति होने पर विमाता से दण्ड दिलाने की धमकी भी दे गया। इस प्रकार उसकी खोज का अंत हो गया।

बहिन का संध्या होने ही कायापलट, फिर भी उसका आधी रात बीत जाने पर भारी पैरों से लौटना, विशाल शरीरवाली विमाता का जंगली बिल्ली की तरह हल्के पैरों से बिछौने से उछलकर उतर आना, बहिन के शिथिल हाथों से बटुए का छिन जाना और उसका भाई के मस्तक पर मुख रकखकर स्तब्ध भाव से पड़े रहना आदि क्रम ज्यों-के-त्यों चलते रहे।

पर एक दिन बहिन लौटी ही नहीं। सबेरे विमाता को कुछ चिंतित भाव से उसे खोजते देख बालक सहसा अज्ञात भय से सिहर उठा। बहिन—उसकी एकमात्र आधार बहिन! पिता का पता न पा सका और अब बहिन भी खो गई। जैसा था वैसा ही बहिन को खोजने के लिए गली-गली में मारा-मारा फिरने लगा। रात में वह जिस रूप में परिवर्तित हो जाती, उसमें दिन को उसे पहिचान सकना कठिन था, इससे वह जिसे अच्छे कपड़े पहने हुए जाती देखता, उसीके

पास पहुँचने के लिए सड़क के एक ओर वे दूसरी ओर दोड़ पड़ता। कभी किसीसे टकराकर गिरते-गिरते बचता, कभी किसीसे गाली खाता, कभी कोई दयासे प्रश्न कर बैठता –'क्या इतना ज़रा-सा लड़का भी पागल हो गया है?"

इसी प्रकार भटकता हुआ वह गिरहकटों के गिरोह के हाथ लाग और तब उसकी शिक्षा आरंभ हुई। जैसे लोग कुत्ते को दो पैरों से बैठना, गर्दन ऊँचे कर खड़ा होना, मुँह पर पंजे रखकर सलाम करना आदिकरतब सिखाते हैं उसी प्रकार वे सब उसे तंबाकू के धुएँ और दुर्गंध मांस से भरे और फटे चिथड़े, टूटे बरतन और मैले शरीरों से बसे हुए कमरे में बंद कर कुछ विशेष संकेतों और हँसने-रोने के अभिनय में पारंगत बनाने लगे।

कुत्ते के पिल्ले के समान ही वह घुटनों के बल खड़ा रहता और हँसने-रोने की विविध मुद्राओं का अभ्यास करता। हँसी का स्रोत इस प्रकार सूख चुका था कि अभिनय में भी वह बार-बार भूल करता और मारखाता। पर क्रन्दन उसके भीतर इतना अधिक उमड़ा रहता था। कि जा मुँह के बनाते ही दोनों आँखों से दो गोल-गोल बूँदे नाक के दोनों ओर निकल आतीं और पतली समानान्तर रेखा बनाती और मुँह दोनों सिरों को छूती हुई ठुड्डी के नीचे तक चली जातीं। इसे अपनी दुर्लभ शिक्षा का फल समझकर रोओं से काले उदर पर पीला-सा रंग बाँधनेवाला उसका शिक्षक प्रसन्नता से उठकर उसे एक लात जमाकर पुरस्कार देता।

वह दल बर्मी, चीनी, स्यामी आदि का सम्मिश्रण था। इसीसे चोरों की बरात में अपनी-अपनी होशियारी के सिद्धांत का पालन बड़ी सतर्कता से हुआ करता। जो उसपर कृपा रखते थे, उनके विरोधियों का स्नेहपात्र होकर पिटना भी उसका परम कर्तव्य हो जाता था। किसीकी कोई वस्तु खोते ही उसपर संदेह की ऐसी दृष्टि आरंभ होती कि बिना चुराये ही वअ चोर के समान काँपने लगता और तब उस 'चोर के घर छिछोर' की जो मरम्मत होती थी, उसका स्मरण करके चीनी की आँखें आज भी व्यथा और अपमान से धक-धक जलने लगती थीं।

सबके खाने के पात्र में बचा उच्छिष्ट एक तामचीनी के टेढ़े बरतन में सिबार से जगह-जगहजले हुए कागज़ से ढक्कर रख दिया जाता था, जिसे वह हरी आँखोंवाली बिल्ली के साथ खाता था।

बहुत तान गए तक उसके नरक के साथी एक-एक कर आते रहते और अंगीठी के पास सिकुडकर लेटे हुए बालक को ठुकराते हुए निकल जाते। उनके पैरों की आहट को पढ़ने का उसे अच्छा अभ्यास हो चला था। जो हलके पैरों को जल्दी-जल्दी रखता आता है, उसे बहुत कुछ मिल गया है। जो शिथिल पैरों को घसीटता हुआ लौटता, वह खाली हाथ है। जो दीवार को टटोलता हुआ, लड़खड़ाते पैरों से बढ़ता वह शराब में सब खोकर बेसुध आया है। जो देहली

से ठोकर खाकर धम-धम पैर रखता हुआ घुसता है, उसने किसीसे झगड़ा मोल ले लिया है, आदि का ज्ञान उसे अनजान में ही प्राप्त हो गया था।

यदि दीक्षांत संस्कार के उपरांत विद्या के उपयोग का श्रीगणेश होते ही उसकी भेंट पिता के परिचित एक चीनी व्यापारी से नहीं हो जाती, तो इस साधना से प्राप्त विद्वता का अंत क्या होता, यह बताना कठिन है। पर संयोग ने उसके जीवन की दिशा को इस प्रकार बदल दिया कि वह कपड़े की दूकान पर व्यापारी की विद्या सीखने लगा।

प्रशंसा का पुल बाँधते-बाँधते वर्षों पुराना कपड़ा सबसे पहले उठा लाना, गज से इस तरह नापना कि जो बराबर भी आगे न बढ़े, चाहे अंगुल-भर पीछे रह जाए। रुपये से लेकर पाई तक को खूब देख-भालकर लेना और लौटाते समय पुराने, खोटे पैसे विशेष रूप से खनका-खनकाकर दे डालना आदि का ज्ञान कम रहस्यमय नहीं था। पर मालिक के साथ भोजन मिलने के कारण बिल्ली के उच्छिष्ट सहभोज की आवश्यकता नहीं रही और दूकान में सोने की व्यवस्था होने से अंगीठी के पास ठोकरों से पुरस्कृत होने की विशेषता जाती रही। चीनी छोटी अवस्था में ही समझ गया था कि धन-संचय से संबंध रखनेवाली सभी विद्याएँ एक-सी हैं, पर मनुष्य किसी का प्रयोग प्रतिष्ठापूर्वक कर सकता है और किसी का छिपाकर।

कुछ अधिक समझदार होने पर उसने अपनी अभागी बहिन को ढूँढ़ने का बहुत प्रयत्न किया, पर उसका पता न पा सका। ऐसी बालिकाओं का जीवन खतरे से खाली नहीं रहता। कभी वे मूल्य देकर खरीदी जाती है और कभी बिना मूल्य के गायब कर दी जाती है। कभी वे निराश होकर आतमहत्या कर लेती है और कभी शराबी ही नशे में उन्हें जीवन से मुकत कर देते हैं। उस रहस्य की सूत्रधारिणी विमाता भी संभवतः पुनर्विवाह कर किसी और को सुखी बनाने के लिए कहीं दूर चली गयी थी। इस प्रकार उस दिशा में खोज का मार्ग ही बंद हो गया।

इसी बीच में मालिक के काम से चीनी रंगून आया, फिर दो वर्ष कलकत्ता में रहा और तब अन्य साथियों के साथ उसे इस ओर आने का आदेश मिला। यहाँ शहर में एक चीनी जूतेवाले के घर ठहरा है और सबेरे आठ से बारह और दो से छः बजे तक फेरी लगाकर कपड़े बेचता रहता है।

चीनी की दो इच्छाएँ हैं, ईमानदार बनने की और बहिन को ढूँढ लेने की – जिनमें से एक को पूर्ति तो स्वयं उसी के हाथ में हे और दूसरी के लिए वह प्रतिदिन भगवान बुद्ध से प्रार्थना करता है।

बीच-बीच में वह महीनों के लिए बाहर चला जाता था, पर लौटते ही "सिस्तर का वास्ते

ई लाता है" कहता हुआ कुछ लेकर उपस्थित हो जाता। इस प्रकार देखते-देखते मैं अपनी अभ्यस्त हो चुकी थी जब एक दिन वह 'सिस्तर का वास्ते' कहकर और शब्दों की खोज़ करने लगा तब मैं उसकी कठिनाई न समझकर हँस पड़ी। धीरे-धीरे पता चला– बुलावा आया है, यह लड़ने के लिए चाहना जाएगा। इतनी जल्दी कपड़े कहाँ बेचे और न बेचने पर मालिक को हानि पहुँचाकर बेईमान कैसे बने? यदि मैं उसे आवश्यक रुपया देकर सब कपड़े ले लूँ, तो वह मालिक का हिसाब चुकाकर कर तुरंत देश की ओर चल दे।

किसी दिन पिता का पता पूछे जाने पर वह हकलाया था — आज भी संकोच से हकला रहा था। आज भी संकोच से हकला रहा था। मैंने सोचने का अवकाश पाने के लिए प्रश्न किया – "तुम्हारे तो कोई है ही नहीं, फिर बुलावा किसने भेजा?" चीनी की आँखें विस्मय से भरकर पूरी खुल गयीं– "हम कब बोला हमारा चाइना नहीं है? हम कब ऐसा बोला सिस्तर?" मुझे स्वयं अपने प्रश्न पर लज्जा आयी, उसका इतना बड़ा चीन रहते वह अकेला कैसा होगा।

मेरे पास रुपया ही कठिन है, अधिक रुपये की चर्चा ही क्या। पर कुछ अपने पास खोज-ढँढकर और कुछ दूसरों से उधार लेकर, मैंने चीनी के जाने का प्रबंध किया। मुझे अंतिम अभिवादन कर जब वह चंचल पैरों से जाने लगा, तब मैंने पुकारकर कहा—यह गज तो लेती जाओ। चीनी सहज स्मित के साथ घूमकर "सिस्तर का वास्ते" ही कह सका। शेष शब्द उसके हकलाने में खो गये और आज कई वर्ष हो चुके हैं–चीनी को फिर देखने की संभावना नहीं, उसकी बहन से मेरा कोई परिचय नहीं, पर न जाने क्यों वे दोनों भाई-बहन मेरे स्मृतिपट से हट ते ही नहीं।

चीनी की गठरी में से कई थान मैं अपने ग्रामीण बालकों के कुर्ते बना-बनाकर खर्च कर चुकी हूँ, परंतु अब भी तीन थान मेरी अलमारी में रखें है लोहे का गज दीवार के कोने में खड़ा है। एक बार जब इन थानों को देखकर एक खादी-भक्त बहिन ने आक्षेप किया था–जो लोग बाहर विशुद्ध खद्दारधारी होते हैं, वे भी विदेशी रेशम के थान खरीदकर रखते हैं, इसी से तो देश की उन्नति नहीं होती-तब मैं बड़े कष्ट से हँसी रोक सकी।

वह जन्म का दुखियारा मातृ-पितृहीन और बहिन से बिछुडा हुआ चीनी भाई अपने समस्त स्नेह के एकमात्र आधार चीन में पहुँचने का आतमतोष पा गया है, इसका कोई प्रमाण नहीं–पर मेरा मन यही कहता है।

www.tntextbooks.in

I. कठिन शब्दार्थ

बरुनियाँ - पलकों में किनारे के बाल; ललछौहा - हल्की लालिमा; दूरदेशी - देर देश का रहनेवाला; पुतला - लकड़ी या धातु आदि की बनी निर्जीव प्रतिमा; आर्द्र - भीगा; गज - लोहे आदि की लंबी छड़ जिससे कपड़े नापने का काम लिया जाता है। तीन फुट; फ़ेरीवाला - गलि-गलि घूमकर चीज़ें बेचनेवाला; तुंगा - ऊँचा; किरमिच - एक तरह का चिकना और मोटा कपड़ा जिससे टेनिस के जूते आदि बनाते हैं। कुशन - मोटा गद्दा; उजली हो उठता - उज्जवल हो जाना; आँखों के अंधे - नाम नैनमुख - नाम के विपरीत स्वभाव या रूप का होना; अनदेखी - जिसे देखा नहीं हो;अभिषिक्त करना - किसी ऊँचे पद पर बैठाना; विमाता - सौतेली माँ; विषाक्त - जहरीला; रुकाबी - तश्तरी, प्लेट; बाजीगर - जादूगर; कायापलट - रूप परिवर्तन; अन्तर्हित - गायब, अदृश्य; हकलाना - रुक-रुककर बोलना;पुरावृत्ति - दोहराना; बटुआ - छोटी थैली; गिरहकटा - पाकेटमार; गिरोह - दल, झुंड; करतब - कौशल, हुनर; पारंगत - जिसने किसी विद्य का पूरा ज्ञान प्राप्त कर लिया हो;पिल्ला - कुत्ते का बच्चा; सिरा - छोर; छिछोर - कमीना, नीच; उच्छिष्ट - जूठा; तामचीनी - लोहे का कलईदार पात्र; दहेली - दरवाज़े की निचली चौखट; सहभोज - साथ भोजन करना; सूत्रधारिणी - व्यवस्था करनेवाली;

II. निम्न मुहावरों/लोकोक्तयों का वाक्यों में प्रयोग कीजिएः-

साँचे में ढलना, होम करते हाथ जलना, आँखों के अंधे नाम नैन मुख, परलोक सिधारना, वैमनस्य बढ़ाना, कायापलट करना, अन्तनिर्हित हो जाना, सिहर उठना, अवांछनीय

III. एक या दो वाकयों में उत्तर दीजिएः-

1. वह चीनी भाई शब्द चित्र की लेखिका कौन है?

2. लेखिका को चीनी फेरिवालों को भाई करके पहचानने में क्यों कठिनाई हो रही थी?

3. चीनीवाले के मेमसाहब के संबोधन से लेखिका क्यों गुस्सा होती थी?

4. 'हवन करते हाथ जलना' की स्थिति लेखिका को क्यों मिली?

5. बचपन में लेखिका को लोग क्या कहकर चिढ़ाया करते थे?

6. अनदेखी माँ के प्रति चीनी की श्रद्धा देखकर लेखिका क्या सोचा करती थी?

www.tntextbooks.in

IV. विस्तृत उत्तर लिखिए:-

1. लेखिका ने चीनियों के रूप का वर्णन कैसा किया?

2. अंग्रेज़ी शब्द के संबोधन सुनकर लेखिका के मन में कैसा होता था ?

3. चीनी फेरीवाला की करुण कथा का वर्णन कीजिए?

4. गिरहकटों के गिरोह में क्या-क्या होता था?

5. लेखिका के लिए उस चीनी फेरीवाले को भूलना क्यों असंभव सा रहा?

V. संदर्भ सहित व्याखया कीजिए:-

1. हम कार्बन की कापियाँ नहीं है। हमारी भी एक कथा है।

2. पर वह विजातीय संबोधन मानो सारा परिचय छीनकर मुझे गाउन में खड़ा कर देता है।

3. होम करते हाथ जला वाली कहावत हो गई।

4. मनुष्य को संसार में बाँधनेवाला विधाता माँ ही है, इसी से उसे न मानकर संसार को न मानना सहज है।

www.tntextbooks.in

कहानी 1 उसने कहा था

– चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी'

लेखक परिचयः- कहानी में लेखक श्री चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' हैं। हिंदी के प्रसिद्ध कहानीकारों में वे भी एक हैं। उनकी रचनाओं में जीवन की घट नाओं का यथार्थ चित्रण मिलता है। सरल शैली तथा सरल वर्णन के कारण उनकी रचना में पाठकों की रोचकता बढ़ती है। इस कहानी में वे एक आदर्श प्रेम का दर्शन प्रस्तुत करते हैं।

बड़े-बड़े शहरों के इक्के-गाड़ीवालों की ज़बान के कोड़ों से जिनकी पीठ छिल गयी है और कान पक गये हैं, उनसे हमारी प्रार्थना है कि अमृतसर के बम्बूकार्टवालों की बोली का मरहम लगावें। जब बड़े-बड़े शहरों की चौड़ी सड़कों पर घोड़े की पीठ को चाबुक से धुनते हुए इक्केवाले कभी घोड़े की नानी से अपना निकट सम्बन्ध स्थिर करते हैं, कभी राह चलते पैदलों की आँखों के न होने पर तरस खाते हैं, कभी उनके पैरों की उंगलियों के पैरों को चींथकर अपने ही को सताया हुआ बताते हैं और संसार-भर की ग्लानि, निराशा और क्षोभ के अवतार बने नाक की सीध चले जाते हैं, तब अमृतसर में उनकी बिरादरीवाले तंग चक्करदार गलियों में हर एक लड़ढीवाले के लिए ठहरकर, सब का समुद्र उमड़ाकर 'बचो खालसाजी', 'हटो भाई जी', 'ठहरना भाई', 'आने दो लालाजी', 'हटो बाछा' कहते हुए सफ़ेद फेंटों, खच्चरों और बत्तकों, गन्ने और खोमचे और भारेवालों के जंगल में से राह खेते हैं। क्या मजाल है कि जी और भारेवालों के जंगल में से राह खेते हैं। क्या मजाल है कि जी और साहब बिना सुने किसीको हटना पड़े? यह बात नहीं कि उनकी जीभ चलती ही नहीं; चलती है, पर मीठी छुरी की तरह महीन मार करती है। यदि कोई बुढ़िया बार-बार चितौनी देने पर भी लीक से नहीं हटती, तो उनकी बचनावली के ये नमूने हैं–हट जा, जीणे जोगिये; हट जा, करमा वालिये; हट जा, पुत्ता प्यारिये; बच जा, लंबी वालिये। समष्टि में इनका अर्थ है कि तू जीने योग्य है, तू भाग्योंवाली है; पुत्रों को प्यारी है, लंबी उमर तेरे सामने है, तू क्यों मेरे पहियों के नीचे आना चाहती है? बच जा।

ऐसे बम्बूकार्टवालों के बीच में होकर एक लड़का और लड़की चौक की एक दूकान पर आ मिले। उसके बालों और इसके ढीले सुथने से जान पड़ता था कि दोनों सिख हैं। वह अपने

www.tntextbooks.in

मामा के केश धोने के लिए दही लेने आया था और यह रसोई के लिए बढ़ियाँ। दूकानदार एक परदेशी से गुथ रहा था, जो सेर-भर गीले पापड़ों की गड्डी को गिने बिना हटता न था।

'तेरा घर कहाँ है?'

'मगरे में, और तेरा?'

'माँझे में; यहाँ कहाँ रहती है?'

'अतरसिंह की बैठक में, वे मेरे मामा होते हैं।'

'मैं भी मामा के यहाँ आया हूँ, उनका घर गुरुबज़ार में है।'

इतने में दूकानदार निबटा और इनका सौदा देने लगा। सौदा लेकर दोनों साथ-साथ चले। कुछ दूर जाकर लड़के ने मुस्कुराकर पूछा–तेरी कुड़माई हो गयी? इसपर लड़की कुछ आँखें चढ़ाकर 'धत्' कहकर दौड़ गयी और लड़का मुँह देखता रह गया।

दूसरे तीसरे दिन सब्ज़ीवाले के यहाँ, दूधवाले के यहाँ, अकस्मात् दोनों मिल जाते। महीना-भर यही हाल रहा। दो-तीन बार लड़के ने फिर पूछा–तेरी कुड़माई हो गयी? और उत्तर में वही 'धत्' मिला। एक दिन जब फिर लड़के ने वैसे ही हँसी में चिढ़ाने के लिए पूछा, तब लड़की लड़के की संभावना के विरुद्ध बोली–'हाँ हो गयी।'

'कब?'

'कल; देखते नहीं यह रेशम से कढ़ा हुआ सालू?'

लड़की भाग गयी। लड़के ने घर की राह ली। रास्ते में एक लड़के को मोरी में ढकेल दिया, एक छाबड़ीवाले के दिन-भर की कमाई खोयी, एक कुत्ते पर पत्थर मारा और एक ठेलोवाले के ठेले में से दूध उड़ेल दिया, सामने नहाकर आती हुई किसी वैष्णवी से टकराकर अन्धे की उपाधि पायी, तब कहीं घर पहुँचा।

(2)

'राम, राम, यह भी कोई लड़ाई है? दिन-रात खन्दकों में बैठे हड्डियाँ अकड़ गयीं। लुधियाने से दस गुना जाड़ा और मेह और बरफ़ ऊपर से। पिंडलियों तक कीचड़ में धँसे हुए हैं। ग़नीम कहीं दिखाता नहीं; घंटे दो घंटे में कान के परदे फाड़नेवाले धमाके के साथ सारी खन्दक हिल जाती है और सौ-सौ गज़ धरती उछल पड़ती है। इस ग़ैबी गोले से बचे तो कोई लड़े। नगरकोट का ज़लज़ला सुना था, यहाँ दिन में पच्चीस ज़लज़ले होते हैं। जो कहीं खन्दक से

बाहर साफ़ा या कुहनी निकल गयी तो चटाक से गोली लगती है। न मालूम, बेईमान मिट्टी में लेटे हुए हैं या घास की पत्तियों में छिपे रहते हैं!'

'लहनासिंह, और तीन दिन हैं। चार दिन तो ख़न्दक में बिता ही दिये। परसों 'रिलीफ़' आ जाएगी और फिर सात दिन की छुट्टी। अपने हाथों झटका करेंगे और पेट-भर खाकर सोये रहेंगे। उस फिरंगी मेम के बाग़ में मखमल की-सी हरी घास है। फल और दूध की वर्षा कर देती है। लाख कहते हैं, दाम नहीं लेती। कहती है, तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आये हो।'

'चार दिन तक पलक नहीं झँपी। बिना फेरे घोड़ा बिगड़ता है और बिना लड़े सिपाही। मुझे तो संगीन चढ़ाकर मार्च का हुक्म मिल जाय, फिर सात जरमनों को अकेला मारकर न लौटूँ तो मुझे दरबार साहब की देहली पर मत्था टेकना नसीब न हो। पाजी कहीं के कलों के घोड़े--संगीन–देखते ही मुँह फाड़ देते हैं और पैर पकड़ने लगते हैं। यों अँधेरे में तीस-तीस मन का गोला फेंकते हैं। उस दिन धावा किया था, चार मील तक एक जर्मन नहीं छोड़ा था। पीछे जनरल साहब ने हट आने का कमान दिया, नहीं तो....'

'नहीं तो सीधे बर्लिन पहुँच जाते। क्यों?'– सुबेदार हज़ारा सिंह ने मुस्कुराकर कहा– 'लड़ाई के मामले जमादार या नायक के चलाये नहीं चलते। बड़े अफ़सर दूर की सोचते हैं। तीन सौ मील का सामना है। एक तरफ़ बढ़ गये तो क्या होगा?'

'सूबेदारजी, सच है'– लहना सिंह बोला– 'पर करें क्या? हड्डियों में जो जाड़ा धँस गया है। सूर्य निकलता नहीं और खाई में दोनों तरफ़ चम्बे की बावलियों के-से सोते झर रहे हैं। एक धावा हो जाय तो गरमी आ जाय।'

'उदमी (ऊदम सिंह), उठ, सिगड़ी में कोयले डाल। वज़ीरा, तुम चार जने बाल्टियाँ लेकर खाई का पानी बाहर फेंको। महासिंह, शाम हो गयी है, खाई के दरवाज़े का पहरा बदल दे।' यह कहते हुए सूबेदार सारी खन्दक में चक्कर लगाने लगे।

वज़ीरासिंह पलटन का विदूषक था। बाल्टी में गँदला पानी भरकर खाई के बाहर फेंकता हुआ बोला–मैं पाधा बन गया हूँ। करो जर्मनी के बादशाह का तर्पण! इसपर सब खिलखिला पड़े और उदासी के बादल फट गये।

लहानासिंह ने दूसरी बाल्टी भरकर उसके हाथ में देकर कहा–अपनी बाड़ी के खरबूज़ों में पानी दो। ऐसी खाद का पानी पंजाब-भर में नहीं मिलेगा।

'हाँ, देश क्या है, स्वर्ग है। मैं तो लड़ाई के बाद सरकार से दस घुमा (ज़मीन की नाप)

ज़मीन यहाँ माँग लूँगा और फलों के बूटे लगाऊँगा।'

'लाढ़ी होराँ (पत्नी) को भी यहाँ बुला लोगे? या वही दूध पिलानेवाली फिरंगी मेम...'

'चुप रह। यहाँ वालों को शरम नहीं।'

'देस-देस की चाल है। आज तक मैं उसे समझा न सका कि सिख तमाखू नहीं पीते। वह सिगरेट देने में हठ करती है, ओंठों में लगाना चाहती है, और मैं पीछे हटता हूँ तो समझती है कि राजा बुरा मान गया, अब मेरे मुल्क के लिए लड़ेगा नहीं।'

'अच्छा, अब बोधा सिंह कैसा है?'

'अच्छा है।'

'जैसे मैं जानता ही न होऊँ। रात-भर तुम अपने दोनों कम्बल उसे ओढ़ाते हो और आप सिगड़ी के सहारे गुज़ार करते हो। उसके पहरे पर आप पहरा दे आते हो। अपने सूखे लकड़ी के तख्तों पर उसे सुलाते हो, आप कीचड़ में पड़े रहते हो। कहीं तुम न माँदे पड़ जाना। जाड़ा क्या है, मौत है और निमोनिया से मरनेवालों को मुरब्बे (नयी नहरों के पास वर्ग-भूमि) नहीं मिला करते।'

'मेरा डर मत करो। मैं तो बुलेल की खड्ड के किनारे मरूँगा। भाई कीरतसिंह की गोदी पर मेरा सिर होगा और मेरे हाथ से लगाये हुए आम के पेड़ की छाया होगी।'

वज़ीरासिंह ने त्योरी चढ़ाकर कहा–क्या मरने-मारने की बात लगायी है? मरे जर्मनी और तुरक! हाँ भाइयो, कुछ गाओ,हाँ, कैसे–

दिल्ली शहर ते पिशौर नूँ जांदिए,

कर लेणा लौंगों दा ब्यौपार मंडिये;

कर लेणा नाड़ेदा सौदा अड़िए–

(ओय) लाणा चटाका कदुए नूँ।

कद्दू बणयाए मज़ेदार गोरिये

हुण लागा चटाका कदुए नूँ।।

कौन जानता था कि दाड़ियोंवाले, घरबारी सिख ऐसा लुच्चों का गीत गाएँगे? पर सारी

www.tntextbooks.in

ख़न्दक इस गीत से गूँज उठी और सिपाही फिर ताज़े हो गये, मानों चार दिन से सोते और मौज़ ही करते रहे हों।

(3)

दोपहर रात हो गयी है। अंधेरा है। सन्नाटा छाया हुआ है। बोधासिंह खाली बिस्कुटों के तीन टिनों पर अपने दोनों कम्बल बिछाकर और लहनासिंह के दो कम्बल और एक बरानकोट ओढ़कर सो रहा है। लहनासिंह, पहरे पर खड़ा हुआ है। एक आँख खाई के मुख पर है और एक बोधासिंह के दुबले शरीर पर। बोधा सिंह कराहा।

'क्यों बोधा भाई, क्या है?'

'पानी पिला दो।'

लहना सिंह ने कटोरा उसके मुँह से लगाकर पूछा-कहो, कैसे हो? पानी पीकर बोधा बोला–कँपनी (कँपकँनी) छूट रही है। रोम-रोम में तार दौड़ रहे हैं। दाँत बज रहे हैं।

'अच्छा, मेरी जरसी पहन लो।'

'और तुम?'

'मेरे पास सिगड़ी है और मुझे गरमी लगती है; पसीना आ रहा है।'

'ना, मैं नहीं पहनता; चार दिन से तुम मेरे लिए...'

'हाँ, याद आया। मेरे पास दूसरी गरम जरसी है। आज सबेरे ही आयी है। विलायत से मेमें बुन-बुनकर भेज रही हैं। गुरु उनका भला करें।' यों कहकर लहना अपना कोट उतारकर जरसी उतारने लगा।

'सच कहते हो?'

'और नहीं झूठ?' यों कहकर नहीं करते बोधा को उसने जबरदस्ती जरसी पहना दी और आप खाकी कोट और ज़ीन का कुरता-भर पहनकर पहरे पर आ खड़ा हुआ। मेम की जरसी की कथा केवल कथा थी।

आधा घंटा बीता। इतने में खाई के मुँह से आवाज़ आयी–'सूबेदार वज़ीरासिंह!'

'कौन, लपटन साहब? हुक्म हुजूर!'–कहकर सूबेदार तनकर फ़ौज़ी सलाम करके सामने हुआ।

'देखो, इसी दम धावा करना होगा। मील-भर की दूरी पर पूरब के कोने में एक जर्मन खाई है। उसमें पचास से ज़ियादह जर्मन नहीं हैं। इन पेड़ों के नीचे-नीचे दो खेन काटकर रास्ता है। तीन-चार घुमाव हैं। जहाँ मोड़ है वहाँ पन्द्रह जवान खड़े कर आया हूँ। तुम यहाँ दस आदमी छोड़कर सबको साथ ले उनसे जा मिलो। खन्दक छीनकर वहीं, जब तक दूसरा हुक्म न मिले, डटे रहो। हम यहाँ रहेंगे।'

'जो हुक्म।'

चुपचाप सब तैयार हो गये। बोधा भी कम्बल उतारकर चलने लगा। तब लहनासिंह ने उसे रोका। लहनासिंह आगे हुआ तो बोधा के बाप सूबेदार ने उँगली से बोधा की ओर इशारा किया। लहना सिंह समझकर चुप हो गया। पीछे दस आदमी कौन रहें, इसपर बड़ी हुज्जत हुई। कोई रहना न चाहता था। समझा-बुझाकर सूबेदार ने मार्च किया। लपटन साहब लहना की सिगड़ी के पास मुँह फेरकर खड़े हो गये और जेब से सिगरेट निकालकर सुलगाने लगे। दस मिनट बाद उन्होंने लहना की ओर हाथ बढ़ाकर कहा–लो, तुम भी पिओ।

आँख मारते-मारते लहनासिंह सब समझ गया। मुँह का भाव छिपाकर बोला–लाओ, साहब। हाथ आगे करते ही उसने सिगड़ी के उजाले में साहब का मुँह देखा। बाल देखे। तब उसका माथा ठनाका। लपटन साहब के पट्टियोंवाले बाल एक दिन में कहाँ उड़ गये और उनकी जगह क़ैदियों के से कटे हुए बाल कहाँ से आ गये?

शायद साहब शराब पिये हुए हैं, और उन्हें बाल कटवाने का मौका मिल गया है। लहना सिंह

ने जाँचना चाहा। लपटन साहब पाँच वर्ष से उसकी रेजिमेंट में थे।–'क्यों साहब, हम लोग हिन्दुस्तान कब जाएँगे?'

'लड़ाई खतम होने पर। क्यों, क्या यह देश पसंद नहीं?'

'नहीं साहब, शिकार के वे मज़े यहाँ कहाँ? याद है, पारसाल नकली लड़ाई के पीछे हम आप जगाधरी के ज़िले में शिकार करने गये थे?'

'हाँ, हाँ। वहीं जब आप खोते पर सवार थे और आपका खानसामा अब्दुल्ला रास्ते के एक

मंदिर में जल चढ़ाने को रह गया था।'

'बेशक पाजी कहीं का।'

'सामने से वह नीलगाय निकली की ऐसी बड़ी मैंने कभी न देखी थी। और आपकी एक गोली कन्धे में लगी और पुठ्टे में निकली। ऐसे अफ़सर के साथ शिकार खेलने में मज़ा है। क्यों साहब, शिमले से तैयार होकर उस नीलगाय का सिर आ गया था ना? आपने कहा था कि रेजिमेंट की मैस में लगाएँगे।'

'हाँ, पर मैंने उसे विलायत भेज दिया।'

'ऐसे बड़े-बड़े सींग! दो-दो फुट के तो होंगे?'

'हाँ, लहनासिंह, दो फुट चार इंच के थे। तुमने सिगरेट नहीं पिया?'

'पीता हूँ साहब, दियासलाई ले आता हूँ।'–कहकर लहनासिंह खन्दक में घुसा। अब उसे संदेह नहीं रहा था। उसने झटपट निश्चय कर लिया कि क्या करना चाहिए। अंधेरे में किसी सोनेवाले से वह टकराया।

(4)

'कौन? वज़ीरासिंह?'

'हाँ, क्यों लहना? क्या क़यामत आ गयी? ज़रा तो आँख लगने दी होती?'

'होश में आओ। क़यामत आयी और लपटन साहब की वर्दी पहनकर आयी है।'

'क्या'

'लपटन साहब या तो मारे गये या क़ैद हो गये हैं। उनकी वर्दी पहनकर यह कोई जर्मन आया है। सूबेदार ने इसका मुँह नहीं देखा। मैंने देखा है और बातें की हैं। सौहरा साफ़ उर्दू बोलता है, पर किताबी उर्दू। और मुझे पीने को सिगरेट दिया है।'

'तो अब?'

'अब मारे गये। धोखा है। सूबेदार कीचड़ में चक्कर काटते फिरेंगे और यहाँ खाई पर धावा

होगा। उधर उनपर खुले में धावा होगा। उठो, एक काम करो। पलटन के पैरों के निशान

www.tntextbooks.in

देखते-देखते दौड़ जाओ। अभी बहुत दूर न गये होंगे। सूबेदार से कहो कि एकदम लौट आवें, खन्दक की बात झूठ है। चले जाओ, ख़न्दक के पीछे से निकल जाओ। पत्ता तक न खुड़के। देर मत करो।'

'हुकुम तो यह है कि यहीं–'

'ऐसी-तैसी हुकुम की! मेरा हुकुम, जमादार लहनासिंह जो इस वक़्त यहाँ सबसे बड़ा अफ़सर है, उसका हुकुम है। मैं लपटन साहब की खबर लेता हूँ।'

'पर यहाँ तो तुम आठ ही हो!'

'आठ नहीं, दस लाख। एक-एक अकालिया सिख सवा लाख के बराबर होता है। चले जाओ।'लौटकर खाई के मुहाने पर लहनासिंह दीवार से चिपक गया। उसने देखा कि लपटन साहब ने जेब से बेल के बराबर तीन गोले निकाले। तीनों को जगह-जगह ख़न्दक की दीवारों में घुसेड़ दिया और तीनों में एक तार-सा बाँध दिया। तार के आगे सूत की एक गुत्थी थी जिसे सिगड़ी के पास रखा। बाहर की तरफ़ जाकर एक दियासलाई जलाकर गुत्थी पर रखने–बिजली की तरह दोनों हाथों से उल्टी बन्दूक को उठाकर लहनासिंह ने साहब की कुहनी पर तानकर दे मारा। धमाके के साथ साहब के हाथ से दियासलाई गिर पड़ी। लहनासिंह ने एक कुन्दा साहब की गर्दन पर मारा और साहब 'आँख! मीन गौट्ट!' (हाय! मेरे राम!–जर्मन) कहते हुए चित हो गये। लहनासिंह ने तीनों गोले बीनकर खन्दक के बाहर फेंके और साहब को घसीटकर सिगड़ी के पास लिटाया। जेबों की तलाशी ली। तीन-चार लिफ़ाफ़े और एक डायरी निकालकर उन्हें अपनी जेब के हवाले किया।

साहब की मूर्छा हटी। लहनासिंह हँसकर बोला–क्यों लपटन साहब? मिज़ाज़ कैसा है? आज मैंने बहुत बातें सीखीं। यह सीखा कि सिख सिगरेट पीते हैं। यह सीखा कि जगाधरी के ज़िले में नीलगायें होती हैं और उनके दो फ़ुट चार इंच के सींग होते हैं। यह सीखा कि मुसलमान खानसामा मूर्तियों पर जल चढ़ाते हैं और लपटन साहब खोते पर चढ़ते हैं। पर यह तो कहो, ऐसी साफ़ उर्दू कहाँ से सीख आये? हमारे लपटन साहब तो बिना 'डेम' के पाँच लफ्ज़ भी नहीं बोला करते थे। लहना ने पतलून की जेबों की तलाशी नहीं ली थी। साहब ने मानों जाड़े से बचने के लिए, दोनों हाथ जेबों में डाले।

लहनासिंह कहता गया–चालाक तो बड़े हो, पर माँझे का लहना इतने बरस लपटन साहब के साथ रहा है। उसे चकमा देने के लिए चार आँखें चाहिए। तीन महीने हुए एक तुरकी मौलवी मेरे गाँव में आया था। औरतों को बच्चे होने की तावीज़ बाँटता था और बच्चों को दवाई देता

था। चौधरी के बड़ के नीचे मजा (कटिया) बिछाकर हुक्का पीता रहता था और कहता था, जर्मनीवाले बड़े

पंडित हैं। वेद पढ़-पढ़कर उसमें से विमान चलाने की विद्या जान गये हैं। गौ को नहीं मारते। हिन्दुस्तान में आ जाएँगे तो गो हत्या बन्द कर देंगे। मंडी के बनियों को बहकाता था कि डाकखाने से रुपये निकाल लो सरकार का राज्य जानेवाला है। डाक-बाबू पोल्हूराम भी डर गया था। मैंने मुल्लाजी की दाढ़ी मूँड़ दी थी। और गाँव से बाहर निकालकर कहा था कि जो मेरे गाँव में अब पैर रखा तो– साहब की जेब से पिस्तौल चला और लहना की जाँघ में गोली लगी। इधर लहना की हैरानी मार्टिन के दो फ़ायरों ने साहब की कपाल-क्रिया कर दी। धड़ाका सुनकर सब दौड़ आये।

बोधा चिल्लाया, 'क्या है' लहनासिंह ने उसे तो यह कहकर सुला दिया कि 'एक हड़का हुआ, कुत्ता आया था, मार दिया।'; और, औरों से सब हाल कह दिया। सब बन्दूकें लेकर तैयार हो गये। लहना ने साफ़ा फाड़कर घाव के दोनों तरफ़ पट्टियाँ कसकर बाँधीं। घाव माँस में ही था। पट्टियों के कसने से लहू निकलना बन्द हो गया।

इतने में सत्तर जर्मन चिल्लाकर खाई में घुस पड़े। सिक्कों की बन्दूकों की बाढ़ ने पहले धावे को रोका। दूसरे को रोका। पर यहाँ थे आठ और वे सत्तर। (लहनासिंह तक-तककर मार रहा था–वह खड़ा था, और, और लेटे हुए थे।) अपने मुर्दा भाइयों के शरीर पर चढ़कर जर्मन आगे घुसे आते थे। थोड़े से मिनिटों में वे–अचानक आवाज़ आयी, 'वाह गुरुजी की फ़तह! वाह गुरुजी का खालसा!' और धड़ाधड़ बन्दूकों के फ़ायर जर्मनों की पीठ पर पड़ने लगे। ऐन मौक़े पर जर्मन दो चक्की के पाटों के बीच में आ गये। पीछे से सूबेदार हज़ारासिंह के जवान आग बरसाते थे और सामने लहना सिंह के साथियों के संगीन चल रहे थे। पास आने पर पीछेवालों ने भी संगीन पिरोना शुरू कर दिया।

एक किलकारी और–'अकाल सिक्खां दी फ़ौज आयी! वाह गुरुजी की फ़तह! वाह गुरुजी का खालसा! सत्तश्री अकाल पुरुष!!!' और लड़ाई ख़तम हो गयी। तिरसठ जर्मन या तो खेत रहे थे या कराह रहे थे। सिक्खों में पन्द्रह के प्राण गये। सूबेदार के दाहिने कन्धे में से गोली आर-पार निकल गयी। लहनासिंह की पसली में एक गोली लगी। उसने घाव को खन्दक की गीली मिट्टी से पूरलिया और बाकी का साफ़ा कसकर कमरबन्द की तरह लपेट लिया। किसी को ख़बर न हुई कि लहना को दूसरा घाव–भारी घाव लगा है।

लड़ाई के समय चाँद निकल आया था; ऐसा चाँद जिसके प्रकाश से संस्कृत-कवियों का दिया हुआ 'क्षयी' नाम सार्थक होता है। और हवा ऐसी चल रही थी जैसी कि बाणभट्ट की भाषा में 'दन्तवीणोपदेशाचार्य' कहलाती। वज़ीरासिंह कह रहा था कि कैसे मन-मन भर फ्रांस की भूमि मेरे बूटों से चिपक रही थी, जब मैं दौड़ा-दौड़ा सूबेदार के पीछे गया था। सूबेदार लहनासिंह से सारा हाल सुन और कागज़ात पाकर उसकी तुग्त-बुद्धि को सराह रहे थे और कह रहे थे कि तू न होता तो आज सब मारे जाते।

इस लड़ाई की आवाज़ तीन मील दाहिनी ओर की खाईवालों ने सुन ली थी। उन्होंने पीछे टेलीफ़ोन कर दिया था। वहाँ से झटझट दो डाक्टर और दो बीमार ढोने की गाड़ियाँ चलीं, जो कोई डेढ़ घण्टे के अन्दर-अन्दर आ पहुँची। फील्ड अस्पताल नज़दीक था। सुबह होते-होते वहाँ पहुँच जाएँगे, इसलिए मामूली पट्टी बाँधकर एक गाड़ी में घायल लिटाये गये और दूसरी में लाशें रखी गयीं। सूबेदार ने लहनासिंह की जाँघ में पट्टी बँधवानी चाही। पर उसने यह कहकर टाल दिया कि थोड़ा घाव है, सवेरे देखा जाएगा। बोधासिंह ज्वर में बर्रा रहा था। वह गाड़ी में लिट ाया गया। लहना को छोड़कर सूबेदार जाते नहीं थे। यह देख लहना ने कहा–

'तुम्हें बोधा की क़सम है और सूबेदारनी जी की सौगन्ध है, जो इस गाड़ी में न चले जाओ।'

'और तुम?'

'मेरे लिए वहाँ पहुँचकर गाड़ी भेज देना। और जर्मन मुर्दों के लिए भी तो गाड़ियाँ आती होंगी। मेरा हाल बुरा नहीं है। देखते नहीं, मैं खड़ा हूँ? वज़ीरासिंह मेरे पास है ही।'

'अच्छा, पर.....'

'बोधा गाड़ी पर लेट गया? भला आप भी चढ़ जाओ। सुनिये तो, सूबेदारनी होराँ को चिट ्टी लिखो तो मेरा मत्था टेकना लिख देना। और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था वह मैंने कर दिया।'

गाड़ियाँ चल पड़ी थीं। सूबेदार ने चढ़ते लहना का हाथ पकड़कर कहा, 'तूने मेरे और बोधा के प्राण बचाये हैं। लिखना कैसा? साथ ही घर चलेंगे। अपनी सूबेदारनी से तू ही कह देना। उसने क्या कहा था?'

'अब आप गाड़ी पर चढ़ जाओ। मैंने जो कहा वह लिख देना और कह भी देना।'

www.tntextbooks.in

गाड़ी के जाते ही लहना लेट गया। 'वज़ीरा, पानी पिला दे और मेरा कमरबन्द खोल दे। तर हो रहा है।'

(5)

मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ़ हो जाती है। जन्म-भर की घटनाएँ एक-एक करके सामने आती हैं। सारे दृश्यों के रंग साफ़ होते हैं। समय की धुंध बिलकुल उनपर से हट जाती है।

लहनासिंह बारह वर्ष का है। अमृतसर में मामा के यहाँ आया हुआ है। दहीवाले के यहाँ, सब्ज़ीवाले के यहाँ, हर कहीं उसे एक आठ वर्ष की लड़की मिल जाती है। जब वह पूछता है, तेरी

कुड़माई हो गयी, तब 'धत्' कहकर वह भाग जाती है। एक दिन उसने वैसा ही पूछा तो उसने कहा, 'हाँ, कल हो गयी। देखते नहीं यह रेशम के फूलोंवाला सालू? सुनते ही लहना सिंह को दुःख हुआ। क्रोध हुआ। क्यों हुआ?

'वज़ीरासिंह, पानी पिला दे।'

पच्चीस वर्ष बीत गये। अब लहनासिंह नं. 77 राइफ़ल्स जमादार हो गया है। उस आठ वर्ष की कन्या का ध्यान ही न रहा। न मालूम वह कभी मिली थी, या नहीं। सात दिन की छुट ्टी लेकर ज़मीन के मुक़द्दमे की पैरवी करने वह अपने घर गया। वहाँ रेजिमेंट के अफ़सर की चिट्ठी मिली कि फ़ौज लाम पर जाती है, फौरन चले आओ। साथ ही सूबेदार हज़ारासिंह की चिट्ठी मिली कि मैं और बोधासिंह भी लाम पर जाते हैं, लौटते हुए हमारे घर होते जाना, साथ चलेंगे। सूबेदार का गाँव रास्ते में पड़ता था और सूबेदार उसे बहुत चाहता था। लहनासिंह सूबेदार के यहाँ पहुँचा।

जब चलने लगे, तब सूबेदार बेड़े में से निकलकर आया। बोला-लहना, सूबेदारनी तुमको जानती हैं। बुलाती हैं। जा मिल आ। सूबेदारनी मुझे जानती हैं? कब से रिजिमेंट के क्वार्टरों में तो कभी सूबेदार के घर के लोग रहे नहीं। लहनासिंह भीतर पहुँचा। दरवाज़े पर जाकर 'मत्था टेकना' कहा, असीस सुनी। लहनासिंह चुप।

'मुझे पहचाना?'

'नहीं।'

'तेरी कुड़माई हो गयी?–धत्–कल हो गयी; देखते नहीं रेशमी बूटोंवाला सालू? अमृतसर में.....'भावों की टकराहट से मूर्छा खुली। करवट बदली। पसली का घाव बह निकला।

'वज़ीरा, पानी पिला– उसने कहा था।

स्वप्न चल रहा है। सूबेदारनी कह रही है–मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया। एक काम कहती हूँ। मेरे तो भाग फूट गये। सरकार ने बहादुरी का खिताब दिया है, लायलपुर में ज़मीन दी है, आज नमकहलाली का मौक़ा आया है। पर सरकार ने हम तीमियों (स्त्रियों) की एक घघरिया पलटन क्यों न बना दी जो मैं भी सूबेदारजी के साथ चली जाती? एक बेटा है। फ़ौज़ में भर्ती हुए उसे एक ही बरस हुआ। उसके पीछे चार और हुए, पर एक भी नहीं जिया।' सूबेदारनी रोने लगी। अब दोनों जाते हैं। मेरे भाग! तुम्हें याद है, एक दिन तांगेवाले का घोड़ा दहीवाले की दूकान के पास बिगड़ गया था। तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे। आप घोड़े की लातों में चले गये थे और मुझे उठाकर दूकान के तख्ते पर खड़ा कर दिया था। ऐसे ही इन दोनों को बचाना, यह मेरी भिक्षा है। तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ।'

रोती-रोती सूबेदारनी ओबरी में चली गयी। लहना भी आँसू पोंछता हुआ बाहर आया।

'वज़ीरासिंह, पानी पिला–उसने कहा था।'

लहना का सिर अपनी गोद में रखे वज़ीरासिंह बैठा। जब माँगता है, तब पानी पिला देता है। आधे घंटे तक लहना चुप रहा, फिर बोला–

'कौन? कीरतसिंह?'

वज़ीरा ने कुछ समझकर कहा, 'हाँ।'

'भइया, मुझे और ऊँचा कर ले। अपने पट्ट पर मेरा सिर रख ले।' वज़ीरा ने वैसा ही किया।

'हाँ, अब ठीक है। पानी पिला दे। बस। अब के हाड़ (ष्आाढ़) में यह आम खूब फलेगा। चाचा-भतीजा दोनों यहीं बैठकर आम खाना। जितना बड़ा तेरा भतीजा है, उतना ही यह आम है। जिस महीने में उसका जन्म हुआ था, उसी महीने में मैंने इसे लगाया था।'

वज़ीरासिंह के आँसू टप-टप टपक रहे थे।

कुछ दिन पीछे लोगों ने अखबारों में पढ़ा–'फ्रांस और बेलजियम-68--वीं सूची-मैदान में घावों से मरा–नं. 77 सिख राइफ़ल्स जमादार लहनासिंह।'

www.tntextbooks.in

अभ्यास

I. कठिन शब्दार्थ

इक्का - एक घोड़े की गाड़ी; मरहम - औषधियाँ का लेप; चाबुक - कोडा; बिरादारीवाला - बंधु; मजाल - बल; कढ़ा हुआ - खींचा हुआ; खन्दक - खाई; धावा करना - चढ़ाई करना; सिगड़ी - छोटी अंगीठी

II. एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. उसने कहा था कहानी का लेखक कौन हैं?
2. हजारासिंह और बोधसिंह कौन थे?
3. सूबेरदानी ने लहनासिंह से क्या प्रार्थना की?
4. जर्मन का एक सैनिक अफ़सर किस वेश में आया?
5. लहनासिंह ने युद्ध मे घायल होकर किसको बचाया?
6. लहनासिंह ने क्यों अपने प्राण देकर सूबेदार और उसके बेटे को बचाया?

III. पाँच-पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. अमृतसर बाजार में हुई घटना का वर्णन कीजिए।
2. पच्चीस साल बाद लहनासिंह किस से मिला और मिलनेवाली की प्रार्थना क्या थी?
3. लहनासिंह ने बाप और बेटे को कैसे बचाया?
4. कहानी के शीर्षक की विशेषता बताइए?

www.tntextbooks.in

www.tntextbooks.in

कहानी 2 पूस की रात

– मुंशी प्रेमचंद्र

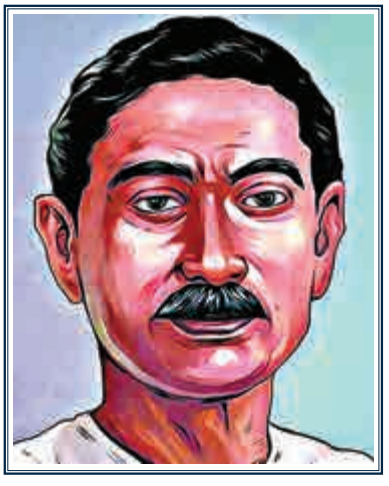

लेखक परिचय:- कहानी का लेखक हैं मुंशी प्रेम्चंद, हिंदी साहित्य की दुनिया में उनका नाम अग्रगण्य है। उनका जन्म काशी जिले के लमही गाँव में 31जुलाई सन् 1880 में हुआ। उनका असली नाम धनपताराय था।वे पहले नवाबराय के नाम से उर्दू में लिखा करते थे। तदन्तर प्रेमचंद के नाम से हिंदी के क्षेत्र में आये और विश्वविखयात लेखक बने। वे आजीवन साहित्य सेवा कर रहे थे। उनकी कलम से तीन सौ से अधिक कहानियाँ निकल चुकी हैं और दस पूरे उपन्यास निकल चुके हैं। वे उपन्यास सम्राट के यश को प्राप्त कर साहित्य क्षेत्र में शासन करते थे। सेवासदर, निर्मला, गोदान, गबन आदि आप के प्रसिद्ध उपन्यास माने जाते हैं। उनका मरण सन 1936 में हुआ। उनको रचनाओं में समज सुधार,ग्रामिणों की सपस्या राष्ट्रीय भावना की झलक आदि देखने को मिलती हैं। यथार्थ चित्रण सरस वर्णन आदि उनकी शैली की विशेषताएँ हैं। प्रस्तुत कहानी इसका उत्तम नमूना है। पूस की रात में भारतीय किसान की लाचारी का यथार्थ चित्रण किया है।

हल्कू ने आकर स्त्री से कहा - सहना आया है। लाओ, जो रुपये रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।

मुन्नी झाड़ू लगा रही थी। पीछे फिरकर बोली - तीन ही रुपये हैं, दे दोगे तो कंबल कहाँ से आवेगा? माघ-पूस की रात हार में कैसे कटेगी? उससे कह दो, फसल पर दे देंगे। अभी नहीं।

हल्कू एक क्षण अनिश्चित दशा में खड़ा रहा। पूर सिर पर आ गया, कम्मल के बिना हार में रात को वह किसी तरह सो नहीं सकता। मगर सहना मानेगा नहीं, घुड़कियाँ जमावेगा, गालियाँ देगा। बला से जाड़ों में मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी। यह सोचता हुआ वह अपना भारी-भरकम डील लिए हुए (जो उसके नाम को झूठ सिद्ध करता था) स्त्री के समीप आ गया और खुशामद करके बोला – दे दे, गला तो छूटे। कम्मल के लिए कोई दूसरा उपाय सोचूँगा।

मुन्नी उसके पास से दूर हट गई और आँखें तरेरती हुई बोली - कर चुके दूसरा उपाय। जरा सुनूँ तो कौन-सा उपाय करोगे? कोई खैरात दे देगा कम्मल? न जाने कितनी बाकी है, जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। मैं कहती हूँ, तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते? मर-मर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जनम हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आये। मैं रुपये न दूँगी, न दूँगी।

हल्कू उदास होकर बोला - तो क्या गाली खाऊँ?

मुन्नी ने तड़पकर कहा - बाली क्यों देगा, क्या उसका राज है?

मगर यह कहने के साथ ही उसकी तनी हुई भौंहे ढ़ीली पड़ गई। हल्कू के उस वाक्य में जो कठोर सत्य था, वह मानो एक भीषण जंतु की भाँति उसे घूर रहा था।

उसने जाकर आले पर से रुपये निकाले और लाकर हल्कू के हाथ पर रख दिए। फिर बोली - तुम छोड़ दो अबकी से खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी तो खाने को मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती हैं। मजूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उस पर धौंस।

हल्कू ने रुपये लिये और इस तरह बाहर चला, मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा हो। उसने मजूरी से एक-एक पैसा काट-काटकर तीन रुपये कम्बल के लिए जमा किए थे। वह आज निकले जा रहे थे। एक-एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।

उसने जाकर आले पर से रुपये निकाले और लाकर हल्कू के हाथ पर रख दिए। फिर बोली - तुम छोड़ दो अबकी से खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी तो खाने को मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती हैं। मजूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उस पर धौंस।

हल्कू ने रुपये लिये और इस तरह बाहर चला, मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा हो। उसने मजूरी से एक-एक पैसा काट-काटकर तीन रुपये कम्बल के लिए जमा किए थे। वह आज निकले जा रहे थे। एक-एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।

(2)

पूस की अँधेरी रात। आकाश पर तारे भी ठिठुरते हुए मालूम होते थे। हल्कू अपने खेत

के किनारे ऊख के पत्तें की एक छतरी के नीचे बाँस के खटोले पर अपनी पुरानी गाढ़े पड़ा काँप रहा था। खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुँह डाले सर्दी से कूँ-कूँ कर रहा था। दो में से एक को भी नींद न आती थी।

हल्कू ने घुटनियों को गरदन में चिपकाते हुए कहा - क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था, घर में पुआल पर लेट रह, तो यहाँ क्या लेने आये थे? अब खाओ ठंड, मैं क्या करूँ? जानते थे, मैं यहाँ हलुआ-पूरी खाने आ रहा हूँ दौड़े-दौड़े आगे-आगे चले आये। अब रोओ नानी के नाम को।

जबरा ने पड़े-पड़े दुम हिलायी और अपनी कूँ-कूँ को दीर्घ बनाता हुआ एक बार जम्हाई लेकर चुप हो गया। उसकी श्वान बुद्धि ने शायद ताड़ लिया, स्वामी को मेरी कूँ-कूँ से नींद नहीं आ रही है।

हल्कू ने हाथ निकालकर जबरा की ठंडी पीठ सहलाते हुए कहा-कल से मत आना मेरे साथ, नहीतो ठंडे हो जाओगे। यह रांड पछुआ न जाने कहाँ से बरफ़ लिए आ रही है। उठूँ, फिर एक चिलम भरूँ। किसी तरह रात तो कटे। आठ चिलम तो पी चुका। यह खेती का मजा है। और एक भगवान ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा आए तो गरमी से घबड़ाकर भागे। मोटे-मोट ` गद्दे, लिहाफ, कम्बल। मजाल है, जाड़ का गुजर हो जाए। तकदीर की खूबी। मजूरी हम करें मजा सरे लूटें।

हल्कू उठा, गइढ़े में से जरा-सी आग निकालकर चिलम भरी। जबरा भी उठ बैठा।

हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा- पिएगा चिलम् जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ जरा, मन बदल जाता है।

जबरा ने उनके मुँह की ओर प्रेम से छलकती हुई आँखों से देखा।

हल्कू-आज और जाड़ा खा ले।कल से मैं यहाँ पुआल बिछा दूँगा। उसी में घुसकर बैठना तब जाड़ा न लगेगा।

जबरा ने अपने पंजे उसकी घुटनियों पर रख दिए और उसके मुँह के पास अपना मुँह ले गया। हल्कू को उसकी गर्म साँस लगी।

चिलम पीकर हल्कू फिर लेटा और निश्चय करने लेटा कि चाहे कुछ हो अबकी सो जाऊँगा पर एक ही क्षण में उसके हृदय में कम्पन होने लगा। कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट पर जाड़ा किसी पिशाच की भाँति उसकी छाती को दबाए हुए था।

जब किसी तरह न रहा गया, उसने जबरा को धीरे से उठाया और उसके सिर को थपथपाकर उसे अपनी गोद में सुला लिया। कुत्ते की देह से जाने कैसी दुर्गंध आ रही थी, पर वह उसे अपनी गोद में चिपटाए हुए ऐसे सुख का अनुभव कर रहा था, जो इधर महीनों से उसे न मिला था। जबरा शायद समझ रहा था कि स्वर्ग यहीं है और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा की गंध तक न थी। अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी ही तत्परता से गले लगाता। वह अपनी दीनता से आहत न था, जिसने आज उसे इस दशा को पहुँचा दिया। नहीं, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिए थे और उनका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था।

सहसा जबरा ने किसी जानवर की आहट पाई। इस विशेष आतमीयता ने उसमें एक नई स्फूर्ति पैदा कर दी थी, जो हवा के ठंडे झोकों को तुच्छ समझती थी। वह झपटकर उठा और छपरी से बाहर आकर भूँकने लगा। हल्कू ने उसे कई बार चुमकारकर बुलाया पर वह उसके पास न आया। हार में चारों तरफ़ दौड़-दौड़कर भूँकता रहा। एक क्षण के लिए आ भी जाता, तो तुरंत ही फिर दौड़ता। कर्तव्य उसके हृदय में अरमान की भाँति ही उछल रहा था।

(3)

एक घंटा और गुजर गया। रात ने शीत को हवा से धधकाना शुरू किया। हल्कू उठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसमें छिपा लिया, फिर भी ठंड कम न हुई; ऐसा जान पड़ता था, सारा रक्त जम गसर है, धमनियों में रक्त की जगह हिम बह रही है। उसने झुककर आकाश की ओर देखा, अभी कितनी रात बाकी है। सप्तर्षि अभी आकाश में आधे भी नहीं चढ़े। ऊपर आ जाएँगे तब कहीं सबेरा होगा। अभी पहर से ऊपर रात है।

हल्कू के खेत से कोई एक गोली के टप्पे पर आमों का एक बाग था। पतझड़ शुरु हो गई थी।बाग में पत्तियों का ढेर लगा हुआ था। हल्कू ने सोचा, चलकर पत्तियों बटोरूँ और उन्हें जलाकर खूब तापूँ। रात को कोई मुझे पत्तियाँ बटोरते देखे तो समझे, कोई भूत है। कौन जाने, कोई जानवर ही छिपा बैठा हो, मगर अब तो बैठे नहीं रहा जाता।

उसने पास के अरहर के खेत में जाकर कई पौधे उखाड़ लिए और उनका एक झाड़ू बनाकर हाथ में सुलगता हुआ उपला लिये बगीचे की तरफ़ चला। जबरा ने उसे आते देखा, पास आया और दुम हिलाने लगा।

हल्कू ने कहा - अब तो नहीं रहा जाता जबरू। चलो बगीचे में पत्तियाँ बटोरकर तापें। ट ाँटे हो जाएँगे, तो फिर आकर सोएँगे। अभी तो बहुत रात है।

जबरा ने कूँ-कूँ करके सहमति प्रकट की और आगे बगीचे की ओर चला। बगीचे में खूब अँधेरा छाया हुआ था और अंधकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था। वृक्षों से ओस की बूँदे टप-टप नीचे टपक रही थीं।

एकाएक एक झोंका मेहंदी के फूलों की खुशबू लिए हुए आया।

हल्कू ने कहा - कैसी अच्छी महक की आई जबरू। तुम्हारी नाक में भी तो सुगधं आ रही है?

जबरा को कहीं जमीन पर एक हड्डी पड़ी मिल गई थी। उसे चिंचोड़ रहा था।

हल्कू ने आग जमीन पर रख दी और पत्तियाँ बटोरने लगा। जरा देर में पत्तियों का ढेर लग गया। हाथ ठिठुरे जाते थे नंगे पाँव गले जाते थे। और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था। इसी अलाव में वह ठंड को जलाकर भस्म कर देगा।

थोड़ी देर में अलाव जल उठा। उसकी लौ ऊपरवाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर भागने लगी। उस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होने थे, मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर संभाले हुए हों। अंधकार के उस अनंत सागर में यह प्रकाश एक नौका के सामन हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था।

हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था। एक क्षण में उसने दोहर उतारकर बगल में दबा ली, दोनों पाँव फैला दिए, मानो ठंड को ललकार रहा हो, 'तेरे जी में आए सो कर।' ठंड़ की असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा न सकता था।

उसने जबरा से कहा - क्यों जब्बर, अब ठंड नहीं लग रही है?

जब्बर ने कूँ-कूँ करके मानो कहा - अब क्या ठंड लगती ही रहेगी?

'पहले से यह उपाय न सूझा, नहीं इतनी ठंड क्यों खाते।'

जब्बर ने पूँछ हिलायी।

'अच्छा आओ, इस अलाव को कूदकर पार करें। देखें, कौन निकल जाता है। अगर जल गए बचा, तो मैं दवा न करूँगा।

जब्बर ने उस अग्नि-राशि की ओर कातर नेत्रों से देखा।

'मुन्नी से कल न कह देना, नहीं लड़ाई करेगी।'

www.tntextbooks.in

यह कहता हुआ वह उछला और उस अलाव के ऊपर से साफ़ निकल गया। पैरों में जरा लपट लगी; पर वह कोई बात न थी। जबरा आग को गिर्द घूमकर उसके पास आ खड़ा हुआ।

हल्कू ने कहा - चलो-चलो, इसकी सही नहीं। ऊपर से कूदकर आओ। वह फिर कूदा औल अलाव के इस पार आ गया।

(4)

पत्तियाँ जल चुकी थीं। बगीचे में फिर अँधेरा छा गया था। राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर जरा जाग उठती थी; पर एक क्षण में फिर आँखें बंद कर लेती थी।

हल्कू ने फिर चादर ओढ़ ली और गर्म राख के पास बैठा हुआ एक गीत गुनगुनाने लगा। उसके बदन में गर्मी आ गई थी; पर ज्यों-ज्यों शीत बढ़ती जाती थी, उसे आलस्य दबाए लेता था।

जबरा जोर से भूँककर खेत की ओर भागा। हल्कू को ऐसा मालूम हुआ कि जानवरों का एक झुण्ड खेत में आया है। शायद नीलगायों का झुण्ड था। उनके कूदने-दौड़ने की आवाज़ें साफ कान में आ रही थीं। फिर ऐसा मालूम हुआ कि खेत में चर रही हैं। उनके चबाने की आवाज़ चर-चर सुनाई देने लगी।

उसने दिल में कहा - नहीं, जबरा के होते कोई जानवर खेत में नहीं आ सकता। नोच ही डाले। मुझे भ्रम हो रहा है। कहाँ? अब तो कुछ नहीं सुनाई देता। मुझे भी कैसा धोखा हुआ।

उसने जोर से आवाज लगायी -जबरा, जबरा ।

जबरा भूँकता रहा। उसके पास न आया।

फिर खेत के चरे जाने की आहट मिली। अब वह अपने को धोखा न दे सका। उसे अपनी जगह से हिलला जहर लग रहा था। कैसा दँदाया हुआ बैठा था। इस जाड़े-पाले में खेत में जान, जानवरों के पीछे दौड़ना असह्य जान पड़ा। वह अपनी जगह से न हिला।

उसने जोर से आवाज़ लगायी - हिलो! हिलो! हिलो!!

जगरा फिर भूँक उठा। जानवर खेत चर रहे थे। फसल तैसार है। कैसी अच्छी खेती थी; पर ये दुष्ट जानवर उसका सर्वनाश किए डालते हैं।

हल्कू पक्का इरादा करके उठा और दो-तीन कदम चला; पर एकाएक हवा का ऐसा ठंडा,

चुभनेवाला, बिच्छू के डंक का-सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास आ बैठा और राख को कुरेदकर अपनी ठंडी देह को गर्माने लगा।

जबरा अपना गला फाड़े डालता था, नील गायें खेत का सफाया किए डालती थीं और हल्कू गर्म राख के पास शांत बैठा हुआ था। अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों तरफ़ से जकड़ रखा था।

उसी राख के पास गर्म जमीन पर वह चादर ओढ़ कर सो गया।

सबेरे जब उसकी नींद खुली, तब चारों तरफ़ धूप फैल गई थी और मुन्नी कह रही थी – क्या आज सोते ही रहोगे? तुम यहाँ आकर रम गए और उधर सारा खेत चौपट हो गया।

हल्कू ने उठकर कहा - क्या तू खेत से होकर आ रही है?

मुन्नी बोली – हाँ, सारे खेत का सत्यनाश हो गया। भला, ऐसा भी कोई सोता है। तुम्हारे यहाँ मँड़ैया डालने से क्या हुआ?

हल्कू ने बहाना किया– मैं मरते-मरते बचा, तुझे अपने खेत की पड़ी है।पेट में ऐसा दरद हुआ, ऐसा दरद हुआ कि मैं ही जानता हूँ।

दोनों फिर खेत के डाँड पर आये। देखा, सारा खेत रौंदा पड़ा हुआ है और जबरा मँड़ैया के नीचे चित लेटा है, मानों प्राण ही न हो।

दोनों खेत की दशा देख रहे थे। मुन्नी के मुख पर उदासी छायी थी, पर हलकू प्रसन्न था।

मुन्नी ने चिंतित होकर कहा - अब मजूरी करके मालगुजारी करने पड़ेगी।

हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा - रात को ठंड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।

अभ्यास

I. कठिन शब्दार्थ

खुशामद - चापलूसी; आत्मीयता - अपनापन / मैत्री; चुभकारना - पुचकारना; अलाव - गरमाने की आग-कौडा; गुनगुनाना - बहुत धीमे स्वर में गाना; तत्परता - बिना समय गँवायें।

II. एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिएः-

1. पूस की रात कहानी की आधार भूमि में क्या है?

www.tntextbooks.in

2. पूस की रात कहानी के लेखक कौन है?

3. सहना हल्कू के घर क्यों आया था?

4. हल्कू ने कंबल के लिए कितना रुपये जमा किये थे?

5. हल्कू की स्त्री का नाम क्या है?

6. हल्कू के कुत्ता का नाम क्या है?

7. जाड़ा किसकी भांति हल्कू की छाती को दबा हुआ था?

8. हल्कू के खेत की फसल को किन प्राणियों के झुंड ने सत्यनाश किया था?

9. प्रेमचंद का असली नाम क्या था?

10. उजड़े खेत को देखकर मुन्नी ने क्या किया?

III. पाँच-पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिएः-

1. सहना का चरित्र चित्रण कीजिए।

2. पूस की रात कहानी का मुख्य विषय क्या है?

3. किसानों की खराब स्थिति के लिए कौन जिम्मेदार है?

4. हल्कू और जबरा के रिश्ते का वर्णन कीजिए?

कहानी 3 दोपहर का भोजन

-- **अमरकांत**

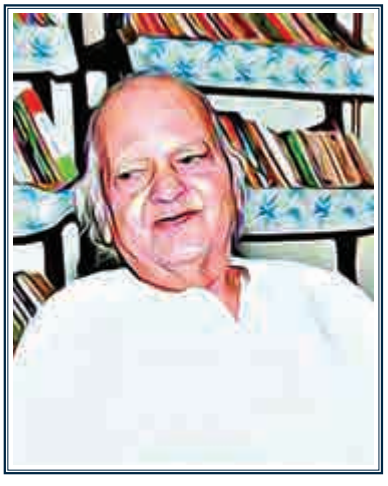

लेखक परिचयः- अमरकांत का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के नगरा गाँव में हुआ। उनका मूल नाम श्रीराम वर्मा है, उनकी आरंभिक शिक्षा बलिया में हुई। तत्पश्चात् उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी.ए. की डिग्री प्राप्त की। साहित्य सृजन में उनकी बचपन से ही रुचि थी।

अमरकांत ने अपने साहित्यिक जीवन की शुरुआत पत्रकारिता से की। दैनिक पत्र सैनिक। दैनिक अमृत पत्रिका तथा दैनिक भारत के संपादकीय विभागों में भी काम किया।

अमरकांत अपनी कहानियों में शहरी और ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। वर्तमान समाज में व्याप्त अमानवीयता, हृदयहीनता, पाखंड, आडंबर आदि को उन्होंने अपनी कहानियों का विषय बनाया है। उनकी शैली की सहजता और भाषा की सजीवता आपके लेखन की विशेषताएँ है। उनके जीवन की कथा उसी ढंग से कहते हैं, जिस ढंग से जीवन चलता है।

सिद्धेश्वरी ने खाना बनाने के बाद चुल्हे को बुझा दिया और दोनों घुटनों के बीच सिर रखकर शायद पैर की उँगलियाँ या जमीन पर चलते चींटे-चींटियों को देखने लगी। अचानक उसे मालूम हुआ कि बहुत देर से उसे प्यास लगी है। वह मतवाले की तरह उठी और गगरे से लोटा-भर पानी लेकर गट-गट चढ़ा गई। खाली पानी उसके कलेजे में लग गया और वह 'हाय राम' कहकर वहीं जमीन पर लेट गई।

लगभग आधे घंटे तक वहीं उसी तरह पड़ी रहने के बाद उसके जी में जी आया। वह बैठ गई, आँखों को मल-मलकर इधर-उधर देखा और फिर उसकी दृष्टि ओसारे में अध-टूटे खटोले पर सोचे अपने छः वर्षीय लड़के प्रमोद पर जम गई। लड़का नंग-धड़ंग पड़ा था। उसके गले तथा छाती की हड्डियाँ साफ़ दिखाई देती थीं। उसके हाथ-पैर बासी ककडियों की तरह सूखे तथा बेजान पड़े थे और उसका पेट हँडिया की तरह फूला हुआ था। उसका मुँह खुला हुआ था और उस पर अनगिनत मक्खियाँ उड़ रही थीं।

वह उठी, बच्चे के मुँह पर अपना एक फटा, गंदा ब्लाउज डाल दिया और एक-आध मिनट सुन्न खड़ी रहने के बाद बाहर दरवाज़े पर जाकर किवाड़ की आड़ से गली निहारने लगी। बारह बज चुके थे।धूप अत्यंत तेज़ थी और कभी-कभी एक-दो व्यक्ति सिर पर तौलिया या गमछा रखे हुए या मज़बूती से छाता ताने हुए फुर्ती के साथ लपकते हुए सामने से गुजर जाते।

दस-पंद्रह मिनट तक वह उसी तरह खड़ी रही, फिर उसके चेहरे पर व्यग्रता फैल गई और उसने आसमान तथा कड़ी धूप की ओर चिंता से देखा। एक-दो क्षण बाद जब उसने सिर को किवाड़ से काफ़ी आगे बढ़कर गली के छोर की तरफ़ निहारा, तो उसका बड़ा लड़का रामचंद्र धीरे-धीरे घर की ओर सरकता नजर आया।

उसने फुर्ती से एक लोटा पानी ओसारे की चौकी के पास नीचे रख दिया और चौके में जाकर खाने के स्थान को जल्दी-जल्दी पानी से लीपने-पोतने लगी। वहाँ पीढ़ा रखकर उसने सिर को दरवाज़े की ओर घुमाया ही था कि रामचंद्र ने अंदर कदम रखा।

रामचंद्र आकर धम-से चौकी पर बैठ गया और फिर वहीं बेजान-सा लेट गया। उसका मुँह लाल तथा चढ़ा हुआ था। उसके बाल अस्त्-व्यस्त थे और उसके फटे-पुराने जूतों पर गर्द जमी हुई थी।

सिद्धेश्वरी की पहले हिम्मत नहीं हुई कि उसके पास जाए और वह वहीं से भयभीत हिरनी की भाँति सिर उचका-घुमाकर बेटे को व्यग्रता से निहारती रही। किंतु लगभग दस मिनट बीतने के पश्चात् भी जब रामचंद्र नहीं उठा, तो वह घबरा गई। पास जाकर पुकार, 'बड़कू, बड़कू! लेकिन उसके कुछ उत्तर न दे पर डर गई और लड़के की नाक के पास हाथ रख दिया। साँस ठीक से चल रही थी। फिर सिर पर हाथ रखकर देखा, बुखार नहीं था। हाथ के स्पर्श से रामचंद्र ने आँखें खोलीं। पहले असने माँ की ओर सुस्त नजरों से देखा, फिर झट से उठ बैठा। जूते निकालने और नीचे रखे लोटे के जल से हाथ-पैर धोने के बाद वह यंत्र की तरह चौकी पर आकर बैठ गया।

सिद्धेश्वरी ने डरते-डरते पूछा, 'खाना तैयार है, यहीं लाऊँ क्या"?

रामचंद्र ने उठते हुए प्रश्न किया, 'बाबू जी खा चुके?"

सिद्धेश्वरी ने चौके की ओर भागते हुए उत्तर दिया, 'आते ही होंगे'।

रामचंद्र पीढ़े पर बैठ गया। उसकी उम्र लगभग इक्कीस वर्ष थी लंबा, दुबला-पतला, गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें तथा होंठों पर झुरियाँ। वह एक स्थानीय दैनिक समाचार पत्र के दफ़्तर में अपनी तबीयत से प्रूफ़ रीडरी का काम सीखता था। पिछले साल ही उसने इंटर पास किया था।

सिद्धेश्वरी ने खाने की थाली लाकर सामने रख दी और पास ही बैठकर पंखा करने लगी। रामचंद्र ने खाने की ओर दार्शनिक की भाँति देखा। कुल दो रोटियाँ, भर कटोरा पनियाई दाल और चने की तली तरकारी। रामचंद्र ने रोटी के प्रथम टुकड़े को निगलते हुए पूछा, 'मोहन कहाँ है? बड़ी कड़ी धूप हो रही है।'मोहन सिद्धेश्वरी का मँझला लड़का था। उसकी उम्र अट्ठारह वर्ष थी और वह इस साल हाई स्कूल का प्राइवेट इम्तिहान देने की तैयारी कर रहा था। वह न मालूम कब से घर से गायब था और

सिद्धेश्वरी को स्वयं पता नहीं था कि वह कहाँ गया है।

किंतु सच बोलने की उसकी तबीयत नहीं हुई और सने झूठ-मूठ कहा, 'किसी लड़के के यहाँ पढ़ने गया है, आता ही होगा। दिमाग उसका बड़ा तेज है और उसकी तबीयत चौबीसों घंट ` पढ़ने में ही लगी रहती है। हमेशा उसी की बात करता रहता है।

रामचंद्र ने कुछ नहीं कहा। एक टुकड़ा मुँह में रखकर भरा गिलास पानी पी गया, फिर खाने में लग गया। वह काफ़ी छोटे-छोटे टुकड़े तोड़कर उन्हें धीरे-धीरे चबा रहा था।

सिद्धेश्वरी भय तथा आतंक से अपने बेटे को एकटकनहार रही थी। कुछ क्षण बीतने के बाद डरते-डरते उसने पूछा, 'वहाँ कुछ हुआ क्या?'

रामचंद्र ने अपनी बड़ी-बड़ी भवहीन आँखों से अपनी माँ को देखा। फिर नीचे सिर करके कुछ रुखाई से बोला, 'समय आने पर सब ठीक हो जाएगा'।

सिद्धेश्वरी चुप रही। धूप और तेज हो गई थी। छोटे आँगन के ऊपर आसमान में बादल के एक-दो टुकड़े पाल की नावों की तरह तैर रहे थे। बाहर की गली से गुजरते हुए खड़खड़िया इक्के की आवाज़ आ रही थी और खटोले पर सोए बालक की साँस का खर-खर शब्द सुनाई दे रहा था।

रामचंद्र ने अचानक चुप्पी को भंग करते हुए पूछा, 'प्रमोद खा चुका?'

सिद्धेश्वरी ने प्रमोद की ओर देखते हुए उदास स्वर में उत्तर दिया, 'हाँ, खा चुका।' 'रोया तो नहीं था?'

सिद्धेश्वरी फिर झूठ बोल गई, 'आज तो सचमुच नहीं रोया। वह बड़ा ही होशियार हो गया है। कहता था, बड़का भैया के यहाँ जाऊँगा। ऐसा लड़का.....'

पर वह आगे कुछ न बोल सकी, जैसी उसके गले में कुछ अटक गया। कल प्रमोद ने

रेवड़ी खाने की ज़िद पकड़ ली थी और उसके लिए डेढ़ घंटे तक राने के बाद सोया था।

रामचंद्र ने कुछ आश्चर्य के साथ अपनी माँ की ओर देखा और फिर सिर नीचा करके कुछ तेज़ी से खाने लगा।

थाली में जब रोटी का केवल एक टुकड़ा शेष रह गया, तो सिद्धेश्वरी ने उठने का उपक्रम करते हुए प्रश्न किया, 'एक रोटी और लाती हूँ?'

रामचंद्र हाथ से मना करते हुए हड़बड़ाकर बोल पड़ा, 'नहीं-नहीं जरा भी नहीं। मेरा पेट पहले ही भर चुका है। मैं तो यह भी छोड़नेवाला हूँ। बस, अग नहीं।

सिद्धेश्वरी ने ज़िद की, 'अच्छा, आधी ही सही।'

रामचंद्र बिगड़ उठा, 'अधिक खिलाकर बीमार डालने की तबीयत है क्या? तुम लोग ज़रा भी नहीं सोचते हो। बस, अपनी ज़िद। भूख रहती तो क्या ले नहीं लेता?'

सिद्धेश्वरी जहाँ की तहाँ बैठी ही रह गई। रामचंद्र ने थाली में बचे टुकड़े से हाथ खींच लिया और लोटे की ओर देखते हुए कहा, 'माँ, पानी लाओ।'

सिद्धेश्वरी लोटा लेकर पानी लेने चली गई। रामचंद्र ने कटोरे को उँगलियों से बजाया, फिर हाथ को थाल में रख दिया। एक-दो क्षण बाद रोटी के टुकड़े को धीरे-से हाथ से उठाकर आँख से निहारा और अंत में इधर-उधर देखने के बाद टुकड़े को मुँह में इस सरलता से रख लिया, जैसे वह भोजन का ग्रास न होकर पान की बीड़ा हो।

मँझला लड़का मोहन आते ही हाथ-पैर धोकर पीढ़े पर बैठ गया। वह कुछ साँवला था और उसकी आँखें छोटी थीं। उसके चेहरे पर चेचक के दाग थे। वह अपने भाई ही की तरह दुबला पतला था, किंतु उतना लंबा न था। वह उम्र की अपेक्षा कहीं अधिक गंभीर और उदास दिखाई पड़ रहा था।

सिद्धेश्वरी ने उसके सामने थाली रखते हुए प्रश्न किया, 'कहाँ रह गए थे बेटा? भैया पूछ रहा था।'

मोहन ने रोटी के एक बड़े ग्रास को निगलने की कोशिश करते हुए अस्वाभाविक मोटे स्वर में जवाब दिया, 'कहीं तो नहीं गया था। यहीं पर था।'

सिद्धेश्वरी वहीं बैठकर पंखा डुलाती हुई इस तरह बोली, जैसे स्वप्न में बड़बड़ा रही हो,

बड़का तुम्हारी बड़ी तारीफ़ कर रहा था। कह रहा था, मोहन बड़ा दिमागी होगा, उसकी तबीयत चौबीसों घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है।' यह कहकर उसने अपने मँझले लड़के की ओर इस तरह देखा, जैसे उसने कोई चोरी की हो।

मोहन अपनी माँ की ओर देखकर फीकी हँसी हँस पड़ा और फिर खाने में जुट गया। वह परोसी गई दो रोटियों में से एक रोटी, कटोरे की तीन-चौथाई दाल तथा अधिकांश तरकारी साफ़ कर चुका था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इन दोनों लड़कों से उसे बहुत डर लगता था। अचानक उसकी आँखें पर वह दूसरी ओर देखने लगी।

थोड़ी देर बाद उसने मोहन की ओर मुँह फरा, तो लड़का लगभग खाना समाप्त कर चुका था।

सिद्धेश्वरी ने चौंकते हुए पूछा, 'एक रोटी देती हूँ?'

मोहन ने रसोई की ओर रहस्यमय नेत्रों से देखा फिर सुस्त स्वर में बोला, 'नहीं'।

सिद्धेश्वरी ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, 'नहीं, बेटा, मेरी कसम, थोड़ी ही ले लो। तुम्हारे भैया ने एक रोटी ली थी।'

मोहन ने अपनी माँ को गौर से देखा, फिर धीरे-धीरे इस तरह उत्तर दिया, जैसे कोई शिक्षक अपने शिष्य को समझाता है, 'नहीं रे, बस। अव्वल तो अब भूख नहीं। फिर रोटियाँ तूने ऐसी बनाई हैं कि खाई नही जातीं। न मालूम कैसी लग रही हैं। खैर, अगर तू चाहती ही है, तो कटोरे में थोड़ी दाल दे दे। दाल बड़ी अच्छी बनी है।

सिद्धेश्वरी से कुछ कहते न बना और उसने कटोरे को दाल से भर दिया।

मोहन कटोरे को मुँह से लगाकर सुड़-सुड़ पी ही रहा था कि मुशी चंद्रिका प्रसाद जूतों को खस-खस घसीटते हुए आए और राम का नाम लेकर चौकी पर बैठ गए।

सिद्धेश्वरी ने माथे पर साड़ी को कुछ नीचे खिसका लिया और मोहन दाल को एक साँस में पीकर तथा पानी के लोटे को हाथ में लेकर तेज़ी से बाहर चला गया।

दो रोटियाँ, कटोरा-भर दाल तथा चने की तली तरकारी। मुंशी चंद्रिका प्रसार पीढ़े पर पालथी मारकर बैठे रोटी के एक-एक ग्रास को इस तरह चुभला-चबा रहे थे, जैसे बूढ़ी गाय

चुगली करती है। उनकी उम्र पैंतालीस वर्ष के लागभग थी, किंतु पचास-पचपन के लगते थे। शरीर का चमड़ा झूलने लगा था, गंजी खोपड़ी आईने की भाँति चमक रही थी। गंदी धोती के ऊपर अपेक्षाकृत कुछ साफ़ बनियान तार-तार लटक रही थी।

मुंशी जी ने कटोरे को हाथ में लेकर दाल को थोड़ा सुडकते हुए पूछा, 'बड़का दिखाई नहीं दे रहा।'

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि उसके दिल में क्या हो गया है - जैसे कुछ काट रहा हो। पंखे को ज़रा और ज़ोर से घुमाती हुई बोली, 'अभी-अभी खाकर काम पर गया है। कह रहा था, कुछ दिनों में नौकरी लग जाएगी। हमेशा 'बाबू जी-बाबू जी' किए रहता है।' बोला, 'बाबू जी देवता के समान है।'

मुंशी जी के चेहरे पर कुछ चमक आई। शरमाते हुए पूछा, 'ऐ, क्या कहतथा कि बाबू जी देवता के समान हैं? बड़ा पागल है।'

सिद्धेश्वरी पर जैसे नश चढ़ गया था। उन्माद की रोगिणी की भाँति बड़बड़ाने लगी, 'पागल नहीं है, बड़ा होशियार है। उस जमाने का कोई महातमा है। मोहन तो उसकी बड़ी इज्जत करता है। आज कह रहा था कि भैया की शहर में बड़ी इज्जत होती है, पढ़ने-लिखनेवालों में बड़ा आदर होता है और बड़का तो छोटे भाइयों पर जान देता है। दुनिया में वह सब कुछ सह सकता है, पर यह नहीं देख सकता कि उसके प्रमोद को कुछ हो जाए।'

मुंशी जी दाल लगे हाथ को चाट रहे थे। उन्होंने सामने की ताक की ओर देखते हुए कुछ हँसकर कहा, 'बड़का का दिमाग तो खैर काफ़ी तेज़ है, वैसे लड़कपन में बड़ा नटखट भी था। हमेशा

खेल कूद में लगा रहता था, लेकिन यह भी बात थी कि जो सबक मैं उसे याद करने को देता था, उसे बर्राक रखता था। असल तो यह है कि तीनों लड़के काफी होशियार हैं। प्रमोद को कम समझती हो?' - यह कहकर वह अचानक जोर से हँस पड़े।

मुंशी जी डेढ़ रोटी खा चुकने के बाद एक ग्रास से युद्ध कर रहे थे। कुछ कठिनाई होने पर एक गिलास पानी चढ़ा गए। फिर खर-खर खाँसकर खाने लगे।

फिर चुप्पी छा गई। दूर से किसी आटे की चक्की की पुक-पुक आवाज़ सुनाई दे रही थी और पास के नीम के पेड़ पर बैठा कोई पंडूक लगातार बोल रहा था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नीम के पेड़ पर बैठा कोई पंडूक लगातार बोल रहा था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। वह चाहती थी कि सभी चीज़ें ठीक से पूछ ले। सभी चीज़ें ठीक से जान ले और दुनिया की हर चीज़ पर पहले की तरह धड़ल्ले से बात करे। पर उसकी हिम्मत नहीं होती थी। उसके दिल में न जाने कैसा भय समाया हुआ था।

अब मुंशी जी इस तरह चुपचाप दुबके हुए खा रहे थे, जैसे पिछले दो दिनों से मौन व्रत धारण कर रखा हो और उसको कहीं जाकर आज शाम को तोड़नेवाले हों।

सिद्धेश्वरी से जैसे नहीं रहा गया। बोली, "मालूम होता है, अब बारिश नहीं होगी।'

मुंशी जी ने एक क्षण के लिए इधर-उधर देखा, फिर निर्विकार स्वर में राय दी, 'मक्खियाँ बहुत हो गई हैं।"

सिद्धेश्वरी ने उत्सुकता प्रकट की, 'फूफाजी बीमार हैं, कोई समाचार नहीं आया।'

मुंशी जी ने चने के दानों की ओर इस दिलचस्पी से दृष्टिपात किया, जैसे उनसे बातचीत करनेवाले हों। फिर सूचना दी, "गंगाशरण बाबू की लड़की की शादी तय हो गई। लड़का एम.ए. पास है।

सिद्धेश्वरी हठात चुप हो गई। मुंशी जी भी आगे कुछ नहीं बोले। उनका खाना समाप्त हो गया था । वे थाली में बचे-खुचे दानों को बंदर की तरह बीन रहे थे।

सिद्धेश्वरी ने पूछा, 'बड़का भी कसम, एक रोटी देती हूँ। अभी बहुत-सी हैं।

मुंशी जी ने पत्नी की ओर अपाराधी के समान तथा रसोई की ओर कनखी से देखा, तत्पश्चात किसी घुटे उस्ताद की भाँति बोले, 'रोटी.... रहने दो, पेट काफी भर चुका है। अन्न और नमकीन चीज़ों से तबीयत ऊब भी गई है। तुमने व्यर्थ में कसम धरा दी। खैर, कसम रखने के लिए ले रहा हूँ। गुड़ होगा क्या?'

सिद्धेश्वरी ने बताया कि हँडिया में थोड़ा-सा गुड़ है।

मुंशी जी ने उत्साह के साथ कहा, 'तो थोड़े गुड़ का ठंडा रस बनाओ, पीऊँगा। तुम्हारी कसम भी रह जाएगी, जायका भी बदल जाएगा, साथ-ही-साथ हाज़मा भी दुरुस्त होगा। हाँ, रोटी खाते-खाते नाक में दम आ गया है। यह कहकर वे ठहाका मारकर हँस पड़े।

मुंशी जी के निबटने के पश्चात् सिद्धेश्वरी उनकी जूठी थाली लेकर चौके की ज़मीन पर बैठ गई। बटलोई की दाल को कटोरे में उँडेल दिया, पर वह पूरा भरा नहीं। छिपुली में थोड़ी- सी चने की तरकारी बची थी, उसे पास खींच लिया। रोटियों की थाली को भी उसने पास खींच लिया, उसमें केवल एक रोटी बची थी।मोटी, भद्दी और जली उस रोटी को वह जूठी थाली में रखने जा ही रही थी कि अचानक उसका ध्यान ओसारे में सोए प्रमोद की ओर आकर्षित हो गया। उसने लड़के को कुछ देर तक एकटक देखा, फिर रोटी को दो बराबर टुकड़ों में विभाजित कर दिया। एक टुकड़े को तो अलग रख दिया और दूसरे टुकड़े को अपनी जूठी थाली में रख लिया। तदुपरांत एक लोटा पानी लेकर खाने बैठ गई। उसने पहला ग्रास मुँह में रखा और तब न मालूम कहाँ से उसकी आँखों से टपटप आँसू चूने लगे।

सारा घर मक्खियों से भनभन कर रहा था। आँगन की अलगनी पर एक गंदी साड़ी टाँगी थी, जिसमें कई पैबंद लगे हुए थे। दोनों बड़े लड़कों का कहीं पता नहीं था। बाहर की कोठरी में मुंशी जी आँधे मुँह होकर निश्चिंतता के साथ सो रहे थे, जैसे डेढ़ महीने पूर्व मकान किराया नियंत्रण विभाग की क्लर्की से उनकी छँटनी न हुई हो और शाम को उनको काम की तलाश में कहीं जाना न हो।

अभ्यास

I. कठिन शब्दार्थ

व्यग्रता - व्याकुलता /घबराहट; पंडूक - कबूतर की तरह का एक प्रसिद्ध पक्षी; कनखी - आँख के कोने से; ओसारा - बरामदा; निर्विकार - जिस में कोई विकार या परिवर्तन न होता हो; छिपुली - खाने का छोटा बर्तन; अलगनी - कपड़े टाँगने के लिए बाँधी गई रस्सी; नाक में दम आना - परेशान होना; जी में जी आना - चैन आना

II. एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिएः-

1. रामचंद्र कितने वर्ष का था?

2. प्रूफ़रीडरी का काम कौन सीख रहा था?

3. सिद्धेश्वरी के मंझले लड़के का नाम लिखिए।

4. सिद्धेश्वरी के छोटे लड़के की उम्र कितनी थी?

5. मुंशी चंद्रिका प्रसाद कितने साल के लगते थे?

www.tntextbooks.in

6. किसकी शादी तय हो गई थी?

7. मुंशीजी की तबीयत किससे ऊब गई थी?

8. दोपहर का भोजन कहानी के लेखक का नाम क्या है?

9. मुंशी जी की छँटनी किस दिमाग से हो गई थी?

III. पाँच-पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिए:-

1. सिद्धेश्वरी के परिवार का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

2. मुंशी चंद्रिका प्रसाद की लाचारी का वर्णन कीजिए।

3. दोपहर का भोजन शीर्षक किन दृष्टियों से सार्थक हैं?

www.tntextbooks.in

कहानी 4 पोस्टमास्टर

- रवींद्रनाथ ठाकुर

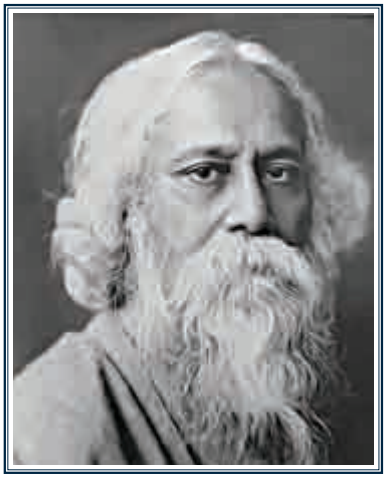

लेखक परिचय:- *रवींद्रनाथ ठाकुर का जन्म 7जी मई 1861 ई. को हुआ। माता का नाम श्रीमती शारदा देवी तथा पिता का नाम महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर था। रवींद्रनाथा बहुमुखी प्रतीभा के धनि थे। चित्र संगीत, काव्य, कथा, निबंध, आदि विविध विधाओं के माध्यम से उन्होंने उसे अभिव्यक्ति दी है, भारतीय और विश्व जनमानस को प्रभावित किया है। भारतीय समाज में वे गुरुदेव संबोधन से समादृत हैं।*

रवींद्रनाथ टैगोर की कहानियों का प्रकाशन 1891 ई में साधना पत्रिका के प्रकाशन के साथ प्रारंभ हुआ। अपनी कहानियों के कथम उन्होंने आमतौर पर ग्राम्यजीवन से उठाए हैं। उनकी कहानियों के नायक ग्राम्यजीवन से जुड़े होने के बावजूद भी संकीर्ण मानसिकतावाले नहीं हैं। वे सामाजिक रूढ़ियों से संघर्ष करते दिखाई देते हैं। यही कारण है कि उनका छोटा-मोटा अपराध भी पाठक के हृदय में उनके प्रति सहानुभूति ही उत्पन्न करता है। छोट-गल्प विचित्र कल्प, कल्पचारिती, गल्प दशक, गल्प गुच्छ (5 भाग) और कलप सप्तक उनकी कहानियों के संग्रह हैं। संसार की अनेक भाषाओं में उनकी कहानियों के अनुवाद हो चुके हैं। 1900ईं में ही टैगोर ने कहानी की रचना की। इसकी बहुत-सी कहानियाँ बौद्ध गाथाओं ये ली गई हैं। 1919 ई में उन्होंने लिपिका की रचना की। इस में गद्य काव्य में छोटे-छोटे 38 शब्द चित्र हैं जो अत्यंत विचारोतेजक और प्रभावशाली हैं। रवींद्र विश्व-विख्यात कवि हैं। जिनकी दो रचनाएँ दो देशों का राष्ट्रगान बनी - भारत का राष्ट्रगान जन-गण-मन और बंगला देश का राष्ट्रीय गान 'आपार सोनार बँगला' गुरुदेव की रचनाएँ हैं। इनकी कविता संग्रह गीतांजली लोगों को इतनी पसंद आई कि अंग्रेज़ी जर्मन, फ्रेंच, जापानी, रूसी आदि विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में इसका अनुवाद किया गया।

रवींद्रनाथ की कहानियों में काबुलीवाला, मास्टर साहब और पोस्टमास्टर आज भी लोकप्रिय कहानियाँ हैं।

पोस्टमास्टर में अकेलेपान, खुशी, कृतज्ञता, यादें और अपराध्का विषय है।

7अगस्त 1941 ई को रवींद्रनाथ टैगोर की पवित्र आत्मा ने शरीर को त्याग दिया।

पहले पहल काम शुरु करते ही पोस्टमास्टर को उलापुर गाँव आना पड़ा। गाँव बहुत साधारण था। पास ही एक नील-कोठी थी। कोठी के स्वामी ने बड़ी कोशिश करके यह नया पोसटऑफिस खुलवाया था।

पोस्टमास्टर कल्कत्ता के थे। पानी से निकालकर सूखे में डाल देने से मछली की जो दशा होती है, वही दशा इस बड़े गाँव में आकर इन पोस्टमास्टर की हुई। एक अँधेरी झोंपडी में उनका आँफिस था। पास ही काई से घिरा एक तालाब था, जिसके चारों ओर जंगल था। कोठी में गुमश्ते वगैरह जितने भी कर्मचारी थे उन्हें अक्सर फुरसत नहीं रहती थी, न वे शिष्टजनों से मिलने-जुलने के योग्य ही थे।

खासतौर से कल्कत्ता के बाबू ठीक तरह से मिलना-जुलना नहीं जानते। नई जगह में पहुँचकर वे या तो उद्धत हो जाते हैं या अप्रतिभ। इसलिए स्थानीय लोगों से उनका मेल-जोल नहीं हो पाता। इधर काम भी ज्यादा नही था। कभी-कभी एकाध कविता लिखने की कोशिश करते। उनमें इस प्रकार के भाव व्यक्त करते-दिन-भर तरु-पल्लवों का कम्पन और आकाश के बादल देखते-देखते जीवन बड़े सुख से कट जाता है। लेकिन अन्तर्यामी जानते हैं कि यदि अलिफ-लैला का कोई जिन आकर एक ही रात में तरु-पल्लव समेत इन सारे पेड़-पौधों को काट कर पक्का रास्ता तैयार कर देता और पंक्तबद्ध अट्टलिकाओं द्वारा बादलों को दृष्टि से ओझल कर देता तो उस मृतप्राय भद्र वंशधर को नया जीवन मिल जाता।

पोस्टमास्टर को बहुत कम तनख्वाह् मिलती थी। अपने हाथों बनाकर खाना पड़ता और गाँव की एक मातृ-पितृ हीन अनाथ बालिका उनका काम-काज कर देती थी। उसको थोड़ा-बहुत खाना मिल जाता। लड़की का नाम था रतन। उम्र बारह-तेरह। उसके विवाह की कोई विशेष सम्भावना नहीं दिखाई देती थी।

शाम को जब गाँव की गोशाला से कुंडलाकार धुआँ उठता, झाड़ियों में झींगुर बोलते, दूर के गाँव में पियक्कड बादलों का दल ढोल-करताल बजाकर ऊँचे स्वर में गीत छेड़ देता, जब अंदर बरामदे में अकेले बैठे-बैठे वृक्षों का काँपना देखकर कवि हृदय में भी हड़कपं होने लगता। तब कमरे के कोने में एक टिमटिमाता हुआ दिया जलाकर पोस्टमास्टर आवाज़ लगाते - "रतन"।

रतन दरवाजे पर बैठी इस आवाज़ की प्रतीक्षा करती रहती। लेकिन पहली आवाज़ पर ही अंदर न आती। वहीं से कहती, "क्या है बाबू, किसलिए बुला रहे हो?"

पोस्टमास्टर - 'तू क्या कर रही है"?

रतन - "बस चूल्हा जलाने ही जा रही हूँ, रसोईघर में।"

पोस्टमास्टर-"तेरा रसोई का काम पीछे हो जायगा। पहले हुक्का भर ला।"

थोड़ी देर में अपने गाल फलाए चिलम में फूँक मारती-मारती रतन भीतर आती। उसके हाथ से हुक्का लेकर पोस्टमास्टर चट-से पूछ बैठते, "अच्छा रतन, तुझे आनी माँ की याद है?" बड़ी लंबी बाते हैं। बहुत-सी याद हैं, बहुत-सी याद भी नहीं। माँ की अपेक्षा पिता उसको अधिक प्यार करते थे। पिता की उसे थोड़ी-थोड़ी याद है। दिन भर मेहनत करके उसके पिता शाम को घर लौटते। भाग्य से उन्हीं में से दो-एक शामों की याद उसके मन में चित्र के समान अंकित है। उन्हीं की बात करते-करते धीरे-धीरे रतन पोस्टमास्टर के पास ही ज़मीन पर बैठ जाती। उसे ध्यान आता, उसका एक भाई था। बहुत दिन पहले बरसात में एक दिन एक तालाब के किनारे दोनों ने मिलकर पेड़ की टूटी हुई टहनी की बंसी बनाकर झूठ-झूठ मछली पकड़ने का खेल खेला था। अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं की अपेक्षा इसी बात की याद उसे अधिक आती। इस तरह बाते करते-करते कभी-कभी काफी रात हो जाती। तब आलस के मारे पोस्टमास्टर को खाना बनाने की इच्छा न होती। सबेरे की बासी तरकारी रहती और रतन झटपट चूल्हा जलाकर कुछ रोटियाँ सेंक लेती। उन्हीं से दोनों के रात्रि-भोजन का काम चल जाता। कभी-कभी शाम को उस विशाल झोंपड़ी के एक कोने में ऑफिस की काठ की कुर्सी पर बैठे-बैठे पोसटमास्टर भी अपने घर बात चलाते-छोटे भाई की बात, माँ और दीदी का बात। जो बातें उनके मन में बार-बार उठती रहतीं, पर जो नील-कोठी के गुमाश्तों के सामने किसी भी तरह नहीं उठाई जा सकती थीं, उन्हीं बातों को उस अपढ़ नन्हीं बालिका से कहते उन्हें बिलकुल संकोच न लगता। अंत में ऐसा हुआ कि बालिका बातचीत करते समय उनके घरवालों को चिर परिचितों के समान खुद भी माँ, दादा, दीदी कहने लगी। यहाँ तक कि अपने नन्हें से हृदय पटल पर उसने उनकी काल्पनिक मूर्ति भी चित्रित कर ली।

एक दिन बरसात की दोपहर में बादल छँट गऐ थे और हल्का-सा ताप लिये सुकोमल हवा चल रही थी। धूप में नहाई घास से और पेड़-पौधों से एक प्रकार की गंध निकल रही थी। ऐसा लगता था मानों क्लांत धरती का उष्ण निःश्वास अंगों को छू रहा हो और न जाने कहाँ का एक हठी पक्षी दोपहर भर प्रकृति के दरबार में लगातार एक लय से अत्यंत करुण स्वर में अपनी नालिश दुहरा रहा था। उस दिन पोस्टमास्टर के हाथ खाली थे। वर्षा से धुले लहलहाते चिकने मृदुल तरु-पल्लव और धूप में चमकते पराजित वर्षा के बचे-खुचे स्तूप के आकार बादल सचमुच देखने लायक थे।

पोस्टमास्टर उन्हें देखते जाते और सोचते जाते कि काश, इस समय यदि कोई आत्मीय अपने पास होता, हृदय के साथ एकांत संल्गन कोई स्नेह की प्रतिमा मानव-पूर्ति। धीरे-धीरे उन्हें ऐसा लगने लगा मानो वह पक्षी भी बार-बार यही कह रहा हो, और उस निर्जन में तरु-छाया में डूबी दोपहर के पत्तों के स्वर का भी कुछ ऐसा ही मतलब हो। न तो कोई विश्वास कर सकता, न जान पाता, लेकिन उस छोटे-से गाँव के सामान्य वेतन भोगी उस सब पोस्टमास्टर के मन में छुट्टी के लंबे दिनों में गंभीर सुनसान दोपहर में इसी प्रकार के भाव उदय होते रहते।

पोस्टमास्टर ने एक दीर्घ निःश्वास लिया और फिर आवाज़ लगाई, "रतन"।

रतन उस समय अमरूद के पेड़ के नीचे पैर फैलाए कच्चा अमरूद खा रही थी। वह मालिक की आवाज सुनते ही तुरंत दौड़ी हुई आई और हाँफती-हाँफती बोली, "भैयाजी, बुला रहे थे?'

पोस्टमास्टर ने कहा, " मैं तुझे थोड़ा-थोड़ा करके पढ़ना सिखाऊँगा।" और फिर दोपहर-भर उसके साथ 'छोटा-अ' , 'बड़ा अ' करते रहे। इस तरह कुछ दिनों में संयुक्त अक्षर भी पार कर लिए। सावन का महीना था। लगातार वर्षा हो रही थी। गड्ढे, नाले, तालाब सब पानी से भर गए थे। रात-दिन मेढ़क की टर्र-टर्र और वषा की आवाज। गाँव के रास्तों में चलना-फिरना लगभग बंद हो गया था। हाट के लिए नाव में चढ़कर जाना पड़ता।

एक दिन सवेरे से ही बादल खूब घिरे हुए थे। पोस्टमास्टर की शिष्या बड़ी देर से दरवाज़े के पास बैठी प्रतीक्षा कर रही थी, लेकिन और दिनों की तरह जब यथासमय उसकी बुलाहट न हुई तो वह खुद किताबों का थैला लिये धीरे-धीरे भीतर आई। देखा, पोस्टमास्टर अपनी खटिया पर लेटे हुए हैं। यह सोचकर कि वे आराम कर रहे हैं, वह चुपचाप फिर बाहर जाने लगी। तभी अचानक सुनाई पड़ा, "रतन"।

झटपट लौटकर भीतर जाकर उसने कहा, "भैयाजी, सो रहे थे?"

पोस्टमास्टर ने कातर स्वर में कहा, 'तबीयत ठीक नहीं मालूम होती। ज़रा मेरे माथे पर हाथ रखकर तो देख।

घोर वर्षा के समय प्रवास में इस तरह बिलकुल अकेले रहने पर रोग से पीड़ित शरीर को कुछ सेवा पाने के इच्छा होती है। तप्त ललाट पर शंख की चूडियाँ पहने कोमल हाथ याद आने लगते हैं। ऐसे कठिन प्रवासी में रोग की पीड़ा में यह सोचने की इच्छा होती है कि पास ही स्नेहमयी नारी के रूप में माता और दीदी बैठी हैं। और प्रवासी के मन की यह अभिलाषा व्यर्थ

नहीं गई। बालिका रतन बालिका न रहीं। उसने फौरन माता का पद ग्रहण कर लिया। वह जाकर वैद्य को बुला लाई, यथासमय गोली खिलाई, सारी रात सिरहने बैठी रही, अपने हाथों भोजन तैयार किया और सैकड़ों बार पूछती रही, "भैया जी, कुछ आराम है क्या?"

बहुत दिनों बाद पोस्टमास्टर जब रोग-शय्या छोड़कर उठे तो उनका शरीर दुर्बल हो गया था। उन्होंने मन में तय किया, अब और नहीं। जैसे भी हो अब यहाँ से बदली करानी चाहिए। अपनी अस्वस्थता का उल्लेख करते हुए उन्होंने उसी समय अधिकारियों के पास बदली के लिए कलकत्ता दरख्वास्त भेज दी।

रोगी की सेवा से छुट्टी पाकर रतन ने दरवाज़े के बाहर फिर अपने स्थान पर अधिकार जमा लिया। लेकिन अब पहले की तरह उसकी बुलाहट नहीं होती थी। वह बीच-बीच में झाँककर देखती- पोस्टमास्टर बड़े ही अनमने भाव से या तो कुर्सी पर बैठे रहते या खाट पर लेटे रहते। जिस समय इधर रतन बुलाहट की प्रतीक्षा में रहती वे अधीर होकर अपनी दरख्वास्त के उत्तर की प्रतीक्षा करते रहते। दरवाज़े के बाहर बैठी रतन ने हज़ारों बार अपना पुराना पाठ दुहराया। बाद में यदि किसी दिन सहसा उसकी बुलाहट हुई तो उस दिन कहीं उसका संयुक्त अक्षरों का ज्ञान गड़बड़ न हो जाय इसकी उसे आशंका थी। आखिर लगभग एक सप्ताह के बाद एक दिन शाम को उसकी पुकार हुई। काँपते हृदय से उसने भीतर प्रवेश किया और पूछा, "भैयाजी, मुझे बुलाया था?"

पोस्टमास्टर ने कहा, "रतन, मैं कल ही चला जाऊँगा।"

रतन - "कहाँ चले जाओगे भैयाजीः

पोस्टमास्टर - "घर जाऊँगा"।

रतन - "फिर कब लौटोगे?"

पोस्टमास्टर–"अब नहीं लौटूँगा।।"

रतन ने और कोई बात नहीं पूछी। पोस्टमास्टर ने स्वयं ही उसे बताया कि उन्होंने बदली के लिए दरख्वास्त दी थी, पर दरख्वास्त नामंजूर हो गई इसलिए वे इस्तीफा देकर घर चले जा रहे हैं। बहुत देर तक दोनों में से किसी ने और कोई बात नहीं की। दीया टिमटिमाता रहा और घर के जीर्ण छप्पर को भेदकर वर्षा का पानी मिट्टी के सकोरे में टप-टप करता टपकता रहा।

बड़ी देर के बाद रतन धीरे-धीरे उठकर रसोईघर में रोटियाँ बनाने चली गई। पर आज

और दिनों की तरह उसके हाथ जल्दी-जल्दी नहीं चल रहे थे। शायद उसके मन में रह-रहकर तरह-तरह की आशंकाएँ उठ रहीं थीं। जब पोस्टमास्टर भोजन कर चुके तब उसने पूछा, "भैयाजी, मुझे अपने घर ले चलोगे?"

पोस्टमास्टर ने हँसकर कहा, "वाह, यह कैसे हो सकता है।" किन कारणों से यह बात सम्भव न थी, बालिका को यह समझाना उन्होंने आवश्यक नहीं समझा।

रात-भर जागते और स्वप्न देखते हुए बालिका के कानों में पोस्टमास्टर के हँसी-मिश्रित स्वर गूँजते रहेः 'वाह, यह कैसे हो सकता है।'

सवेरे उठकर पोस्टमास्टर ने देखा कि उनके नहाने के लिए पानी पहले से ही रख दिया गया है। कलकत्ता की अपनी आदत के अनुसार वे ताजे पानी से ही स्नान करते थे।न जाने क्यों बालिका यह नहीं पूछ सकी थी कि वे सवेरे किस समय यात्रा करेंगे। बाद में कहीं तड़के ही जरूरत न पड़ जाय, यह सोचकर रतन उतनी रात में ही नदी से उनके नहाने के लिए पानी भरकर ले आई थी। स्नान समाप्त होते ही रतन की पुकार हुई। रतन ने चुपचाप भीतर प्रवेश किया और आदेश की प्रतीक्षा में मौन भाव से एक बार अपने मालिक की ओर देखा।

मालिक ने कहा, "रतन, मेरी जगह जो सज्जन आयेंगे मैं उन्हें कह जाऊँगा। वे मेरी ही तरह तेरी देख-भाल करेंगे। मेरे जाने से तुझे कोई चिंता करने की जरूरत नहीं है।"

इसमें कोई संदेह नहीं कि ये बातें अत्यंत स्नेहपूर्ण और दयार्द्र हृदय से निकली थीं किंतु नारी के हृदय को कौन समझ सकता है। रतन इसके पहले बहुत बार अपने मालिक के हाथों अपना तिरस्कार चुपचाप सहन कर चुकी थी, लेकिन इस कोमल बात को वह सहन न कर पाई। उसका हृदय एकाएक उमड़ आया और उसने रोते-रोते कहा, "नहीं, नहीं। तुम्हें किसी से कुछ कहने की जरूरत

नहीं है, मैं रहना नहीं चाहती।"

पोस्टमास्टर ने रतन का ऐसा व्यवहार पहले कभी नहीं देखा था, इसलिए वे अवाक् रह गए।

नया पोस्टमास्टर आया। उसको सारा चार्ज सौंप देने के बाद पुराने पोस्टमास्टर चलने को तैयार हुए। चलते-चलते रतन को बुलाकर बोले, "रतन, तुझे मैं कभी कुछ न दे सका, आज जाते समय कुछ दिये जा रहा हूँ, इससे कुछ दिन तेरा काम चल जायगा।"

तनख्वाह में जो रूपये मिले थे उनमें से राह-खर्च के लिए कुछ बचा लेने के बाद उन्होंने

बाकी रुपये जेब से निकाले। यह देखकर रतन धूल में लोटकर उनके पैरों से लिपटकर बोली, "भैयाजी , मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, मेरे लिए किसी को कोई चिंता करने कीजरूरत नहीं।" और यह कहते-कहते वह तुरंत वहाँ से भाग गई।

भूतपूर्व पोस्टमास्टर दीर्घ निःश्वास लेकर हाथ में कारपेट का वैग लटकाए, कन्धेपर छाता रखे, कुली के सिर पर नीली सफेद धारियों से चित्रित टीन की पेटी रखवा कर धीरे-धीरे नाव की ओर चल दिए।

जब वे नौका का सवार हो गए और नाव चल पड़ी, वर्षा से उमड़ी नदी धरती की छलछलाती अश्रु-धारा के समान चारों ओर छलछल करने लगी, तब वे अपने हृदय में एक तीव्र व्यथा अनुभव करने लगे। एक साधारण ग्रामीण बालिका के करुण मुख का चित्र मानो विश्वव्यापी वृहत् अव्यक्त मर्मव्यथा प्रकट करने लग गया।

एक बार बड़े जोर से उनकी इच्छा हुई कि लौट जायँ और जगत् की गोद से वंचित उस अनाथिनी को साथ ले आयें। लेकिन तब तक पाल में हवा भर गई थी, वर्षा का प्रवाह और भी तेज हो गया था। गाँव को पार कर चुकने के बाद नदी किनारे का श्मशान दिखाई दे रहा था और नदी की धारा के साथ बढ़ते हुए पथिक के उदास हृदय में यह सत्य उदित हो रहा था – "जीवन में न जाने कितना वियोग है, कितना मरण है, लौटने से क्या लाभ ! संसार में कौन किसका है।"

लेकिन रतन के हृदय में किसी भी सत्य का उदय नहीं हुआ। वह उस पोस्टआफिस के चारों ओर चुपचाप आँसू बहाती चक्कर काटती रही। शायद उसके मन में हल्की-सी आशा जीवित थी कि हो सकता है, भैयाजी लौट आयें। आशा के इसी बंधन से बंधी वह किसी भी तरह दूर नहीं जा पा रही थी। हाय रे बुद्धिहीन मानव-मन! तेरे भ्रम किसी भी तरह नहीं मिटते। युक्ति शास्त्र का तर्क बड़ी देर बाद मस्तिषक में प्रवेश करता है। बड़-से-बड़े प्रमाण पर भी अविश्वास करके झूठी आशा को अपनी दोनों बाहों से जबड़ कर तू भरसक छाती से चिपकाए रहता है। अंत में एक दिन सारी नाड़ियाँ काटकर, हृदय का सारा रक्त चूसकर वह निकल भागती है। तब होश आते ही मन किसी दूसरी भ्रान्ति के जाल में बँध जाने के लिए बेचेन हो उठता है।

www.tntextbooks.in

अभ्यास

I. एक या दो वाक्यों में उत्तर दीजिएः-

1. पोस्टमास्टर इस्तीफा देकर कहाँ जाना चाहते थे?
2. पोस्टमास्टर ने क्यों इस्तीफा दिया?
3. पोस्टमास्टर के इस्तीफा का कारण क्या था?
4. पोस्टमास्टर ने रतन से क्या चर्चा की?
5. पोस्टमास्टर के बीमार पड़ने पर रतन ने क्या किया?
6. पोस्टमास्टर ने बदली की प्रार्थना क्यों की ?
7. रतन मालिक की बातों से क्यों नाराज़ हुई?
8. रतन की शंका का कारण क्या था?
9. पोस्टमास्टर किन-किन को याद करता है?
10. पोस्टमास्टर दरखावास्त ना मंजूर होने पर क्या किया?

II. तीन वाक्यों में उत्तर दीजिएः-

1. उलापुर गाँव के बारे में लिखिए?
2. पोस्टमास्टर गाँव में कैसे जीवन बिताते थे?
3. रतन के बारे में लिखिए?
4. रतन पोस्टमास्टर को कैसे मदद करती थी?
5. पोस्टमास्टर रोग से पीड़ित होने पर रतन ने क्या की?

III. पाँच वाक्यों में उत्तर दीजिएः-

1. पोस्टमास्टर इस्तिफा देकर कहाँ जाना चाहते थे?
2. रतन के मन में आशंकाएँ क्यों उठ रही थी?
3. मालिक ने आखिर रतन से क्या कहा?
4. रतन मालिक की बातें सुनकर क्यों भाग गयी?
5. रतन किस आशा के बंधन से बंधी रही?

www.tntextbooks.in

पदपरिचय के कुछ नमूने

(1) मेरी छोटी बहन अभी स्कूल से आयी है।

मेरी - मैं की मेरी विकारी शब्द, पुरुषवाचक सर्वनाम, उत्तम पुरुष, स्त्रीलिंग, एक वचन, संबंध कारक, से संबंधित।

छोटी - विशेषण, गुणवाचक विशेषण, स्त्रीलिंग, एकवचन, 'बहन' विशेष्य से संबंध

बहन - जातिवाचक संज्ञा, स्त्रीलिंग, एकवचन, कर्ता कारक, 'आयी है' क्रिया का कर्ता।

अभी - अब + ही = अभी, क्रिया विशेषण, कालवाचक, 'आयी है' का क्रिया विशेषण

स्कूल से - जातिवाचक संज्ञा, पुल्लिंग, एकवचन, अपादान कारक

आयी है - अकर्मक क्रिया, स्त्रीलिंग, कर्तृवाच्य, कर्तरी प्रयोग, आसन्न भूतकाल, अन्य पुरुष, एक वचन 'बहन' कर्ता से संबंधित

(2) अहा! आप और मैं परीक्षा में पास हो गये।

अहा! - द्योतक, हर्षवर्धक (विस्मयादि बोधक)

आप - सर्वनाम, पुरुषवाचक, मध्यम पुरुष, एक वचन, कर्ता कारक, पास हो गये क्रिया से संबंधित।

और - योजक, संयोजक, 'आप' और 'मैं' को मिलाता है।

मैं - पुरुषवाचक सर्वनाम, उत्तम पुरुष, एक वचन, कर्ता कारक, 'पास हो गये' क्रिया का कर्ता।

परीक्षा में - जातिवाचक संज्ञा, पुल्लिंग, एकवचन, अधिकरण कारक

पास हो गये - संयुक्त क्रिया, अकर्मक, कर्तृवाच्य, सामान्य भूतकाल, पुल्लिंग, बहुवचन, उत्तम पुरुष, 'आप और मैं' इसके कर्ता हैं।

(3) समझदार लड़के किसीसे नहीं लड़ते

समझदार - विशेषण, गुणवाचक, विशेष्य, लड़के का विशेषण, पुल्लिंग, एकवचन।

लड़के - संज्ञा, जातिवाचक संज्ञा, पुल्लिंग, बहुवचन, कर्ता कारक, 'समझदार' विशेषण का विशेष्य 'लड़ते' क्रिया का कर्ता।

www.tntextbooks.in

किसीसे - सर्वनाम, अनिश्चयवाचक सर्वनाम, प्रथम पुरुष, पुल्लिंग, एकवचन, करण कारक ।

नहीं - क्रिया विशेषण, रीतिवाचक , 'लड़ते' क्रिया का विशेषण।

लड़ते - सकर्मक क्रिया, कर्तृवाचक , सामान्य वर्तमानकाल, पुल्लिंग, अन्य पुरुष, बहुवचन, लड़ते इसका कर्ता।

4. राम अपने बड़े भाई के साथ दिल्ली गया।

राम - व्यक्तिवाचक संज्ञा, पुल्लिंग, एक वचन 'गया' क्रिया से संबंध

अपने - सर्वनाम निजवाचक सर्वनाम, राम के भाई में संबंधित, पुल्लिंग आद सूचक

बड़े भाई - संज्ञा, जातिवाचक पुल्लिंग राम से संबंधित

के साथ - संबंध बोधक राम और बड़े भाई से संबंधित

दिल्ली - संज्ञा, व्यक्तिवाचक संज्ञा, स्त्री लिंग गई से संबंधि।

गया - जा, मूल - धातु अकर्मक क्रिया, एक वचन, पुल्लिंग, कर्तुवाच्य, कर्तारी प्रयोग, सामान्य भूतकाल राम कर्ता के संबंधित

पदपरिचय दीजिए:-

1. उसने एक गीत गाया।
2. राम ने रावण को मारा।
3. शेर जंगल में रहता हैं।
4. माँ ने बच्चे को खिलौना दिया है।
5. तोता पेड़ पर बैठा है।
6. कमला मेरे घर आई।
7. राजा ने घोड़ा खरीदा।
8. उसने घोड़ा बेचा।
9. मैंने मोहन को बुलाया।
10. मेरा छोटा भाई कल मैसूर से यहाँ आया।

www.tntextbooks.in

11. गर्मी में ठंडे जल में नहाने से आनंद हाता हैं।

12. कंबर ने तमिल में रामायण की रचना की है।

13. साहसी पुरुष प्रत्येक कार्य में सफल होगा।

14. मैं जल्दी यहाँ से निकलूँगा।

निबंध

प्रय त्योहार, प्रिय नेता, कोई दान (नेत्र दान/रक्तदान), प्रदूषण, समय का सदुपयोग, समाचार पत्र, पुसतकालय, बेकारी समस्या, विद्यार्थी जीवन, दहेज प्रथा, स्वदेश प्रेम, अनुशासन, स्वतंत्र भारत में नारी का स्थान, मनोरंजन के आधुनिक साधन, विज्ञान के चमत्कार, भारत में कम्प्यूटर क्रांति।

पत्र लेखन

1. नौकरी के लिए आवेदन पत्र

2. छात्रवृत्ति पाने के लिए प्रार्थना पत्र

3. किसी यात्रा का वर्णन / किसी खेल का वर्णन

4. पुस्तक मँगवाना

5. शिकायत पत्र

6. बधाई पत्र

7. शिक्षा कर्ज प्राप्ति के लिए प्रार्थना पत्र

कार्यालय आदेश (Office Order)

कार्यालय आदेश किसी भी मंत्रालय, संबद्ध विभाग, अनुभाग, कार्यालय के कर्मचारियों के लिए समय-समय पर निकाले गये आदेशों की सूचना है। कार्यालयों की स्थानीय व्यवस्था, अनुशासन आदि इसके मूल विषय हैं। अनुभागों या अधिकारियों के बीच कार्य-बितरण, पदोन्नति, पदावनति, कर्मचारियों की नियुक्ति, तैनाती, स्थानांतरण, छुट्टियाँ, नये पदों का सृजन, कर्मचारियों को अनुशासनहीनता के आरोप में चेतावनी आदि कार्यालय आदेश मुख्य विषय हैं। यह किसी सक्ष्म अधिकारी के द्वारा निकाला जाता है, जिसका अनुपालन करना आवश्यक होता है। यह एकव्यक्ति या सभी व्यक्तियों के लिए होता है।

कार्यालय आदेश लिखने की विधिः-

1. कार्यालय आदेश में औपचारिकता नहीं होती।

www.tntextbooks.in

2. इसमें अन्य पुरुष का प्रयोग किया जाता है।

3. कार्यलय आदेश में नीचे बाई ओर उन व्यक्तियों का नाम निर्देश रहता है, जिनके लिए वह निकाला गया है।

4. कार्यालय आदेश में सबसे ऊपर भरत सरकार या राज्य सरकार, मंत्रालय का नाम, बाई ओर पत्र-संख्या और उसके बाद विषय रहता है।

5. यदि किसी को पत्र भेजना है तो पत्र की समाप्ति पर बाई ओर 'प्रतिलिपि' लिखते हैं।

6. इसका प्रारूप सीधा और सरल होता है। आदेश स्पष्ट और निश्चयात्मक होता है।

7. यह वरिष्ठ अधिकारी द्वारा कनिष्ठ अधिकारी या कर्मचारी को लिखा जाता है।

श्री घनश्याम पांडेय का अर्जित अवकाश स्वीकार करते हुए कार्यालय आदेश का आलेखन कीजिए।

क्रम संख्या 229/प्र/2014/प्रशासन

भारत सरकार

नई दिल्ली

दिनांक : 20 मई, 2014

श्री घनश्यामदास पांडेस का दिनांक 17 जनवरी, 2014 से 20 मार्च, 2014 तक का अर्जित अवकाश स्वीकार कर लिया गया है।

ह./XXXX

अवर सचिव

भारत सरकार

प्रतियाँ

1. श्री घनश्यामदास पांडेय

   मूल्य नियंत्रण अनुभाग

   निर्माण मंत्रालय, नई दिल्ली

2. नकदी तथा लेखा अनुभाग

   नई दिल्ली

www.tntextbooks.in

विषय ग्रहण गद्यांश

निम्नलिखित गद्यांश को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

गद्यांश -1

संसार के सभी देशों में शिक्षित व्यक्ति की सबसे पहली पहचान यह होती है कि वह अपनी मातृभाषा में दक्षता से काम कर सकता है। केवल भारत ही एक देश है जिसमें शिक्षित व्यक्ति वह समझा जाता है। जो अपनी मातृभाषा में दक्ष हो या नहीं किंतु अंग्रेज़ी में जिसकी दक्षता असंदिग्ध हो।

संसार के अन्य देशों में सुसंस्कृत व्यक्ति वह समझा जाता है जिसके घर में अपनी भाषा की पुस्तकों का संग्रह हो और जिसे बराबर यह पता रहे कि उसकी भाषा के अच्छे लेखक और कवि कौन हैं तथा समय-समय पर उनकी कौन-सी कृतियाँ प्रकाशित हो रही हैं। भारत में स्थिति दूसरी है। यहाँ प्रायः घर में साज-सज्जा के आधुनिक उपकरण तो होते हैं किंतु अपनी भाषा की कोई पुस्तक या पत्रिका दिखाई नहीं पड़ती। यह दुरवस्था भले ही किसी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है, किंतु यह सुदशा नहीं, दुरवस्था ही हैं और जब तक यह दुरवस्था कायम है, हमें अपने आप को, सही अर्थों में शिक्षित और सुसंस्कृत मानने का ठीक-ठीक न्यायसंगत अधिकार नहीं।

1. गद्यांश का उचित शीर्षक दीजिए।

2. असंदिग्ध होना शब्द का तातपर्य क्या है?

3. शिक्षित व्यक्ति की पहली पहचान क्या होती है?

4. सुसंकृत व्यक्ति कौन है?

5. भारत में किसे दक्ष व्यक्ति माना जाता है?

गद्यांश - 2

दैनिक जीवन में हम अनेक लोगों से मिलते हैं जो विभिन्न प्रकार के काम करते हैं - सड़क पर ठेला लगानेवाला, दूधवाला, नगरनिगम का सफ़ाई कर्मी, बस कंडक्टर, स्कूल अध्यापक, हमारा सहपाठी और ऐसे ही कई अन्य लोग। शिक्षा, वेतन परंपरागत चलन और व्यवसाय के स्तर पर कुछ लोग स्तर पर कार्य करते हैं तो कुछ तथा कथित निम्न स्तर पर करते हैं। तो कुछ उच्च स्तर पर। एक माली के कार्य को सरकारी कार्यालय के किसी सचिव के कार्य से अति निम्न स्तर का माना जाता है। किंतु यदि यही अपने कार्य को कुशलता पूर्वक करता है और उत्कृष्ट सेवाएँ प्रदान करता है। तो उसका कार्य उस सचिव के कार्य से कहीं बेहतर है जो अपने काम में ढिलाई बरतता है। तथा अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह नहीं करता। क्या आप ऐसे सचिव को एक आदर्श अधिकारी कह सकते हैं? वास्तव में पद महत्वपूर्ण नहीं हैं। बल्कि महत्वपूर्ण होता है कार्य के प्रति समर्पण भाव और कार्य प्रणाली में पारदर्शिता।

www.tntextbooks.in

1. गद्यांश का उचित शीर्ष दीजिए।

2. एक माली का कार्य सरकारी सचिव के कार्य से भी बेहतर कब माना जाता है?

3. कार्य प्रणाली में पारदर्शिता का तात्पर्य क्या है?

4. काम में ढिलाई बरतने पर क्या असर पड़ता है?

हिंदी में अनुवाद करें।

1. It is true no doubt that the greatest need of our nation today is discipline. But discipline is of two kinds one that is imposed from without, with the help of fear or greed another which one observes of his own free will for the accomplishment of his cherished goal. Of these, the first service to keep the show going, but is of no use to cultivate the moral strength necessary for the shaping of a new order and state.

2. There is very sweet water inside the coconut. People use the kernal of the coconut in many ways. The ripe kernel is dried. It is called "Kopra". It is pressed in the oil press and oil is extracted. Coconut oil is used for lighting lamps and as hair oil. Coconut tree leave are use for making mats and fibre is used to make mats, ropes, bags and many useful articles.

3. Education is not the amount of information that is put in your brain and riot there] undigested, all your life. We must have life building, man making character making assimilation of ideas. If education is identical with information libraries are great sages of the world and encyclopedias are rishis, truth, righteous conduct, peace, love and non-violence are the core universal values which can be identified as the foundation stone on which the value based education programme can be built up. These five are indeed universal values represent the five domains of human personality - intellectual , physical, emotional, psychological and spiritual.

www.tntextbooks.in

पदों के नाम

अध्यक्ष	-	Chairman
प्रबंध निदेशक	-	Managing Director
सभापति/अध्यक्ष	-	President
उपसभापति/उपाध्यक्ष	-	Vice President
मुख्य महा प्रबंधक	-	Chief General Manager
उप प्रबंध निदेशक	-	Deputy Managing Director
सचिव	-	Secretary
निजी सहायक	-	Private Assistant
महा प्रबंधक	-	General Manager
मुख्य प्रबंधक	-	Chief Manager
प्रभारी अधिकारी	-	Office Incharge
सुरक्षा अधिकारी	-	Security Officer
पुस्तकपाल	-	Librarian
प्राचार्य	-	Principal
लेखा परीक्षक	-	Auditor
क्षेत्रीय प्रबंधक	-	Regional Manager
शाखा प्रबंधक	-	Branch Manager
लेखापाल	-	Accountant
अनुवादक	-	Translator
राजभाषा अधिकारी	-	Official Language Officer
रोकड़िया	-	Cash officer

www.tntextbooks.in

लिपिक	-	Clerk
आशुलिपिक	-	Stenographer
जमा खाता	-	Savings Account
चालू खाता	-	Current account
विदेशी खाता	-	Foreign Account
बचत खाता	-	Savings deposit
जमाकर्ता	-	Depositor
नकद प्रदत्त	-	Cash paid
नकद प्राप्त	-	Cash received
गोपनीय	-	confidential
संस्वीकृत	-	Sanctioned
अनुमोदित	-	Approval
भुगतान किया गया	-	payment made
अन्तरित किया गया	-	Transfered
वाणिज्यिक बैंकिंग	-	Commercial banking
कृषि एवं ग्रामीण बैंकिंग	-	Agricultural and Rural Banking
विदेश विभाग	-	Foreign Department
मानव संसाधन विकास विभाग	-	Human Resources Development Department
विधि विभाग	-	Law Department
गृह मंत्रालय	-	Ministry of Home Affairs
वित्त मंत्रालय	-	Ministry of Finance
रक्षा मंत्रालय	-	Ministry of Defence
रेल मंत्रालय	-	Ministry of Railways

www.tntextbooks.in

विदेश मंत्रालय	-	Ministry of External Affairs
सूचना और प्रसारण मंत्रालय	-	Ministry of Broadcasting
स्वास्थ्य मंत्रालय	-	Ministry of Health
युवा कल्याण मंत्रालय	-	Ministry of Youth Welfare
खाद्य, कृषि तथा सिंचाई मंत्रालय	-	Ministry of Food Agriculture and Irrigation
ऊर्जा मंत्रालय	-	Ministry of Energy
उद्योग मंत्रालय	-	Ministry of Industry
आकाशवाणी	-	All India Radio
आयकर विभाग	-	Income Tax Department
केंद्रीय तारघर	-	Central Telegraph Office
जीवन बीमा निगम	-	Life Insurance Corporation
उच्च न्यायालय	-	High Court
उच्चतमन्यायालय	-	Supreme Court
सचिवालय	-	Secretaroat
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग	-	University Grands Commission
संघलोक सेवा आयोग	-	Union Public Service Commission
राष्ट्रपति	-	President
उपराष्ट्रपति	-	Vice Pqresident
प्रधान मंत्री	-	Prime Minister
मुख्य मंत्री	-	Chief Minister
राजयमंत्री	-	Ministry of State
सचिव	-	Secretary

www.tntextbooks.in

सलाहकार	-	Advisor
अपर सचिव	-	Additional Secretary
संयुक्त सचिव	-	Joint Secretary
उपसचिव	-	Deputy Secretary
अवर सचिव	-	Under Secretary
अधीक्षक	-	Superintendent
लिपिक	-	Clerk
सहायक	-	Assistant
प्रबंधक	-	Manager
मैं सहमत हूँ	-	I agree
आज जारी करें	-	Issue today
उत्तर की प्रतीक्षा करें	-	A wait reply
यथा प्रस्तावित	-	As proposed
तदनुसार सूचित करें	-	Inform accordingly
अनुपोदित	-	approved
आवश्यक कार्रवाई करें	-	do the needful
सूचनार्थ	-	for information
विचारार्थ	-	for consideration
आदेश जारी कर दिया जाए	-	Orders may be issued
विचार किया जाए	-	May be confident
अनुमति दी जाए	-	May be permitted
प्रस्तुत करें	-	put up
मिसिल में रखें	-	Keep with file

www.tntextbooks.in

समास

समास किसे कहते हैं?

समास का अर्थ है - 'संक्षिप्तीकरण'। दो या दो से अधिक पदों या शब्दों के योग को समास कहते हैं। जिन पदों या शब्दों के योग से समास बना है, उनमें से पहले पद को पूर्व पद और दूसरे पद को उत्तर पद कहते हैं।

अतः दो या अधिक पदों का अपने विभक्ति चिन्हों या अन्य प्रत्ययों को विलुप्तकर आपस में मिल जाना ही, समास है।

समास होने के पहले पदों के रूप को 'समास विग्रह' कहा जाता है। समास होने के बाद बने संक्षिप्त रूप को 'समस्त पद' कहते हैं।

उदाहरणः- 1. मोहन पथ से भ्रष्ट हो चुका है। 2. मोहन पथभ्रष्ट हो चुका है।

उपर्युक्त पहले उदाहरण में पथ से भ्रष्ट समास विग्रह है (पदों का विखरा हुआ रूप) और दूसरे उदाहरण में पथभ्रष्ट सामासिक पद (समस्तपद) है, जो विभक्तियों के लोप होने के बाद दोनों पदों के आपस में मिल जाने के बाद बना है।

नीचे कुछ समास विग्रह और समस्त पदों के उदाहरण दिए गए हैं - जैसे -

शक्ति के अनुसार यथा शक्ति (यहाँ पर विभक्ति चिन्ह 'के' का लोप होकर यथाशक्ति बना)

नीला कमल - नीलकमल (यहाँ 'आ' प्रत्यय का लोप होकर नीलकमल बना)

चार राहों का समूह - चौराहा (यहाँ पर संक्षेप होकर चौराहा बना)

पीला अम्बर - पीताम्बर (यहाँ दो पद पीला और अम्बर मिलकर पीताम्बर बना)

नाक और कान -नाक-कान (यहाँ दो पद के मध्य 'और' को हटाकर नाक-कान बना)

द्वन्द्व समास किसे कहते हैं? उदाहरण सहित समझइए।

जिस समास में दोनों पद प्रधान होता है। वहाँ द्वन्द्व समास होता है। समास विग्रह करते समय और, या, एवं आदि का प्रयोग किया जाता है।

जैसे - सामासिक शब्द

माता-पिता —माता और पिता

देश-विदेश–देश और विदेश

लंबा-चौड़ा–लंबा और चौड़ा

लाभ-हानि–लाभ और हानि

नर-नारी–नर और नारी

अमीर-गरीब–अमीर और गरीब

www.tntextbooks.in

नर-नारी	नर और नार
भरा पूरा	भरा और पूरा
भला-बुरा	भला और बुरा
पाप-पुण्य	पाप और पुण्य
देवासुर	देव और असुर
राधाकृष्ण	राधा और कृष्ण
धनुर्वाण	धनुष और वाण
हरिशंकर	हरि और शंकर

जिस समास का पूर्व पद संख्यावाची विशेषण हो, उसे द्विगु समास कहते हैं। इसमें समूह या समाहार का बोध होता है। जैसे

सामासिक शब्द	**विग्रह**
पंचवटी	पाँच वटों का समूह
नवग्रह	नवग्रहों का समूह
दोपहर	दोपहरों का समाहार
चौराहा	चार राहों का समाहार
सप्तर्षि	सात ऋषियों का समाहार
सप्	सात दिनों का समाहार
षट्कोण	छह कोणों का समाहार
अठन्नी	आठ आनों का समाहार
त्रियुगी	तीन युगों का समाहार
त्रिभुज	तीन भुजाओं का समाहार
त्रिलोक	तीन लोकों का समाहार
नवरात्र	नौ रात्रि का समूह

www.tntextbooks.in

तिरंगा	तीन रंगों का समाहार
त्रिदेव	तीन देवताओं का समाहार

कर्मधारय समास किसे कहते हैं?

जिस समास में पूर्व पद विशेषण (उपमान) और दूसरा पद (उत्तर पद) विशेष्य (उपमेय) हो, उसे कर्मधारय समास कहते हैं। इस समास में उत्तरपद प्रधान होता है। जैसेः-

सामासिक पद	विग्रह
प्रधानाध्यापक	प्रधान + अध्यापक
नीलकमल	नीला + कमल
पीताम्बर	पीला + अम्बर
महापुरुष	महान + पुरुष
बैलगाड़ी	बैलों से खींची जानेवाली गाड़ी
सत्याग्रह	सत्य के लिए अग्रह
कमलनयन	कमल के समान नयन
महाकवि	महान है जो कवि
नराधम	अधम है नर जो
सदधर्म	सत है धर्म जो
क्रोधग्नि	क्रोध रूपी अग्नि
वचनामृत	वचन रूपी अमृत
मृगनयन	मृग के समान नयन
महारानी	महती रानी
परमेश्वर	परम् ईश्वर
नीलोत्पल	नीला उत्पल
कापुरुष	कायर पुरुष

www.tntextbooks.in

चंद्रमुख	चंद्र के समान मुख
चरण कमल	चरण रूपी कमल
परमानंद	परम है जो आनंद

कारक के आधार पर तत्पुरुष समास के कितने भेद हैं? उदाहरण सहित समझाइए।

कारक के आधार पर तत्पुरुष समस के छः भेद हैं।

कर्म तत्पुरुष -जिस समास के पूर्व पद में कर्म कारक(को) का लोप होता है, उसे कर्म तत्पुरुष कहते हैं। जैसे - शरणागत - शरण को आया हुआ। स्वर्ग-प्राप्त-स्वर्ग को प्राप्त आदि।

2. **करण तत्पुरुष** - जिस समास के पूर्व पद में करण कारक (से, द्वारा) का लोप होता है, उसे करण तत्पुरुष कहते हैं। जैसे -

तुलसीकृत	-	तुलसी द्वारा कृत।
हस्तलिखित	-	हाथ से लिखा हुआ।
इतिहास सम्मत	-	इतिहास से सम्मत।
काल प्रवाह	-	काल का प्रवाह
परमपरा प्राप्त	-	परम्परा से प्राप्त।
राज्यच्युत	-	राज्य से च्युत।

3. **सम्प्रदान तत्पुरुष** - जिस समास के पूर्व पद में संप्रदान कारक (के लिए) का लोप होता है, उसे संप्रदान तत्पुरुष कहते हैं। जैसे -

देश -भक्ति	-	देश के लिए भक्ति।
रसोई घर	-	रसोई के लिए घर।

4. **अपादान तत्पुरुष** - जिस समास के पूर्व पद में अपादान कारक (से) का लोप होता है, उसे अपादान तत्पुरुष कहते हैं। जैसे -

पथभ्रष्ट	-	पथ से भ्रष्ट
जन्मांध	-	जन्म से अंधा।

5. **अधिकरण तत्पुरुष** - जिस समास के पूर्व पद में अधिकरण कारक (में, पर) का लोप होता है, उसे अधिकरण तत्पुरुष कहते हैं। जैसे -

www.tntextbooks.in

आपबीती - अपने पर बीती।

पुरुषोत्तम- पुरुषों में उत्तम।

6. **संबंध तत्पुरुष** - जिस समास के पूर्व पद में संबंध कारक (का,के,की) का लोप होता है, उसे संबंध तत्पुरुष कहते हैं। जैसे -

राजपुरुष - राजा का पुरुष

घुड़दौड़ - घोड़ों की दौड़।

अव्ययीभाव समास को उदाहरण सहित समझाइए?

जिस समास में पहला पद अव्यय और दूसरा पद संज्ञा, विशेषण या क्रिया विशेषण होता है, उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं।

समास में पहला पद प्रधान होता है। जैसे :-

सामासिक शब्द	विग्रह
प्रतिदिन	प्रत्येक दिन या दिन-दिन
यथाशक्ति	शक्ति के अनुसार
भरपेट	पेट भर
प्रत्येक	एक-एक के प्रति
आजन्म	जन्म पर्यन्त
आजीवन	जीवनभर
यथासमय	समय के अनुसार
निर्भय	बिना भय का
मनमाना	मन के अनुसार
घड़ी-घड़ी	घड़ी के बाद घड़ी
प्रत्युपकार	उपकार के प्रति
प्रतिमास	प्रत्येक मास
अनुगुण	गुण के योग्य

www.tntextbooks.in

आद्योपांत	आदि से अंत तक
अध्यात्म	आत्मा से संबंधित
प्रत्यंग	अंग-अंग
ारोक्ष	अक्षि के परे
प्रत्यक्ष	अक्षि के प्रति

वाक्य शुद्धि

निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध कीजिए:-

1. गोविंद के बहिन का नाम सुशीला है।
2. आप उसके घर को गए।
3. मेज में पुस्तक पड़ी है।
4. वह आपका घर कल आ सकेगा।
5. मैं स्कूल जाना चाहिए।
6. हम हमारे देश को प्यार करते हैं।
7. मंदिर की चारों ओर दुकाने हैं।
8. तालाब के अंदर छोटी-सी मंदिर है।
9. उसने अपने मित्र को एक-सो रुपया पूछा।
10. सभी उसको तारीफ करते हैं।
11. वह घर को जा रहा है।
12. वह प्रातःकाल के समय आया।
13. रोहन ने रोटी खाया।
14. श्रीकृष्ण के अनेकों नाम है।
15. मुझे मैसूर जानी पड़ेगी।
16. गुणशील चलती-चलती थक गए।

www.tntextbooks.in

17. गोपाल गाना गाया।

18. श्याम काम किया।

19. मेरे को उसने बुलाया है।

20. सरला ने कहानी पढ़ा।

21. मोहन की पिताजी अस्वस्थ हैं।

22. हवा तेज बहने लगा।

23. उसका हाथ में मामूली चाकू था।

24. ग्यारहवीं शताब्दी का बात है।

25. वह दरवाजा खोला।

26. आप आपके घर जाइए।

27. तेरे को क्या हो गया है?

28. उसने बस वाले को पूछा।

29. तारकोल का सड़क चमक रही थी।

30. आप कल जरूर आओ।

31. आप कहे थे।

32. यह पाठ का नाम क्या है?

33. कई विद्यालय खुला।

34. साहित्य और जीवन का घोर संबंध है।

35. हिंदी शिक्षा का माध्यम बन चुका है।

36. सूर्य की किरणें चमक रहे हैं।

37. सुभाष चंद्र बोस महान नेता था।

38. वह पुस्तक लेकर भागता हुआ घर आया।

39. लड़के पढ़े करते हैं।

www.tntextbooks.in

40. बैल और बकरे चर रही हैं।

41. बकरी ने बाधिन को देखी।

42. लता को गीत गानी है।

43. उसने परीक्षा दिया।

44. जो जन्म लेती है वह अवश्य ही मरती है।

45. मैंने को जाना है।

46. उस लड़का का क्या नाम है?

47. मज़दूरों की सभा हो रहा है?

48. यह दस रुपया का नोट है।

49. उनने आपसे क्या कहा?

50. आप अभी कहाँ जा रहे हो?

अलंकार

अलंकार जो साहित्य को अलंकृत करते हैं। संस्कृत के अलंकार संप्रदाय के प्रतिष्ठापक आचार्य दण्डी के शब्दों में 'काव्य' शोभाकरान धर्मान अलंकारान प्रचक्षते काव्य के शोभाकारक धर्म (गुण) अलंकार कहलाते हैं।

अलंकार को दो भागों में विभाजित किया गया है:-

शब्दालंकार - शब्द पर आश्रित अलंकार

अर्थालंकार - अर्थ पर आश्रित अलंकार

शब्दालंकार- ये शब्द पर आधारित होते हैं।

प्रमुख शब्दालंकार हैं - अनुप्रास, यमक, श्लेष, पुनरुक्ति, वक्रोक्ति आदि।

अर्थालंकार - ये अर्थ पर आधारित होते हैं। प्रमुख अर्थालंकार है - उपमा, रूपक, उत्पेक्षा, प्रतीप, व्यक्तिरेक, विभावना, विशेषेक्ति, अर्थान्तरन्यास, उल्लेख, दृष्टान्त, विरोधाभास, भ्रांतिमान आदि।

उभयालंकार - उभयालंकार शब्द और अर्थ दोनों पर आश्रित रहकर दोनोंको चमत्कृत करते हैं।

1. अनुप्रास - जहाँ किसी वर्ण की अनेक बार क्रम से आवृत्ति हो वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है।

जैसे भूरी-भूरी भेदभाव भूमि से भगा दिया। 'भ' की आवृत्ति अनेक बार होने से यहाँ अनुप्रास अलंकार है।

2. यमक - जहाँ कोई शब्द एक से अधिक बार प्रयुक्त हो और उसके अर्थ अलग-अलग हों वहाँ यमक अलंकार होता है। जैसे - सजना है मुझे सजना के लिए। यहाँ पहले सजना का अर्थ है - श्रृंगार करना और दूसरे सजना का अर्थ - नायक शब्द दो बार प्रयुक्त है, अर्थ अलग-अलग हैं। अतः यमक अलंकार है।

3. श्लेष - जहाँ कोई शब्द एक ही बार प्रयुक्त हो, किंतु प्रसंग भेद में उसके अर्थ एक से अधिक हों, वहाँ शलेष अलंकार है। जैसे -

रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून।

पानी गए न ऊबरै मोती मानस चून।।

यहाँ पानी के तीन अर्थ हैं - कान्ति, आत्म - सम्मान और जल। अतः शलेष अलंकार है, क्योंकि पानी शब्द एक ही बार प्रयुक्त है तथा उसके अर्थ तीन हैं।

अर्थालंकारः-

1. उपमा - जहाँ गुण, धर्म या क्रिया के आधार पर उपमेय की तुलना उपमान से की जाती है। जैसे : हरिपद कोमल कमल से। हरिपद (उपमेय) की तुलना कमल (उपमान) से कोमलता के कारण की गई। अतः उपमा अलंकार है।

2. रूपक - जहाँ उपमेय पर उपमान का अभेद आरोप किया जाता है। जैसे - अम्बर पनघट में डुबो रही ताराघट उषा नागरी।

आकाश रूपी में उषा रूपी स्त्री तारा रूपी घड़े डुबो रही है। यहाँ आकाश पर पनघट का, उषा पर स्त्री का और तारा पर घड़े का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

3. उत्प्रेक्षा - उपमेय में उपमान की कल्पना या सम्भावना होने पर उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। जैसे - मुख मानो चंद्रमा है। यहाँ मुख (उपमेय) को चंद्रमा (उपमान) मान लिया गया है। यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है। इस अलंकार की पहचान मनु, मानो, जनु, जानो शब्दों से होती है।

4. विभावना - जहाँ कारण के अभाव में भी कार्य हो रहा हो, वहाँ विभावना अलंकार है। जैसे-

बिनु पग चलै सुनै बिनु काना।

वह (भगवान) बिना पैरों के चलता है और बिना कानों के सुनता है। कारण के अभाव में कार्य

होने से यहाँ विभावना अलंकार है।

5. भ्रान्तिमान - उपमेय में उपमान की भ्रान्ति होने से और तदनुरूप क्रिया होने से भ्रान्तिमान अलंकार होता है। जैसे

नाक का मोती अधर की कान्ति से, बीज दाडिम का समझकर भान्ति से,

देखकर सहसा हुआ शुक मौन है, सोचता है अन्य शुक यह कौन है?

यहाँ नाक में तोते का और दन्त पक्ति में अनार के दाने का भ्रम हुआ है, यहाँ भ्रान्तिमान अलंकार है।

6. संदेह - जहाँ उपमेय के लिए दिए गए उपमानों में संदेह बना रहे तथा निश्चय न हो सके, वहाँ संदेह अलंकार होता है। जैसे -

सारी बीच नारी है नारी बीच सारी है।

सारी ही की नारी है कि नारी की ही सारी है।

7. व्यतिरेक :- जहाँ कारण बताते हुए उपमेय की श्रेष्ठता उपमान से बताई गई तो, वहाँ व्यतिरेक अलंकार होता है। जैसे -

का सरवरि तेहिं देउं मयंकू। चांद कलंकी वह निकलंक।।

मुख की समानता चंद्रमा से कैसे दूँ? चंद्रमा में तो कलंक है, जब कि मुख निष्कलंक है।

8. असंगतिः कारण और कार्य में संगति न होने पर असंगति अलंकार होता है। जैसे-

हृदय घाव मेरे पीर रघुवीरै।

घाव तो लक्ष्मण के हृदय में हैं, पर पीड़ा राम को है, अतः असंगति अलंकार है।

9. प्रतीप - प्रतीप का अर्थ है उल्टा या विपरीत। यह उपमा अलंकार के विपरीत होता है। क्योंकि इस अलंकार में उपमान को लज्जित, पराजित या हीन दिखाकर उपमेय की श्रेष्टता बताई जाती है। जैसे

सिय मुख समता किमि करै चन्द वापुरों रंक।

सीताजी के मुख (उपमेय) की तुलना बेचारा चंद्रमा (उपमान) नहीं कर सकता। उपमेय की श्रेष्ट ता प्रतिपादित होने से यहाँ प्रतीप अलंकार है।

10. दृष्टांत - जहाँ उपमेय, उपमान और साधारण धर्म का बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव होता है, जैसे-

बसै बुराई जासु तन, ताही को सन्मान।

भलो भलो कही छोड़िए, खोटे ग्रह जप दान।।

यहाँ पूर्वार्द्ध उपमेय वाक्य और उत्तरार्द्ध में उपमान वाक्य है। इनमें 'सन्मान होना' और 'जपदान करना' ये दो भिन्न-भिन्न धर्म कहे गए हैं। इन दोनों में बिम्ब - प्रतिबिम्ब भाव है। अतः दृष्टांत अलंकार है।

छंद

अक्षरों की संख्या एवं क्रम, मात्रा गणना तथा यति-गति के संबद्ध विशिष्ट नियमों से नियोजित पद्यरचना 'छंद' कहलाती है जैसे चौपाई, दोहा, गायत्री, छंद इत्यादि। छंद के अंग इस प्रकार है

छंद में प्राय :चार चरण होते हैं। पहले और तीसरे चरण को विषम चरण तथा दूसरे और चौथे चरण को समचरण कहा जाता है।

छंद के निम्नलिखित अंग है।

1. चरण/पद/पाद 2. वर्ण और मात्रा 3. संख्या क्रम और गण 4. लघु और गुरु

5. गति 6. यति / विराम 7. तुक

गण का नाम

	गण		चिन्ह	उदाहरण
1.	यगण	यमाता	ISS	नहाना
2.	मगण	मातारा	SSS	आजादी
3.	तगण	ताराज	SSI	चालक
4.	रगण	राजभा	SIS	पालना
5.	जगण	जभान	ISI	करील
6.	भगण	भानस	SII	बादल
7.	नगण	नसल	III	कमल
8.	सगण	सलगा	II S	गमला

1.वार्णिक छंद - वर्णगणना के आधार पर रचा गया छंद कहलाता है। जैसे घनाक्षरी, दण्डक आदि।

2. मात्रिक छंद - मात्राओं की गणना पर आधारित छंद मात्रिक छंद कहलाते हैं। यह गणबद्ध नहीं होता। दोहा और चौपाई मात्रिक छंद है।

1. चौपाई - यह मात्रिक सम छंद है। इसके प्रत्येक चरण में 16-16 मात्राएँ होती हैं। इसमें चार चरण होते है। प्रत्येक चरण में सोलह मात्राएँ होती हैं। जैसे :

।। ।। ऽ। ऽ।।। ऽ।।।। ।ऽ।।।ऽ। ।ऽ।।

जय हनुमान ग्यान गुन सागर। जय कपीस जिहुलोक उजागर।।

राम दूत अतुलित बलधामा। अंजनि पुत्र पवन सुत नामा।।

।।ऽ। ऽ।।।।।।ऽऽ ऽ।।ऽ।।।।।ऽऽ

2. दोहा - यह मात्रिक अर्द्ध सम छंद है। इसके प्रथम एवं तृतीय चरण में 13 मात्राएं और द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में 11 मात्राएँ होती हैं। जैसे -

ऽ।। ।।। । ऽ।।।।। ।।।।। । ऽ।

श्री गुरु चरन सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि।

बरनउं रघुवर विमल जस, जो दायक फल चारी।।

।।।। ।।।।।।। ।।ऽऽ ।। ।।ऽ।

3. सोरठा - यह मात्रिक अर्द्धसम छंद है। इसके विषम चरणों में 11 मात्राएँ एवं सम चरणों में 13 मात्राएँ होती है। तुक प्रथम एवं तृतीय चरण में होती है। इस प्रकार यह दोहे का उल्टा छंद है। जैसे -

ऽ। ऽ।।। ऽ।।ऽ ।।।।।ऽ।।।

कुंद इंदु सम देह, उमा रमन करुनायतन।

जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन।।

ऽ। ऽ।।।ऽ।।।। । ऽऽ।। ।।।

4. कवित्त - वार्णिक समवृत्त छंद जिसमें 31 वर्ण होते हैं। 15-16 पर यति तथा अंतिम वर्ण गुरु होता है। जैसे सहज विलास हास पिकी हुलास तजि। - 16 मात्राएँ ।

दुख के निवास प्रेम पास पारियत है। – 15

5. गीतिका - मात्रिक सम छंद है जिसमें 26 मात्राएँ होती हैं। 14 और 12 पर यति होती है तथा अंत में लघु गुरु का प्रयोग है। जैसे - मातृ भूसी मातृ भू है, अन्य से तुलना नहीं।

6. रोला - मात्रिक सम छंद है, जिसके प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं तथा 11 और 13 पर यति होती है। प्रत्येक चरण के अंत में दो गुरु या दो लघु वर्ण होते हैं। दो-दो चरणों में तुक आवश्यक है। जैसे

।।।ऽऽ।।।ऽ ।ऽऽ। ।।।ऽ

नित नव लीला ललित ठानि गोलोक अजिर में।

रमत राधिका संग रास रस रंग रुचिर में।

।।।ऽ ।ऽऽ। ऽ।।।ऽ।।।।ऽ

7. बरवै - यह मात्रिक अर्द्धसम छंद है जिसके विषम चरणों में 12 और सम चरणों में 7 मात्राएँ होती हैं। यति प्रत्येक चरण के अंतमें होती है। सम चरणों के अंत में जगण या तगण होने से बरवै की मिठास बढ़ जाती है। जैसे -

ऽ। ऽ।।। ऽ।।।ऽ।ऽ।

वाम अंग शिव शोभित, शिवा उदार।

सरद सुवारिद में जनु, तडित बिहार।।

।।। ।ऽ।। ऽ।।।।। ।ऽ।

8. हरिगीतिका - यह मात्रिक सम छंद हैं। प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ होती हैं। यति 16 और 12 पर होती है तथा अंत में लघु और गुरु का प्रयोग होता है। जैसे -

कहते हुए यो उत्तरा के नेत्र जल से भर गए।

हिम के कणों से पूर्ण मानो हो गए पंकज नए।।

।। ऽ।ऽ ऽऽ।ऽऽ ऽ।ऽ ऽ।। ।ऽ

9. कुण्डलिया - मात्रिक विषम संयुक्त छंद है जिसमें छः चरण होते हैं। इसमें एक दोहा और एक रोला होता है। दाहे का चौथा चरण रोला के प्रथम चरण में दुहराया जाता है तथा दोहे का प्रथम शब्द ही रोला के अंत में आता है। इस प्रकार कुण्डलिया का प्रारंभ जिस शब्द से होता है उसी से इसका अंत भी होता है। जैसे

ऽऽ ।।ऽ ऽ।ऽ ।।ऽ।।ऽ ऽ।

सांई अपने भात को, कबहुं न दीजै त्रास।

पलक दूरि नहिं कीजिए, सदा राखिए पास।।

सदा राखिए पास, त्रास कबहुं नहिं दीजै।

त्रास दियौ लंकेश ताहि की गति सुनि लीजै।।

कह गिरिधर कविराय राम सौ मिलिगौ जाई।

पाय विभीषण राज लंकपति बाज्यौ सांई।।

ऽ । ।ऽ।। ऽ।ऽ।।। ऽऽऽऽ

www.tntextbooks.in

Hindi – Std XI

List of Authors and Reviewers

Chairperson

Dr. M. Seshan,
Professor (Retd.,)
Head of the Department. (Hindi)
D.G. Vaishnav College, Arumbakkam, Chennai.

Reviewer

Dr. Kokila P.C.,
Associate Professor (Retd.),
Head of the Department. (Hindi)
Presidency College, Chennai.

Authors

S. Anandakrishnan, M.A., M.Ed.,
Headmaster (Retd.)
The Hindu Hr. Sec. School, Triplicane, Chennai.

S. Satyanarayanan, M.A., M.Ed.,
PG Asst. in Hindi (Retd.)
Kesari Hr. Sec. School, Mylapore, Chennai.

M. Gabriel Govindaraju, M.A., B.Sc., B.Ed.,
Lecturer in Hindi (Retd.)
Navalar Nedunchezhin GHSS, Lawspet, Puducherry.

S. Muralidharan, M.A., B.Ed.,
PG Asst.,
Jawahar Higher Secondary School, Ashok Nagar, Chennai.

O.V.S. Mallika, M.A., B.Ed., M.Phil.,
B.T. Asst.,
Kesari Hr. Sec. School, Mylapore, Chennai.

Coordinators

K. Chandrasekar,
Lecturer, DIET, Chennai.

R. Radjamohane, M.A., B.Ed.,
Lecturer in Hindi
Jeevanandam GHSS, Karamanikuppam,
Directorate of School Education, Puducherry.

Art and Design Team

Chief Co-ordinator and Creative Head
Thiru Srinivasan Natrajan

Layout
Thy Designers

QC
Gopu Rasuvel
Rajesh Thangappan
Balaji
Jerald Wilson

Co-ordination
Ramesh Munisamy

Typist
S. Jayashree

This book has been printed on 80 GSM Elegant Maplitho paper.

Printed by offset at:

www.tntextbooks.in

NOTE

www.tntextbooks.in

NOTE

www.tntextbooks.in

NOTE